स्व० महादेव भाई को

जो ऐसी पुस्तक लिखने के सब
तरह से अधिकारी थे

—'सुमन'—

भूमिका

गाधी जी के विचारों से कोई सहमत हो या असहमत, प्रत्येक क्षेत्र मे उनका व्यापक प्रभाव भारतीय विचार-धारा पर पडा है, इससे कोई इन्कार नहीं कर सकता। वह महापुरुष है, वह युग-पुरुष है। उनकी देन राजनीति में भी काफ़ी है पर उससे भी अधिक हमारी सस्कृति के प्रति है। इस युग में, युग के सर्वश्रेष्ट तत्वो को अपनाते हुए भी, वह भारतीय सभ्यता और सस्कृति के सब से शक्तिशाली प्रवक्ता है—ऐसा प्रवक्ता जो न केवल बोलता है बल्कि अपने जीवन और आचरण में अपने विचारों को अभिव्यक्त करता है।

हम गाधी-युग में ही जी रहे हैं, इसलिए उनकी शक्ति और उनकी विचार-श्रृखला का ठीक-ठीक अन्दाज आज कर लेना बहुत कठिन है। फिर गाधी जी ने इतना लिखा और इतना कहा है और इतनी प्रकार मे कहा है कि जहा वह लोक प्रिय हुए है तहाँ उनके विचारो को समझने मे भ्रम भी खूब हुआ है। उनके अच्छे अच्छे अनुयायियो ने इस भ्रम का परिचय दिया है। उनकी स्पष्ट घोषणाओं के रहते हुए अहिसा ने हिसा का चोला धारण किया है, उनके बार-बार चेतावनी देने पर भी लोगों ने उनकी बातो का मनमाना अर्थ निकालने की कोशिश की है। किसी ने ठीक ही कहा है—'ससार अपने महापुरुषो के बारे मे कुछ नहीं जानता।' जो वह सोचता है, उसका अपना कल्पित होता है। इसलिए इस बात की बडी आवश्यकता है कि उनके विचार सिलसिलेवार एकत्र कर दिये जायँ।

× × ×

विषय-क्रम

१९२८ में पहली बार मैंने गांधीजी के विचारों का एक कोष तैयार करने की योजना बनाई थी। १९४० में मैंने जब उनके विविध विषय के विचारों का सङ्कलन शुरू किया तब मालूम पड़ा कि काम कितना कठिन है। गांधीजी ने पिछले ३५ वर्षों में इतना लिखा है कि मनोयोगपूर्वक उसे पढ़ना ही वर्षों का काम है। प्राय. दो वर्ष कठिन परिश्रम करके मैं यह पुस्तक पूर्ण कर पाया हूँ। इसमें उनके विचारों का विषयानुसार वर्गीकरण तो किया ही गया है; उनका क्रम भी ऐसा रखा गया है कि कालक्रमानुसार उनके विकास का ज्ञान भी पाठकों को होता चले। जो विचार जहाँ से लिये गये हैं उनका पूरा-पूरा हवाला दिया गया है। छपने की तिथि तो दी ही गई है; जहाँ पता चल सका, तहाँ लिखने की तिथि और स्थान भी देने की चेष्टा की गई है। मूल रूप में वह रचना जिस पत्र में छपी उसका नाम पहले, और अनुवाद रूप में जिस पत्र में आई उसका नाम बाद में दिया गया है। अनुवाद को मूल से मिलाकर अनेक स्थानों पर शुद्ध किया गया है। मैं कह सकता हूँ कि पुस्तक को जितना प्रामाणिक बनाया जा सकता था बनाने की चेष्टा की गई है। प्रत्येक विषय पर गांधीजी के विचार जानने के लिए यह एक 'रेडी रेफरेंस' का काम देगी।

भारतीय सांस्कृतिक विचार-धारा को नवीन प्रकाश में अध्ययन करने में पुस्तक हर तरह के विचारवालों के लिए सहायक होगी।

—श्री रामनाथ 'सुमन'

विषय-क्रम

गांधी-वाणी

: १ :

सत्य

सत्य क्या है ?

"... इस परिमित सत्य के अतिरिक्त एक शुद्ध सत्य है। वह अखण्ड है, सर्वव्यापक है। परन्तु वह अवर्णनीय है क्योकि सत्य ही ईश्वर है, अथवा परमेश्वर ही सत्य है। दूसरी सब चीजे मिथ्या है अर्थात् दूसरो मे इसी परिमाण मे जो कुछ सत्य हो वही ठीक है।"

× × ×

"जो सत्य जानता है, मन से, वचन से और काया से सत्य का आचरण करता है, वह परमेश्वर को पहचानता है। इससे वह त्रिकाल-दर्शी हो जाता है। उसे इसी देह मे मुक्ति प्राप्त हो जाती है।..."

× × ×

"... सत्य कहना और करना मेरा स्वभाव ही हो गया है। पर हाँ, जिस सत्य को मै परोक्ष रीति से जानता हूँ उसके पालन करने का दावा मैं नहीं कर सकता। मुझसे अनजान में भी अत्युक्ति हो सकती है। इस सब मे असत्य की छाया है और ये सत्य की कसौटी पर नहीं चढ सकते। जिसका जीवन सत्यमय है वह तो शुद्ध स्फटिक मणि की तरह हो जाता है। उसके पास असत्य जरा देर के लिए भी नहीं ठहर सकता। सत्याचरणी को कोई धोखा दे ही नहीं सकता, क्योकि उसके सामने झूठ बोलना अशक्य हो जाना चाहिए। ससार मे कठिन से कठिन व्रत सत्य का है।..."

× × ×

"मेरे सामने जब कोई असत्य बोलता है तब मुझे उसपर क्रोध होने के बजाय स्वय अपने ही ऊपर अधिक कोप होता है। क्योकि मैं जानता हूॅ कि अभी मेरे अन्दर—तह मे—असत्य का वास है।"

—नवजीवन . हिं० न० जी० २७।११।'२१]

सत्य में अहिसा का समावेश है

"सत्य मे ही सब बातो का समावेश हो जाता है। अहिंसा मे चाहे सत्य का समावेश न होता हो पर सत्य मे अहिंसा का समावेश हो जाता है।"

× × ×

"निर्मल अन्त.करण को जिस समय जो प्रतीत हो वही सत्य है। उसपर दृढ रहने से शुद्ध सत्य की प्राप्ति हो जाती है।"

× × ×

"सत्य मे प्रेम मिलता है, सत्य मे मृदुता मिलती है।"

× × ×

"शरीर की स्थिति अहङ्कार की ही बदौलत सम्भवनीय है। शरीर का आत्यन्तिक नाश ही मोक्ष है। जिसके अहङ्कार का आत्यन्तिक नाश हो चुका है वह तो प्रत्यक्ष सत्य की मूर्ति हो जाता है।"

—१७।३।'२३ श्री जमनालाल बजाज के नाम साबरमती जेल से लिखे एक पत्र से]

सत्य

"· सत्य सर्वदा स्वावलम्बी होता है और बल तो उसके स्वभाव मे ही होता है।"

—हि० न० । हिं० न० जी० १४।१२।'२४, पृष्ठ १२०]

सत्य का बल

"पृथ्वी सत्य के बल पर टिकी हुई है। 'असत्'—असत्य—के मानी है 'नहीं' 'सत्'—सत्य—अर्थात् 'है'। जहाँ असत् अर्थात् अस्तित्व ही नहीं है, उसकी सफलता कैसे हो सकती है? और जो सत् अर्थात् 'है' उसका नाश कौन कर सकता है? बस, इसी में सत्याग्रह का समस्त शास्त्र समाविष्ट है।"

—द० अ० का सत्याग्रह . उत्तरार्द्ध, हिन्दी, पृष्ठ १२७, १९२४]

कटु भाषा बनाम सत्य

"...तीखी-चटपटी भाषा सत्य के नजदीक उतनी ही विजातीय है जितनी कि नीरोग जठर के लिए तेज मिर्चियाँ।"

× × ×

"...सत्य स्वयं ही पूर्ण शक्तिमान है और जब कडे शब्दों के द्वारा उसकी पुष्टि का प्रयत्न किया जाता है तब वह अपमानित होता है।"

× × ×

"... जो मनुष्य अपनी जिह्वा को कब्जे मे नहीं रख सकता उसमे सत्य का अधिष्ठान नहीं है।"

× × ×

"... कटुता से कल्पना-पथ मलिन हो जाता है।"

—य० इ० । हिं० न० जी० १७।९।'२५; पृष्ठ ३४-३५]

सत्य की सत्ता

"...मेरा यह विश्वास दिन-दिन बढता जाता है कि सृष्टि मे एक मात्र सत्य की ही सत्ता है और उसके सिवा दूसरा कोई नहीं है।"

—सत्याग्रहाश्रम, साबरमती। मार्गशीर्ष शुक्ल ११ स० १९८२ . 'आत्म-कथा' की भूमिका से · हिन्दी सस्करण · सस्ता सा० मण्डल]

सत्यरूपी परमेश्वर का शोधक हूँ !

"... परमेश्वर की व्याख्याएँ अगणित है, क्योकि उसकी विभूतियाँ भी अगणित है । विभूतियाँ मुझे आश्चर्य-चकित तो करती है, मुझे क्षणभर के लिए मुग्ध भी करती है, पर मै तो पुजारी हूँ सत्य-रूपी परमेश्वर का । मेरी दृष्टि मे वही एक मात्र सत्य है, दूसरा सब कुछ मिथ्या है । पर यह सत्य अभी तक मेरे हाथ नहीं लगा है अभी तक तो मै उसका शोधक-मात्र हूँ । हाँ, उसकी शोध के लिए मै अपनी प्रिय से प्रिय वस्तु को भी छोड देने के लिए तैयार हूँ, और इस शोधरूपी यज्ञ मे अपने शरीर को भी होम देने की तैयारी कर ली है ... ।"

—सत्याग्रहाश्रम, साबरमती । मार्गशीर्ष शुद्ध ११ सं० १९८२, 'आत्मकथा की भूमिका से, हिन्दी संस्करण । स० सा० मण्डल]

सत्य

"... सत्य एक विशाल वृक्ष है । उसकी ज्यो-ज्यो सेवा की जाती है त्यो त्यो उसमे अनेक फल आते हुए दिखाई देते है । उनका अन्त ही नहीं होता । ज्यो-ज्यो हम गहरे पैठते है, त्यो-त्यो उनमे से रत्न निकलते है सेवा के अवसर हाथ आते रहते है ।"

—दि० आ० क० । भाग ३, अध्याय ११, पृष्ठ २४० । स० संस्करण, १९३०]

शुद्ध सत्य की शोध

"... रागद्वेषादि से भरा मनुष्य सरल हो सकता है वह वाचिक सत्य भले ही पाल ले, पर उसे शुद्ध सत्य की प्राप्ति नहीं हो सकती । शुद्ध सत्य की शोध करने के मानी है रागद्वेषादि द्वन्द्व से सर्वथा मुक्ति प्राप्त कर लेना ।'

—दि० आ० क० । भाग ४, अध्याय ३७, पृष्ठ ३८८ । स० संस्करण १९३०]

सत्य और अहिंसा

"...अहिंसा को जितना मै पहचान सका हूँ उसकी बनिस्बत मैं सत्य को अधिक पहचानता हूँ, ऐसा मेरा ख्याल है। और यदि मै सत्य को छोड दूँ तो अहिंसा की बडी उलझनें मैं कभी न सुलझा सकूँगा, ऐसा मेरा अनुभव है।"

—हिं० आ० क०। भाग ५, अध्याय २९, पृष्ठ ५०६-७। स० सस्करण, १९३९]

× × ×

"· मैंने सत्य को जिस रूप मे देखा है और जिस राह से देखा है, उसे उसी रूप से, उसी राह से बताने की हमेशा कोशिश की है। मैं सत्य को ही परमेश्वर मानता हूँ।..... सत्यमय बनने के लिए अहिंसा ही एक राजमार्ग है।..... मेरी अहिंसा सच्ची होते हुए भी कच्ची है, अपूर्ण है। इसलिए मेरी सत्य की झॉकी उस सत्य-रूपी सूर्य के तेज की एक किरण-मात्र के दर्शन के समान है, जिसके तेज का माप हजारो साधारण सूर्यों को इकट्ठा करने पर भी नहीं मिल सकता। अतः अब तक के अपने प्रयोगों के आधार पर इतना तो मै अवश्य कह सकता हूँ कि इस सत्य का सम्पूर्ण दर्शन सम्पूर्ण अहिंसा के अभाव मे अशक्य है।

"ऐसे व्यापक सत्यनारायण के प्रत्यक्ष दर्शन के लिए प्राणि-मात्र के प्रति आत्मवत् प्रेम की बडी भारी जरूरत है। इस सत्य को पाने की इच्छा करनेवाला मनुष्य जीवन के एक भी क्षेत्र से बाहर नहीं रह सकता। यही कारण है कि मेरी सत्य-पूजा मुझे राजनीतिक क्षेत्र मे घसीट ले गई। जो यह कहते हैं कि राजनीति से धर्म का कोई सम्बन्ध नहीं है, मै निस्संकोच होकर कहता हूँ कि वे धर्म को नहीं जानते।...

"· बिना आत्म-शुद्धि के प्राणि-मात्र के साथ एकता का अनुभव

नहीं किया जा सकता । और आत्म-शुद्धि के अभाव मे अहिंसाधर्म का पालन करना भी हर तरह ना-मुमकिन है । चूँकि अशुद्धात्मा परमात्मा के दर्शन करने मे असमर्थ रहता है, इसलिए जीवन-पथ के सारे क्षेत्रो मे शुद्धि की जरूरत रहती है । इस तरह की शुद्धि साध्य है क्योकि व्यक्ति और समष्टि के बीच इतना निकट का सम्बन्ध है कि एक की शुद्धि अनेक की शुद्धि का कारण बन जाती है और व्यक्तिगत कोशिश करने की ताकत तो सत्यनारायण ने सब किसी को जन्म से ही दी है ।

"लेकिन मै तो पल-पल इस बात का अनुभव करता हूँ कि शुद्धि का यह मार्ग विकट है । शुद्ध होने का मतलब तो मन से, वचन से और काया से निर्विकार होना, राग-द्वेष आदि से रहित होना है । इस निर्विकार स्थिति तक पहुँचने के लिए प्रति पल प्रयत्न करने पर भी मै उस तक पहुँच नहीं सका हूँ । इस कारण लोगो की प्रशसा मुझे भुला नहीं सकती, उलटे बहुधा वह मेरे दु ख का कारण बन जाती है । मै तो मन के विकारो को जीतना, सारे ससार को शस्त्र-युद्ध मे जीतने से भी कठिन समझता हूँ । ` मै जानता हूँ कि अभी मुझे बीहड रास्ता तय करना है । इसके लिए मुझे शून्यवत् बनना पडेगा । जबतक मनुष्य खुद अपने आप को सबसे छोटा नहीं मानता है तबतक मुक्ति उससे दूर रहती है । अहिंसा नम्रता की पराकाष्ठा है । ` और यह अनुभवसिद्ध बात है कि इस तरह की नम्रता के बिना मुक्ति कभी नहीं मिल सकती ।

—हि० आ० क० । भाग ५, अध्याय ४४, पृष्ठ ५५३-५४ सस्ता सस्करण, १९२९]

सत्य का और क्या पुरस्कार होगा ?

"... सत्य के पालन मे ही शान्ति है । सत्य ही सत्य का पुरस्कार है । कीमती से कीमती वस्तु बेचनेवाले को जैसे उससे अधिक कीमती

वस्तु नहीं मिल सकती, वैसे ही सत्यवादी भी सत्य से बढ़कर और क्या चीज चाहेगा ? · ··सत्य जहाँ सूर्य के समान ताप पहुँचाता है तहाँ प्राण का सिञ्चन भी करता है ।·· ”

—नवजीवन । हिं० न० जी०, १९।१२।'२९, पृष्ठ १३८]

सत्य में गोपनीयता नहीं !

“ ··सत्य गोपनीयता से घृणा करता है ।”

—य० इ०, २१।१२।'३१]

सत्य ही परमेश्वर है !

“ · परमेश्वर 'सत्य' है, यह कहने के बजाय 'सत्य' ही परमेश्वर है यह कहना अधिक उपयुक्त है ।”

सत्य बिना शुद्ध ज्ञान नहीं

“जहाँ सत्य नहीं है वहाँ शुद्ध ज्ञान सम्भव नहीं हो सकता । जहाँ सत्य ज्ञान है वहाँ आनन्द ही होगा, शोक होगा ही नहीं । और, सत्य शाश्वत है इसलिए आनन्द भी शाश्वत होता है ।”

सत्य की आराधना ही भक्ति है

“सत्य की आराधना भक्ति है ।···वह 'मरकर जीने का मन्त्र' है ।”

—यरवदा जेल; २२।७।'३०]

सत्यनारायण

“विचार में देह का ससर्ग छोड दे तो अन्त मे देह हमे छोड देगी । यह मोह-रहित स्वरूप सत्यनारायण है ।”

—यरवदा जेल; २९।७।'३०]

सत्य स्वतन्त्र है

"परम सत्य अकेला खडा होता है । सत्य साध्य है, अहिंसा साधन है ।"

—यरवदा जेल, १०।८।'३०]

सत्य की शक्ति

"सत्य के पास अपनी रक्षा के लिए अमोघ शक्ति है । सत्य ही जीवन है और ज्योंही यह किसी मानव-व्यक्ति में अपना घर कर लेता है त्योंही यह अपने को फैला लेता है ।"

—ह० से०, १७।३।'३३]

सत्य ही धर्म की प्रतिष्ठा है

"सत्य ही एक धर्म की सच्ची प्रतिष्ठा है । जब सत्य ही परमेश्वर है, तो धर्म में असत्य को स्थान कभी नहीं हो सकता है ।'

—ह० से०, १७।३।'३३]

सत्य की अपार शक्ति

"हमको तो अपना जीवन सत्यमय बनाना है । हम देखते हैं कि सत्य के नाम पर असत्य लोगों के आदर का पात्र हो रहा है । धर्म का उद्देश्य तो है बन्धुत्व को बढाना, मनुष्य मनुष्य में जो कृत्रिम भेद है, उनको कम करना । लेकिन आज उसी के नाम पर अछूतों के साथ घृणित व्यवहार हो रहा है । मैं कह चुका हूँ कि असत्य स्वयं कमजोर है, परतन्त्र है । बिना सत्य के आधार के वह खडा ही नहीं रह सकता । लेकिन मैं आपको यह बतलाना चाहता हूँ कि सत्य के नाम पर अगर असत्य भी इतना विजयी हो सकता है, तो स्वयं सत्य कितना होगा ? इसका नाप कौन लगा सकता है ?

—'सर्वोदय', अक्तूबर,' ३८, पृष्ठ १० (उद्धरण) ।

वस्तु नहीं मिल सकती, वैसे ही सत्यवादी भी सत्य से बढकर और क्या चीज चाहेगा ? · · सत्य जहाँ सूर्य के समान ताप पहुँचाता है तहाँ प्राण का सिञ्चन भी करता है।·· ”

—नवजीवन। हिं० न० जी०, १९।१२।'२९, पृष्ठ १३८]

सत्य में गोपनीयता नहीं !

“ · ···सत्य गोपनीयता से घृणा करता है।”

—य० इ०, २१।१२।'३१]

सत्य ही परमेश्वर है !

“ · परमेश्वर 'सत्य' है, यह कहने के बजाय 'सत्य' ही परमेश्वर है यह कहना अधिक उपयुक्त है।”

सत्य बिना शुद्ध ज्ञान नहीं

“जहाँ सत्य नहीं है वहाँ शुद्ध ज्ञान सम्भव नही हो सकता। जहाँ सत्य ज्ञान है वहाँ आनन्द ही होगा, शोक होगा ही नही। और, सत्य शाश्वत है इसलिए आनन्द भी शाश्वत होता है।”

सत्य की आराधना ही भक्ति है

“सत्य की आराधना भक्ति है।···वह 'मरकर जीने का मन्त्र' है।”

—यरवदा जेल; २२।७।'३०]

सत्यनारायण

“विचार में देह का ससर्ग छोड दें तो अन्त में देह हमे छोड देगी। यह मोह-रहित स्वरूप सत्यनारायण है।”

—यरवदा जेल; २९।७।'३०]

सत्य स्वतन्त्र है

"परम सत्य अकेला खडा होता है । सत्य साध्य है, अहिंसा साधन है ।"

—यरवदा जेल १९।८।'३०]

सत्य की शक्ति

"सत्य के पास अपनी रक्षा के लिए अमोघ शक्ति है । सत्य ही जीवन है और ज्योंही यह किसी मानव-व्यक्ति मे अपना घर कर लेता है त्योही यह अपने को फैला लेता है ।"

—ह० से० १७।३।'३३]

सत्य ही धर्म की प्रतिष्ठा है

"सत्य ही एक धर्म की सच्ची प्रतिष्ठा है । जब सत्य ही परमेश्वर है, तो धर्म मे असत्य को स्थान कभी नहीं हो सकता है ।"

—ह० से०, १७।३।'३३]

सत्य की अपार शक्ति

"हमको तो अपना जीवन सत्यमय बनाना है । हम देखते है कि सत्य के नाम पर असत्य लोगो के आदर का पात्र हो रहा है । धर्म का उद्देश्य तो है बन्धुत्व को बढाना, मनुष्य-मनुष्य मे जो कृत्रिम भेद है, उनको कम करना । लेकिन आज उसी के नाम पर अछूतो के साथ घृणित व्यवहार हो रहा है । मै कह चुका हूँ कि असत्य स्वय कमजोर है, परतन्त्र है । बिना सत्य के आधार के वह खडा ही नही रह सकता । लेकिन मै आपको यह बतलाना चाहता हूँ कि सत्य के नाम पर अगर असत्य भी इतना विजयी हो सकता है, तो स्वय सत्य कितना होगा ? इसका नाप कौन लगा सकता है ?"

—'सर्वोदय', अक्तूबर,' ३८ पृ० १९ (उद्धरण)]

धर्म सेवा है, अधिकार नहीं

" धर्म तो कहता है—'मैं सेवा हूँ मुझे विधाता ने अधिकार दिया ही नहीं है' ।"

—नवजीवन । हिं० न० जी० १५।१०।२५ पृष्ठ ७२]

शुद्धतम प्रायश्चित्त

" जो मनुष्य अधिकारी व्यक्ति के सामने स्वेच्छापूर्वक अपने दोष शुद्ध हृदय से कह देता है और फिर कभी न करने की प्रतिज्ञा करता है वह मानो शुद्धतम प्रायश्चित्त करता है ।"

— हिन्दी आत्मकथा । सस्ता संस्करण १९३० भाग १, अध्याय ८ पृष्ठ [illegible]

क्षमा का रहस्य

" क्रोध का कारण उपस्थित होने पर भी चुप्पी मार लेना, मार खा लेना, मार खाकर भी कुछ न बोलना—इसी मान्यता ने हिन्दुस्तान की जड़ खोद फेंकी है । बुद्ध भगवान् ने जब कहा था—'अक्रोधेन जिने क्रोधं' (अर्थात् अक्रोध से क्रोध को जीतना चाहिए), तब क्या उनके मन में यही धारणा होगी कि अक्रोध के मानी हैं कुछ नहीं करना, हाथ पर हाथ धरकर बैठे रहना ? मुझे तो नहीं जान पड़ता है । कहा है—'क्षमा वीरस्य भूषणम् ।' तब क्या यह क्षमा केवल निष्क्रिय क्षमा होगी नहीं यह अक्रोध, यह क्षमा जब दया के रूप में बदलती है प्रेम का रूप धारण करती है तभी यह शुद्ध क्षमा होती है । अहिंसा कुछ आलस्य नहीं, प्रमाद नहीं, अशक्ति नहीं सक्रियता है ।

—नवजीवन । हिं० न० जी० १०।१।२८ पृष्ठ १६५]

मृत्यु-शोक मिथ्या है

" पुत्र मरे या पति मरे उसका शोक मिथ्या है और अज्ञान है

—नवजीवन । हिं० न० जी० ११।८।२१, पृष्ठ १५८]

धर्म सेवा है, अधिकार नहीं

" धर्म तो कहता है—'मै सेवा हूँ मुझे विधाता ने अधिकार दिया ही नहीं है ।

—नवजीवन । हिं० न० जी० १५।१०।'२५ पृष्ठ ७२]

शुद्धतम प्रायश्चित्त

" जो मनुष्य अधिकारी व्यक्ति के सामने स्वेच्छापूर्वक अपने दोष शुद्ध हृदय मे कह देता है और फिर कभी न करने की प्रतिज्ञा करता है वह मानो शुद्धतम प्रायश्चित्त करता है ।'

— हिन्दी आत्मकथा । सस्ता संस्करण १९२९ भाग १, अध्याय ८ पृष्ठ [illegible]]

क्षमा का रहस्य

" क्रोध का कारण उपस्थित होने पर भी चुप्पी मार लेना मार खा लेना, मार खाकर भी कुछ न बोलना—इसी मान्यता ने हिन्दुस्तान की जड खोद फेकी है । बुद्ध भगवान् ने जब कहा था—'अक्रोधेन जिने क्रोध' (अर्थात् अक्रोध से क्रोध को जीतना चाहिए), तब क्या उनके मन मे यही धारणा होगी कि अक्रोध से मानी है कुछ नहीं करना हाथ पर हाथ धरकर बैठे रहना ? मुझे तो नही जान पडता है । कहा है— 'क्षमा वीरस्य भूषणम् ।' तब क्या यह क्षमा केवल निष्क्रिय क्षमा होगी ? नहीं यह अक्रोध यह क्षमा जब दया के रूप मे बदलती है, प्रेम का रूप धारण करती है तभी यह शुद्ध क्षमा होगी ।' । अहिंसा कुछ आलस्य नहीं, प्रमाद नहीं, अशक्ति नही, सक्रियता है ।

—नवजीवन । हिं० न० जी० १०।१।'२८ पृष्ठ १७५]

मृत्यु-शोक मिथ्या है

" पुत्र मरे या पति मरे उसका शोक मिथ्या है और अज्ञान है ।

—नवजीवन । हिं० न० जी० ११।८।'२[illegible] पृष्ठ १५८]

[१]

अहिंसा और उसकी शक्ति

अहिंसा : तात्त्विक

"अहिंसा मानो पूर्ण निर्दोषता ही है। पूर्ण अहिंसा का अर्थ है प्राणिमात्र के प्रति दुर्भाव का पूर्ण अभाव।"

× × ×

"अहिंसा एक पूर्ण स्थिति है। सारी मनुष्य जाति इसी एक लक्ष्य की ओर स्वभावतः, परन्तु अनजान में, जा रही है।"

—यं० इं० । हिं० न० जी० १२।३।'२५]

अहिंसा

"· अहिंसा एक महाव्रत है। तलवार की धार पर चलने से भी कठिन है। देहधारी के लिए उसका सोलह आना पालन असम्भव है। उसके पालन के लिए घोर तपश्चर्या की आवश्यकता है। तपश्चर्या का अर्थ यहाँ त्याग और ज्ञान करना चाहिए।"

—नवजीवन । हिं० न० जी०, २०।८।'२५ पृष्ठ ३]

सत्य और अहिंसा

"·· सत्य विधायक है; अहिंसा निषेधात्मक है। सत्य वस्तु का साक्षी है; अहिंसा वस्तु होने पर भी उसका निषेध करती है। सत्य है, असत्य नहीं है। हिंसा है, अहिंसा नहीं है। फिर भी अहिंसा ही होना चाहिए। यही परमधर्म है। सत्य स्वयंसिद्ध है। अहिंसा उसका सम्पूर्ण फल है; सत्य में वह छिपी हुई है। वह सत्य की तरह व्यक्त नहीं है।"

× × ×

" · अहिंसा सत्य का प्राण है। उसके बिना मनुष्य पशु है।'

—नवजीवन । हिं० न० जी०, १५।१०।'२५ पृष्ठ ६९]

× × ×

" मेरे लिए सत्य से परे कोई धर्म नहीं है, और अहिसा से बढकर कोई परम कर्त्तव्य नहीं है। 'सत्यान्नास्ति परो धर्म.' और 'अहिंसा परमो धर्म' इन दो सूत्रों मे धर्म शब्द के अर्थ भिन्न हैं। इनके मानी है, सत्य से बढकर कोई ध्येय नहीं और अहिंसा से बढकर कोई कर्त्तव्य नहीं है। इस कर्त्तव्य को करते-करते ही आदमी सत्य की पूजा कर सकता है। सत्य की पूजा का दूसरा कोई साधन नहीं है। सत्य के लिए देश के नाश का भी साक्षी बनना पडे तो बनना चाहिए। देश को छोडना पडे तो छोडना चाहिए ··। · · यदि मेरा कोई सिद्धान्त कहा जाय तो वह इतना ही है। पर इसमे गाधीवाद जैसी कोई चीज नहीं है। मैने जो कुछ लिखा है, वह मैने जो कुछ किया है, उसका वर्णन है, और मैने जो कुछ किया है वही सत्य और अहिसा की सब से बडी टीका (व्याख्या) है।"

—गाधी सेवासघ सम्मेलन, सावली, ३ मार्च, '३६]

अहिंसा प्रेम की पराकाष्ठा है

" दूसरे के लिए प्राणार्पण करना प्रेम की पराकाष्ठा है और उसका शास्त्रीय नाम अहिंसा है। अर्थात् यो कह सकते हैं कि अहिसा ही सेवा है। ससार मे हम देखते हैं कि जीवन और मृत्यु का युद्ध होता रहता है परन्तु दोनों का परिणाम मृत्यु नहीं जीवन है।

—नवजीवन । हिं० न० जी० १५।९।'२७, पृष्ठ २६। मैसूर से विदा होते समय स्वयंसेवकों को दिये गये प्रवचन से]

अहिंसा

"···अहिसा प्रचण्ड शस्त्र है। उसमे परम पुरुपार्थ है। वह भीरु से दूर भागती है। वह वीर पुरुप की शोभा है, उसका सर्वस्व है। यह शुष्क, नीरस, जड पदार्थ नही है। यह चेतन है। यह आत्मा का विशेष गुण है।"

—नवजीवन। हिं० न० जी०, १३।९।'२८, पृष्ठ २८]

× × ×

"अहिंसा ही सत्येश्वर का दर्शन करने का सीधा और छोटा-सा मार्ग दिखाई देता है।"

—ह० से० १०।११।'३३]

अहिंसा सब से बडी शक्ति

"सत्य के बाद असल में अहिंसा ही ससार मे बडी-से-बडी सक्रिय शक्ति है। विफल तो वह कभी जाती ही नहीं। हिंसा सिर्फ ऊपर से सफल मालूम पडती है।"

—ह० से० २८।९।'३४]

× × ×

"अहिंसा की शक्ति अपरिमेय है। उसी तरह अहिंसक की शक्ति भी अतुलित है। अहिंसक स्वय कुछ नहीं करता, उसका प्रेरक ईश्वर होता है।······पूर्ण सत्याग्रही याने ईश्वर का पूर्ण अवतार।······इसमे तनिक भी अत्युक्ति नहीं है कि यह ससार इस तरह का अवतार निर्माण करने की प्रयोगशाला है। हमें यह श्रद्धा रखनी चाहिए कि हम सब मिलकर अगर अंशरूप मे तैयारी करें तो कभी न कभी पूर्ण अवतार प्रकट अवश्य ही होगा।······"

—५।४।'३५ के एक पत्र मे, 'सर्वोदय', जनवरी,' ३९, पृष्ठ ३२]

अहिसा

"अहिसा—यह मानवजाति के पास एक ऐसी प्रबल-से-प्रबल शक्ति पडी हुई है कि जिसका कोई पार नहीं। मनुष्य की बुद्धि ने ससार के जो प्रचण्ड से प्रचण्ड अस्त्र-शस्त्र बनाये है उनसे भी प्रचण्ड यह अहिसा की शक्ति है। सहार कोई मानव-धर्म नहीं है। मनुष्य अपने भाई को मार कर नही बल्कि जरूरत हो तो उसके हाथ से मर जाने को तैयार रहकर ही स्वतन्त्रता से जीवित रहता है। हत्या या अन्य प्रकार की हिंसा, फिर चाहे वह किसी भी कारण की गई हो, मानवजाति के विरुद्ध एक अक्षम्य अपराध है।"

—ह० से०, २६।७।'३५ पृष्ठ १८४]

× × ×

"मुझमे अहिसा की अपूर्ण शक्ति है, यह मै जानता हूँ, लेकिन जो कुछ शक्ति है वह अहिसा की ही है। लाखो लोग मेरे पास आते है। प्रेम से मुझे अपनाते है। औरते निर्भय होकर मेरे साथ रह सकती है। मेरे पास ऐसी कौन-सी चीज है? केवल अहिसा की शक्ति है, और कुछ नही। अहिसा की यह शक्ति एक नई नीति के रूप मे मै जगत् को देना चाहता हूँ।"

—गाधी सेवा सघ की सभा, वर्धा २।६।'४०]

पूर्ण अहिसक की शक्ति

" · · कभी-कभी यह विचार आता है कि सब छोड़ छाड़कर एक दम एकान्त मे जाकर अपना प्रयोग चलाकर देखूँ तो? अपनी शान्ति और कल्याण साधने के लिए नहीं, किन्तु आत्मनिरीक्षण के लिए आत्मा की आवाज को अधिक स्पष्टता से सुनने के लिए [illegible] के ही

कल्याण का प्रतिक्षण विचार हो, और इस विचार की सहज-सिद्धि प्राप्त हो सके। तभी मेरा अहिंसा का प्रयोग सफल होगा। पूर्ण अहिंसक मनुष्य गुफा में बैठा हुआ भी सारे जगत् को हिला सकता है, इसमें मुझे शङ्का नहीं। पर उस विचार के पीछे पूर्ण एकाग्रता और पूर्ण शुद्धि होनी चाहिए।"

—ह० से०, २७।७।'४०, पृष्ठ २०६। प्यारेलाल के लेख से]

अहिंसा श्रद्धा का विषय है

"· · · यह सच है कि अहिंसा के मामले में भी हमको बुद्धि का प्रयोग अन्त तक करना होगा। लेकिन मैं आपसे कह दूँ कि अहिंसा केवल बुद्धि का विषय नहीं है, यह श्रद्धा और भक्ति का विषय है। यदि आपका विश्वास अपनी आत्मा पर नहीं है, ईश्वर और प्रार्थना पर नहीं है तो अहिंसा आपके काम आनेवाली चीज नहीं है।"

—गांधी सेवा संघ सम्मेलन, डेलाग, २७।३।'३८]

नम्रता की चरम सीमा = अहिंसा

"मैं जानता हूँ कि अभी मुझे इसमें कहीं विकट रास्ता तै करना है। मुझे अपने आप को शून्य बना लेना चाहिए। जबतक मनुष्य अपनी गिनती पृथ्वी के सारे जीवों के अन्त में नहीं करेगा, उसे मोक्ष नहीं मिलेगा। नम्रता की चरम सीमा का ही नाम तो अहिंसा है।"

—'सर्वोदय,' नवम्बर, '३८; पृष्ठ ४९, नीचे का उद्धरण]

अहिंसा

"······अहिंसा कोई ऐसा गुण तो है नहीं जो गढा जा सकता हो। यह तो एक अन्दर से बढनेवाली चीज है, जिसका आधार आत्यन्तिक व्यक्तिगत प्रयत्न है।"

—ह० से० २३।४।'३८; पृष्ठ ७९]

अहिंसा स्वयभू शक्ति है !

"अहिंसा एक स्वयभू शक्ति है ।"

—गा० से० स० सम्मेलन, मालिकान्दा, बगाल ।२१।२।'४०]

सहार के बीच अमृत का स्रोत

"· · · यह जगत् प्रतिक्षण बदलता है । इसमे सहार की इतनी शक्तियाँ है । कोई स्थिर नहीं रह सकता लेकिन फिर भी मनुष्य जाति का सहार नहीं हुआ, इसका यही अर्थ है कि सब जगह अहिंसा ओतप्रोत है । मै उसका दर्शन करता हूँ । गुरुत्वाकर्षण शक्ति के समान अहिंसा ससार की सारी चीजों को अपनी तरफ खीचती है । प्रेम मे यह शक्ति भरी हुई है ।"

—गा० से० स० सम्मेलन मालिकान्दा (बगाल) २२।२।'४०]

अहिंसा के नाम का प्रभाव

"··· रामनाम के विषय मे हमने सुना है कि रामनाम से लोग तर जाते है, तो फिर स्वय राम ही आ जायँ तो क्या होगा ? अहिंसा के नाम ने भी इतना किया, तो फिर दरअसल हममे सच्ची अहिंसा आ जाय तो हम आकाश में उड़ने लगेगे । . हमारा शब्द आकाश-गगा को भी भेदता हुआ चला जायगा । यह जमीन आसमान हो जायगी ।"

—गाधी सेवा सघ की सभा, वर्धा, २२।६।'४०]

हिंसा अहिंसा

"......जिस तरह कहा जाता है कि रामनाम के प्रताप से पानी पर पत्थर तैरे, उसी तरह अहिंसा के नाम से जो प्रवृत्ति चली, उससे देश मे भारी जागृति हुई, और हम आगे बढे । जिनका विश्वास अविचल है वे इस प्रयोग को और आगे बढा सकते है ।"

× × ×

“ . हिसा करनेवाले सब जडवत् होते है, इस वाक्य मे अति-शयोक्ति है।”

× × ×

“ . सामान्य अनुभव यह है कि बहुत सी हिंसा का निवारण अहिसा के द्वारा हो जाता है। इस अनुभव पर से हम अनुमान लगा सकते है कि तीव्र हिसा का प्रतिकार तीव्र अहिसा से हो सकता है।”

—ह० से०, २७।७।’४०, पृष्ठ १९५]

---

[२]

अहिंसा की व्यापकता और सन्देश

आकर्षण न कि अपकर्षण प्रकृति का तत्व है

"· · · ·मेरी दृष्टि मे तो, मुझे निश्चय है कि, न तो कुरान मे, न महाभारत मे कहीं भी हिंसा को प्रधान पद दिया गया है। यद्यपि कुदरत मे हमको काफी अपकर्षण दिखाई देता है तथापि वह आकर्षण के ही सहारे जीवित रहती है। पारस्परिक प्रेम की बदौलत ही कुदरत का काम चलता है। मनुष्य सहार पर अपना निर्वाह नही करते है। आत्मप्रेम की बदौलत औरो के प्रति आदरभाव अवश्य ही उत्पन्न होता है। राष्ट्रो मे एकता इसलिए होती है कि राष्ट्रो के अगभूत लोग परस्पर आदरभाव रखते है। किसी दिन हमारा राष्ट्रीय न्याय हमे सारे विश्व तक व्याप्त करना पडेगा, जेसा कि हमने अपने कौटुम्बिक न्याय को राष्ट्रो के—एक विस्तृत कुटुम्ब के— निर्माण मे व्याप्त किया है।

—य० इं० । हिं० न० जी० । ५।२।'२२, पृष्ठ २७६]

प्रेम ही सहज वृत्ति है

"· · · संसार आज इसलिए टिका है कि यहाँ पर घृणा से प्रेम की मात्रा अधिक है, असत्य से सत्य अधिक है। धोखेबाजी और जोर जब्र तो बीमारियाँ है, सत्य और अहिंसा स्वास्थ्य है। यह बात कि ससार अभी तक नष्ट नही हो गया है इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है कि ससार मे रोग से अधिक स्वास्थ्य है।

—ह० इं० । हिं० न० जी० [illegible]

अहिंसा जीवन-धर्म है

"अगर अहिंसा या प्रेम हमारा जीवन-धर्म न होता, तो इस मर्त्य-लोक मे हमारा जीवन कठिन हो जाता। जीवन तो मृत्यु पर प्रत्यक्ष और सनातन विजय-रूप है।"

× × ×

"अगर मनुष्य और पशु के बीच कोई मौलिक और सबसे महान अन्तर है तो वह यही है कि मनुष्य दिनोदिन इस धर्म का अधिकाधिक साक्षात्कार कर सकता है, और अपने व्यक्तिगत जीवन मे उसपर अमल भी कर सकता है। ससार के प्राचीन और अर्वाचीन सब सन्त पुरुष अपनी-अपनी शक्ति और पात्रता के अनुसार इस परम जीवन-धर्म के ज्वलन्त उदाहरण थे। निस्सन्देह यह सच है कि हमारे अन्दर छिपा हुआ पशु कई बार सहज विजय प्राप्त कर लेता है पर इससे यह सिद्ध नहीं होता कि यह धर्म मिथ्या है। इससे तो केवल यह सिद्ध होता है कि यह आचरण मे कठिन है।"

—ह० से० २६।९।'३६, पृष्ठ २५२]

अहिंसा का सङ्गठन

"···· अगर अहिंसा सङ्गठित नहीं हो सकती तो वह धर्म नहीं है। यदि मुझमें कोई विशेषता है तो यही कि मै सत्य और अहिंसा को सङ्गठित कर रहा हूँ। जो बात मै करना चाहता हूँ और जो करके मरना चाहता हूँ वह यह है कि मै अहिंसा को सङ्गठित करूँ। अगर वह सब क्षेत्रों के लिए उपयुक्त नहीं है तो झूठ है। मै कहता हूँ, जीवन की जितनी विभूतियाँ है सबमे अहिंसा का उपयोग है।···"

—गांधी सेवा सघ सम्मेलन, हुदली, २०।४।'३७]

अहिंसा पर ही समाज की स्थिति

"...... सारा समाज अहिंसा पर उसी प्रकार कायम है जिस प्रकार कि गुरुत्वाकर्षण से पृथ्वी अपनी स्थिति मे बनी हुई है।"

—ह० से०, ११।२।३९ पृष्ठ ४१८]

व्यापक और सार्वजनीन अहिंसा

"अहिंसा अगर व्यक्तिगत गुण है तो वह मेरे लिए त्याज्य वस्तु है। मेरी अहिंसा की कल्पना व्यापक है। वह करोडो की है। मै तो उनका सेवक हूँ। जो चीज करोडो की नहीं हो सकती, वह मेरे लिए त्याज्य है, और मेरे साथियो के लिए भी त्याज्य ही होनी चाहिए। हम तो यह सिद्ध करने के लिए पैदा हुए है कि सत्य और अहिंसा केवल व्यक्तिगत आचार के नियम नहीं है। वह समुदाय, जाति और राष्ट्र की नीति हो सकती है। मेरा यह विश्वास है कि अहिंसा हमेशा के लिए है। वह आत्मा का गुण है इसलिए वह व्यापक है क्योंकि आत्मा तो सभी के होती है। अहिंसा सबके लिए है, सब जगहो के लिए है, सब समय के लिए है। अगर वह दरअसल आत्मा का गुण है तो हमारे लिए वह सहज हो जाना चाहिए। आज कहा जाता है कि सत्य व्यापार मे नहीं चलता, राजकारण मे नहीं चलता। तो फिर वह कहाँ चलता है? अगर सत्य जीवन के सभी क्षेत्रो मे और सभी व्यवहारो मे नहीं चल सकता तो वह कौडी कीमत की चीज नहीं है। जीवन मे उसका उपयोग ही क्या रहा? सत्य और अहिंसा कोई आकाश पुष्प नहीं है। वे हमारे प्रत्येक शब्द व्यापार और कर्म मे प्रकट होने चाहिएँ।

—गां० से० सं० [illegible] ([illegible]) [illegible]।२।'४०

x x x

"• हमे सत्य और अहिंसा को केवल व्यक्तियो के अमल की चीज नही बनाना है, बल्कि ऐसी चीज बनाना है जिसपर कि समूह, जातियाँ और राष्ट्र भी अमल कर सके। मै इसी को सच्चा करने के लिए जीता हूँ और इसी की कोशिश करते हुए मरूँगा। मेरी श्रद्धा मुझे नित-नये सत्य खोज निकालने मे मदद देती है। अहिसा आत्मा का स्वभाव है, इस कारण हर व्यक्ति जीवन की सभी बातो मे उसपर अमल कर सकता है।"

—ह० से० १६।३।'४०, पृष्ठ ३४, गाधी-सेवा-सघ के भाषण से]

अहिसा सामाजिक धर्म है!

"...मैने यह विशेष दावा किया है कि अहिंसा सामाजिक चीज है, केवल व्यक्तिगत चीज नहीं है। मनुष्य केवल व्यक्ति नहीं है, वह पिण्ड भी है और ब्रह्माण्ड भी। वह अपने ब्रह्माण्ड का बोझ अपने कन्धे पर लिये फिरता है। जो धर्म व्यक्ति के साथ खत्म हो जाता है, वह मेरे काम का नहीं है। मेरा यह दावा है कि सारा समाज अहिंसा का आचरण कर सकता है और आज भी कर रहा है।"

—गाधी सेवा सघ की सभा, वर्धा : २२।६।'४०]

× × ×

"..हम लोगों के हृदय में इस झूठी मान्यता ने घर कर लिया है कि अहिंसा व्यक्तिगत रूप से ही विकसित की जा सकती है, और वह व्यक्ति तक ही मर्यादित है। दर असल बात ऐसी है नहीं। अहिंसा सामाजिक धर्म है, सामाजिक धर्म के तौर पर विकसित की जा सकती है, यह मनवाने का मेरा प्रयत्न और प्रयोग है। यह नई चीज है, इसलिए इसे झूठ समझकर फेंक देने की बात इस युग में तो कोई नहीं करेगा। यह कठिन है, इसलिए अशक्य है, यह भी इस युग मे कोई नहीं कहेगा।

क्योकि बहुत सी चीजे अपनी आँखो के सामने नई-पुरानी होती हमने देखी हैं, जो अशक्य लगता था, उसे शक्य बनते हमने देखा है।"

—सेवाग्राम, ६।७।'४०, ह० से० २४।८।'४०, पृष्ठ २३१-२३२]

संयम, अहिंसा और सत्य

"· सयम की कोई मर्यादा नहीं इसलिए अहिंसा की भी कोई मर्यादा नहीं। सयम का स्वागत दुनिया के तमाम शास्त्र करते है, स्वच्छन्दता के विषय मे शास्त्रो मे भारी मतभेद है। समकोण सब जगह एक ही प्रकार का होता है। दूसरे कोण अगणित है। अहिंसा और सत्य समस्त धर्मों का समकोण है।"

—नवजीवन। हिं० न० जी०, २०।८।'२५, पृष्ठ ३]

भारत और अहिंसा

"मेरी आज भी वही ज्वलन्त श्रद्धा है कि ससार के समस्त देशो मे भारत ही एक ऐसा देश है जो अहिंसा की कला सीख सकता है।"

× × ×

" शस्त्रीकरण की दौड मे शामिल होना हिन्दुस्तान के लिए आत्मघात करना है। भारत अगर अहिंसा को गँवा देता है, तो ससार की अन्तिम आशा पर पानी फिर जाता है।"

—ह० से० १४।१०।'३९, पृष्ठ २७८–२७९]

× × ×

" मै जानता हूँ कि तात्विक चिन्तन की वर्षा मे वही मात्रा भी पृथ्वी पर अहिंसा या सत्य न स्थापित कर सकेगी। केवल एक ही चीज यह काम कर सकती है और वह है राष्ट्रीय स्वतन्त्रता प्राप्त करने और उसकी

रक्षा करने मे अहिसा के सामर्थ्य को बिना किसी सन्देह के प्रदर्शित कर सकने की भारत की योग्यता।"

—सेवाग्राम, ८।६।'४०, ह० से०, १५।६।'४०, पृष्ठ १५०]

× × ×

" 'अगर हिन्दुस्तान जगत् को अहिसा का सन्देश न दे सका तो यह तबाही आज या कल आने ही वाली है, और कल के बदले आज इसके आने की सम्भावना अधिक है। जगत् युद्ध के शाप से बचना चाहता है, पर कैसे बचे इसका उसे पता नहीं चलता। यह चाबी हिन्दुस्तान के हाथ मे है।"

—सेवाग्राम, २५।६।'४०, ह० से० २९।६।'४०, पृष्ठ १६५]

[३]

अहिंसा का आचरण

अहिंसा की साधना

"मानसिक अहिंसा की स्थिति को प्राप्त करने के लिए काफी कठिन अभ्यास की जरूरत है। हमारे दैनंदिन जीवन में व्रत और नियमों का पालन आवश्यक है। यह अनुशासन हमें रुचिकर भले ही न हो, फिर भी वह उतना ही आवश्यक है जितना कि एक सिपाही के लिए। परन्तु मैं यह मानता हूँ कि यदि हमारा चित्त इसमें सहयोग न दे तो केवल बाह्य आचरण एक दिखावे की चीज हो जायगी, जिससे खुद हमारा नुकसान होगा और दूसरों का भी। मन, वाचा और शरीर में जब उचित सामञ्जस्य हो तभी सिद्धावस्था प्राप्त हो सकती है। लेकिन यह अभ्यास एक प्रचण्ड मानसिक आन्दोलन होता है। अहिंसा कोई सहज यांत्रिक कवायद नहीं है। वह तो हृदय का सर्वोत्कृष्ट गुण है और साधना से ही प्राप्त हो सकता है।"

— 'सर्वोदय' नवम्बर, '२८, [illegible]

अहिंसा का व्यवहार

"शुद्ध अहिंसा के नाम से ही हमें भयभीत नहीं होना चाहिए। इस अहिंसा को हम स्पष्टतया समझ लें, और इसकी सर्वोपरि उपयोगिता को स्वीकार कर लें, तो इसका आचरण उतना कठिन नहीं लगता

उतना कठिन नहीं है । 'भारत सावित्री'* की रट लगाना आवश्यक है । ऋषि-कवि पुकार पुकार कर कहता है,—'जिस धर्म मे सहज ही शुद्ध अर्थ और काम समाये हुए है, उस धर्म का हम क्यो आचरण नहीं करते ?' यह धर्म तिलक लगाने या गगा-स्नान करने का नहीं, किन्तु अहिसा और सत्य आचरण का है । हमारे पास दो अमर वाक्य है, "अहिसा परम धर्म है" और "सत्य के सिवा दूसरा धर्म नहीं ।" इसमे वाञ्छनीय सब अर्थ और काम आ जाते है । फिर हम क्यो हिचकिचाते है ?·· जो सरल है, वही लोगों को कठिन मालूम पडता है । यह हमारी जडता का सूचक है । यहॉ 'जडता' शब्द को निन्दात्मक नहीं समझना चाहिए । मैने अग्रेज शास्त्रियों के शब्द का अनुवाद किया है । वस्तुमात्र मे जडता नाम का एक गुण है, और वह अपनी जगह उपयोगी भी है । इसी गुण से हम टिके रहते है । यह न हो तो हम हमेशा लुडकते रहे । इस जडता के वश होकर हमारे अन्दर इस मान्यता ने घर कर लिया है कि सत्य और अहिसा का पालन बहुत कठिन है । यह दूषित जडता है । यह दोष हमें निकाल ही देना चाहिए । पहले तो सङ्कल्प कर लेना चाहिए

---

*'महाभारत' लिखने के बाद महर्षि व्यास ने अन्त में एक श्लोक लिखा है । वही श्लोक (जो नीचे दिया जा रहा है) भारत-सावित्री के नाम से प्रख्यात है —

ऊर्ध्वं बाहुर्विरौम्येष नैव कश्चिच्छृणोति मे ।
धर्मादर्थश्च कामश्च स धर्मः किं न सेव्यते ॥

अर्थात् "मैं ऊँचा हाथ करके पुकारता हूँ, पर मेरी कोई सुनता नहीं । धर्म से ही अर्थ और काम सधता हुआ है, ऐसे सरल धर्म का लोग क्यों सेवन नहीं करते ?"

कि असत्य और अहिंसा के द्वारा कितना भी लाभ हो, हमारे लिए वह त्याज्य है। क्योंकि वह लाभ लाभ नही, किन्तु हानि रूप ही होगा। ”

—सेवाग्राम, १०।६।'४० ह० से० २०।७।'४०, पृष्ठ १८९]

अहिंसा का आचरण

“जब कोई आदमी अहिंसक होने का दावा करता है तो उससे आशा की जाती है कि वह उस आदमी पर भी क्रोध नहीं करेगा जिसने उसे चोट पहुँचाई हो। वह उसकी बुराई या हानि नही चाहेगा, वह उसकी कल्याण-कामना करेगा, वह उसपर किटकिटायेगा नही, वह उसे किसी प्रकार की शारीरिक चोट नहीं पहुँचायेगा। वह गलती करनेवाले द्वारा दी जाने वाली सब प्रकार की यन्त्रणा सहन करेगा। इस प्रकार अहिंसा पूर्ण निर्दोषता है। पूर्ण अहिंसा सम्पूर्ण जीवधारियो के प्रति दुर्भावना का सम्पूर्ण अभाव है। इसलिए वह मानवेतर प्राणियो, यहाँ तक कि विषधर कीटो और हिंसक जानवरो, का भी आलिङ्गन करती है। .. अहिंसा, अपने सक्रिय रूप मे, सम्पूर्ण जीवन के प्रति एक सदभावना है। यह विशुद्ध प्रेम है . . . .।”

× × ×

“जब मनुष्य अपने मे निर्दोष होता है तो कुछ देवता नही बन जाता। तब वह सिर्फ सच्चा आदमी बनता है। अपनी वर्तमान स्थिति मे हम आंशिक रूप से मनुष्य और आंशिक रूप से पशु है, और अपने अज्ञान, बल्कि मद या उद्दण्डता, मे करते है कि जब हम घूँसे का जवाब घूँसे मे देते है और इस कार्य के लिए क्रोध की उपयुक्त मात्रा अपने अन्दर पैदा करते है तो अपनी योनि के तात्पर्य की उचित ढंग पर पूर्ति करते है। हम यह मान लेते है कि प्रतिहिंसा या बदला हमारे जीवन का

नियम है, जब कि प्रत्येक शास्त्र मे हम देखते है कि प्रतिहिंसा
अनिवार्य नहीं बल्कि क्षम्य मानी गई है। सयम—नियन्त्रण—अल
अनिवार्य है। ·· सयम हमारे अस्तित्व का मूल मन्त्र है। स
पूर्णता की प्राप्ति सर्वोच्च सयम के बिना सम्भव नहीं। इस प्रकार
महन मानव जाति का बैज (पहिचान का लक्षण) है।"

—य० इ० ९ मार्च, '२२]

× × ×

" 'मैं कोई स्वप्नद्रष्टा नहीं हूँ। एक व्यावहारिक आदर्श
होने का मेरा दावा है। अहिंसा धर्म केवल ऋषियों और सन्तों के
नहीं है। यह मामूली आदमियो के लिए भी है। अहिंसा मानवज
का नियम है जैसे हिंसा पशु का नियम है। पशु (या नरपशु)
आत्मशक्ति निद्रित रहती है और वह शरीर-बल के अलावा और
नियम नहीं जानता। मनुष्य का सम्मान अधिक ऊँचे कानून का—अ
की शक्ति का अनुसरण करने का तकाजा करता है।"

× × ×

"इसलिए मैंने भारत के सामने आत्म-बलिदान का पुराना नि
रखने की हिम्मत की है। सत्याग्रह, और इससे निकले असहयोग
सविनय प्रतिरोध, और कुछ नहीं, कष्ट-सहन के कानून के नये नाम
हैं। जिन ऋषियों ने, हिंसा के बीच अहिंसा के नियम की खोज
वे न्यूटन से अधिक प्रतिभा रखने वाले थे। वे वेलिंगटन से
अधिक वीर थे। शास्त्रों का प्रयोग जानने के बाद उन्होंने उनकी नि
रता का अनुभव किया और थकी हुई दुनिया को सिखाया था
उसकी मुक्ति हिंसा के रास्ते में नहीं, अहिंसा के रास्ते है।"

—य० इ०, ११ अगस्त, '२०]

"मै भारत से अहिंसा का पालन करने को इसके अशक्त होने के कारण नहीं कहता। मै चाहता हूँ कि वह अपनी शक्ति का अनुभव करते हुए अहिंसा का पालन करे। अपनी शक्ति की अनुभूति के लिए उसे किसी शस्त्रज्ञान की आवश्यकता नहीं है। हमे इसकी (शस्त्र-ज्ञान की) आवश्यकता का भान इसलिए होता है कि हम अपने को मास का लोथडा मात्र—देहधारी मात्र—समझ बैठे है। मै चाहता हूँ कि भारत इस बात का अनुभव करे कि उसकी अपनी एक आत्मा है, जो नष्ट नहीं की जा सकती और समस्त ससार के भौतिक सघटन की अवज्ञा कर सकती है। एक मानव प्राणी राम का, बन्दरो की सेना लेकर दस सिर वाले और समुद्र की गर्जन वाली लहरों के बीच अपनी लका को सुरक्षित समझने वाले रावण की उद्धत शक्ति से लोहा लेने का और क्या अभिप्राय हो सकता है?—क्या इसका अर्थ आध्यात्मिक शक्ति द्वारा शरीर-बल की पराजय नहीं है?

—य० इं० ११ अगस्त, '२०]

× × ×

"मैने भारत के सामने अहिंसा का आत्यन्तिक रूप नहीं रखा है, और नहीं तो इसीलिए कि मै अपने को अभी वह प्राचीन सन्देश देने के योग्य नहीं पाता। यद्यपि मेरी बुद्धि ने इसे पूरी तरह समझ और ग्रहण कर लिया है किन्तु अभी तक यह मेरे समस्त जीवन—सम्पूर्ण अस्तित्व का अङ्ग नहीं बन पाया है। मेरी शक्ति ही इस बात मे है कि मै जनता से कोई ऐसी बात करने को नहीं कहता जिसे मै अपने जीवन मे [illegible] बार आजमा न चुका होऊँ।

—य० इं०, २९ मई, '२४]

× × ×

"· व्यर्थ अधिक बल का प्रयोग करना कायरता और प
का लक्षण है। एक बहादुर आदमी चोर को मार नहीं डालत
पकडकर उसे पुलिस के हवाले कर देता है। उससे भी ज्यादा
आदमी सिर्फ उसे खदेड देने मे अपनी शक्ति लगाता है और फि
बारे में कुछ नही सोचता। और जो सबसे अधिक वीर है वह त
भव करता है कि चोर बेचारा चारी से अच्छी बात जानता नहीं, वह
समझाने की कोशिश करता है और अपने को उलटे मार खाने, य
कि मार डाले जाने, के खतरे मे डालता है, लेकिन बदले मे उ
नहीं करता। हमें जैसे हो वैसे कायरता और पौरुषहीनता का
करना चाहिए।"

—य० इ०, १५ दिसम्बर, '२०]

× × ×

"जहाँ सिर्फ कायरता और हिंसा के बीच किसी एक के चुन
बात हो तहाँ मैं हिंसा के पक्ष मे राय दूँगा।"

—य० इ०, ११ अगस्त, '२०]

× × ×

"मेरा विश्वास है कि अहिंसा हिंसा से असीम गुनी ऊँची ची
क्षमा दण्ड से अधिक पुरुषोचित है—क्षमा वीरस्य भूषणम्।' ··

× × ×

"······ शक्ति शारीरिक क्षमता से नहीं उत्पन्न होती; वह
सकल्प (या इच्छा) से उत्पन्न होती है।······"

—य० इ०, ११ अगस्त, '२०]

× × ×

"   · अहिंसा का अर्थ ईश्वर पर भरोसा रखना है ।   "

—य० इं०, १२ जनवरी, '२१]

×   ×   ×

"   अगर भारत तलवार के सिद्धान्त को अपनाता है तो उसे क्षणिक विजय प्राप्त हो सकती है । पर तब भारत मेरे हृदय का गौरव न रह जायगा । भारत के प्रति मेरी इतनी भक्ति इसलिए है कि मेरे पास जो कुछ है वह सब मैंने उसी से पाया है । मेरा पक्का विश्वास है कि उसे दुनिया को एक सन्देश देना है । उसे अन्धा बनकर युरोप की नक़ल नहीं करनी है । जिस दिन भारत तलवार का सिद्धान्त ग्रहण करेगा वह मेरी परीक्षा का दिन होगा और मुझे आशा है कि मैं अपने कर्तव्य में हल्का न उतरूँगा । मेरा धर्म भौगोलिक सीमाओं में बँधा हुआ नहीं है । अगर मुझे इसमें जीवित श्रद्धा होगी तो वह मेरे भारत-प्रेम को भी पार कर जायगी । मैं अहिंसा द्वारा, जिसे मैं हिन्दू धर्म का मूल समझता हूँ, भारत की सेवा के लिए अपना जीवन अर्पित कर चुका हूँ ।"

—य० इं०, ११ अगस्त, '२०]

×   ×   ×

अहिंसा

"   · अहिंसा मेरी प्रत्येक प्रवृत्ति की जड़ है   ।"

पाँच उपसिद्धान्त

१ "जहाँतक मानवीय दृष्टि से सम्भव है तहाँतक पूर्ण आत्मशुद्धि अहिंसा के अन्दर निहित है ।

२ मनुष्य मनुष्य के बीच मुकाबला करें तो मालूम होगा कि अहिंसक मनुष्य में हिंसा करने की जितनी ही शक्ति होगी उतनी ही मात्रा

मे उसकी अहिंसा का माप हो जायगा ।

(यहाँ कोई हिंसा की शक्ति के बदले हिंसा की इच्छा समझने की भूल न करे । अहिंसक मे हिंसा की इच्छा तो कभी नही हो सकती ।)

३ बिना अपवाद के अहिंसा हिंसा से श्रेष्ठ शक्ति है, अर्थात् अहिंसक व्यक्ति मे उसके हिंसक होने की दशा मे जो शक्ति होती उससे अहिंसक होने की दशा मे सदा अधिक शक्ति होती है ।

४ अहिंसा मे हार जैसी कोई चीज ही नहीं है । हिंसा के अन्त मे तो निश्चित हार ही है ।

५ अगर अहिंसा के सम्बन्ध में जीत शब्द का प्रयोग किया जा सके तो कहा जा सकता है कि अहिंसा का अन्तिम परिणाम निश्चित विजय है । पर असल में देखें तो जहाँ हार का भाव ही नही है, वहाँ जीत का भी कोई भाव नहीं हो सकता ।"

"...... अहिंसा श्रद्धा और अनुभव की वस्तु है, एक सीमा से आगे तर्क की चीज वह नहीं है ।"

—'हरिजन', १२ अक्तूबर, '३५]

अहिंसा की सफलता की कुछ शर्तें

१ अहिंसा परम श्रेष्ठ मानव धर्म है, पशु बल से वह अनन्त गुना महान् और उच्च है ।

२. अन्ततोगत्वा वह उन लोगों को कोई लाभ नही पहुँचा सकती, जिनकी उस प्रेम रूपी परमेश्वर में सजीव श्रद्धा नहीं है ।

३. मनुष्य के स्वाभिमान और सम्मान-भावना की वह सबसे बडी रक्षक है । हाँ, वह मनुष्य की चल-अचल सम्पत्ति की हमेशा रक्षा करने का आश्वासन नहीं देती—हालाँ कि अगर मनुष्य उसका अच्छा अभ्यास

कर ले तो शस्त्रधारियो की सेनाओ की अपेक्षा वह इसकी अधिक अच्छी तरह रक्षा कर सकती है। यह तो स्पष्ट है कि अन्याय से अर्जित सम्पत्ति तथा दुराचार की रक्षा मे वह जरा भी सहायक नही हो सकती।

४. जो व्यक्ति और राष्ट्र अहिंसा का अवलम्बन करना चाहे, उन्हे आत्म-सम्मान के अतिरिक्त अपना सर्वस्व (राष्ट्रो को तो एक-एक आदमी) गॅवाने के लिए तैयार रहना चाहिए। इसलिए वह दूसरे के मुल्को को हडपने अर्थात् आधुनिक साम्राज्यवाद से, जो कि अपनी रक्षा के लिए पशुबल पर निर्भर रहता है, बिल्कुल मेल नही खा सकता।

५ अहिंसा एक ऐसी शक्ति है, जिसका सहारा बालक, युवा, वृद्ध, स्त्री-पुरुष सब ले सकते है, बशर्ते कि उनकी उस करुणामय मे तथा मनुष्य-मात्र मे सजीव श्रद्धा हो। जब हम अहिंसा को अपना जीवन सिद्धान्त बना ले, तो वह हमारे सम्पूर्ण जीवन मे व्याप्त होनी चाहिए। यो कभी-कभी उसे पकडने और छोडने से लाभ नही हो सकता।

६ यह समझना एक जबर्दस्त भूल है कि अहिंसा केवल व्यक्तियो के लिए ही लाभदायक है, जन-समूह के लिए नही। जितना वह व्यक्ति के लिए धर्म है उतना ही वह राष्ट्रो के लिए भी धर्म है।"

—ह० से० ५।९।३६ पृष्ठ २२८-२२९]

अहंकार और हिंसा

" जहाँ अहंकार है वहाँ हिंसा अवश्य है। प्रत्येक कार्य करते समय मन मे यह प्रश्न कर लेना चाहिए कि यहाँ 'मैं' (अहंकार) हूँ या नहीं ! जहाँ 'मैं' (अहंकार) नहीं है वहाँ हिंसा नहीं है।'

—नवजीवन । हि० न० जी० १०।६।'२६ पृ २२९]

उदारता और अहिंसा

" उदारता तो अहिंसा का अवयव है। उससे रहित अहिंसा अपङ्ग है, इसलिए वह चल ही नहीं सकती।"

—ह० से० २७।७।'४०, पृष्ठ १९६]

अहिंसा

" जहाँ अहिंसा है, वहाँ कोढी भी नहीं रह सकती। "

—गांधी सेवा संघ सम्मेलन, सावली, ३ मार्च,' ३६]

× × ×

" सत्य और अहिंसा का मार्ग खाँडे की धार के जैसा है। खूराक ठीक तरह से ली जाय, तो वह शरीर को पोषण देती है। इसी प्रकार अहिंसा का ठीक तरह से पालन किया जाय तो वह आत्मा को पोषण देती है।"

—ह० से० २।४।'३८ पृष्ठ ५८; गांधी-सेवा-संघ के डेलाग अधिवेशन में २५।३।'३८ को दिये गये प्रवचन से]

सच्ची अहिंसा

" अहिंसा तितिक्षा और प्रेम की मात्रा बढाकर सत्य को सिखाती है। प्रेम सौदे और शर्त की वस्तु नहीं है। जो अहिंसक के साथ अहिंसक रहता है, उसे अहिंसक कौन कहेगा? इसमें तो मनुष्य अपने स्वभाव से ही चलता है। जब खूनी के साथ मिलकर मैं मर जाऊँ तो दुनिया मुझे बहादुर कहेगी।.. "

—गांधी सेवा संघ सम्मेलन, डेलांग, २५ मार्च,' ३८]

अहिंसा का स्वभाव

" अहिंसा का स्वभाव ही यह है कि वह दौड-दौडकर हिंसा के

मुख में चली जाय। और हिंसा का स्वभाव है कि दौड़-दौड़कर जो जहाँ मिले उसको खा जाय।"

—गांधी सेवा संघ सम्मेलन, वृन्दावन ३।५।'३९, प्रारम्भिक भाषण से]

अहिंसा का राजमार्ग

"परस्पर विश्वास और सरल चित्त से दूसरों की बात समझ लेने की तैयारी यही अहिंसा का राजमार्ग है।"

—गांधी से० संघ सम्मेलन, वृन्दावन (बिहार), ५।५।'३९]

अहिंसा

" अहिंसा में हिंसक की हिंसा को शमन करने की शक्ति होनी चाहिए।"

× × ×

" अहिंसा का लक्षण तो सीधे हिंसा के मुँह में दौड़ जाना है।'

× × ×

" अहिंसा डरपोक का शस्त्र नहीं है। वह तो परम पुरुषार्थ है, वीरों का धर्म है। सत्याग्रही बनना है तो आपका अज्ञान, आलस्य सब दूर हो जाना चाहिए। सतत जागृति आपलोगों में आनी चाहिए। तन्द्रा जैसी चीज ही नहीं रहनी चाहिए। तभी अहिंसा चल सकती है। सच्ची अहिंसा आने के बाद आपकी वाणी से, आपके आचार से, व्यवहार से अमृत झरने लगेगा।'

× × ×

" सम्पूर्ण आत्म-शुद्धि के प्रयत्न में मर मिटना यह अहिंसा की शर्त है।"

—ह० से०, २०।५।३९ पृ० १०९-११०।

---

[४]

अहिंसा वीर-धर्म है

कायरता बनाम हिंसा

" . मेरे अहिंसा धर्म मे खतरे के वक्त अपने अजीजो को मुसीबत में छोडकर भाग खडे होने के लिए जगह नहीं। मारना या नामर्दी के साथ भाग खडा होना, इनमें से यदि मुझे किसी बात को पसन्द करना पडे तो मेरा उसूल कहता है कि मारने का—हिंसा का रास्ता पसन्द करो।"

—यग इडिया। हिं० न० जी० १।६।'२४, पृष्ठ ३३६]

× × ×

" डरकर भाग खडे होना, मन्दिर छोड देना या बाजे बजाना बन्द कर देना या अपनी रक्षा न करना, यह मनुष्यता नही है, यह तो नामर्दी है। अहिंसा वीरता का लक्षण है—भीरु, डरपोक मनुष्य यह तक नहीं जान सकता कि अहिंसा किस चिडिया का नाम है।"

—नवजीवन। हिं० न० जी० १४।९।'२४, पृष्ठ ३४-३५]

अहिंसा वीर का लक्षण है

" . मैने तो पुकार-पुकारकर कहा है कि अहिंसा—क्षमा—वीर का लक्षण है। जिसे मरने की शक्ति है वही मारने मे अपने को रोक सकता है। मेरे लेखों में तुम भीरुता को अहिंसा मान लो तो? अपने लोगों की रक्षा करने के धर्म को खो बैठो तो? तो मेरी अधोगति हुए बिना न रहे। मैने कितनी ही बार लिखा है और कहा है कि कायरता कभी

धर्म हो ही नहीं सकता। संसार में तलवार के लिए जगह जरूर है। कायर का तो क्षय ही हो सकता है। उसका क्षय ही योग्य भी है। परन्तु मैंने तो यह दिखाने का प्रयत्न किया है कि तलवार चलानेवाले का भी क्षय ही होगा। तलवार से मनुष्य किसको बचावेगा और किसको मारेगा? आत्मबल के सामने तलवार का बल तृणवत् है। अहिंसा आत्मा का बल है। तलवार का उपयोग करके आत्मा शरीरवत् बनती है। अहिंसा का उपयोग करके आत्मा आत्मवत् बनती है।"

—नवजीवन। हिं० न० जी०, २८।९।'२४, पृष्ठ ५२]

कायरता स्वयं हिंसा है!

" • • सच बात यह है कि कायरता खुद ही एक सूक्ष्म, और इसलिए भीषण प्रकार की, हिंसा है और शारीरिक हिंसा की अपेक्षा उसे निर्मूल करना बहुत ही मुश्किल है।'

—य० इ०। हिं० न० जी० ८।१।'२५ पृष्ठ १७७]

मारना कब ठीक है?

" मेरा धर्म मुझे शिक्षा देता है कि औरों की रक्षा के लिए अपनी जान दे दो, दूसरे को मारने के लिए हाथ तक न उठाओ। पर मेरा धर्म मुझे यह कहने की भी छुट्टी देता है कि अगर ऐसा मौका आवे कि अपने आश्रित लोगों या जिम्मे के काम को छोड़कर भाग जाने या हमला करने वाले को मारने में से किसी एक बात को पसन्द करना हो तो यह हर शख्स का कर्तव्य है कि वह मारते हुए वहीं मर जाय, अपनी जगह छोड़कर भागे हर्गिज नहीं। मुझे [illegible] पहले [illegible] मिलने का [illegible] प्राप्त हुआ है वे [illegible] डरते हैं, और [illegible] बड़ी [illegible] हुआ है, कि [illegible]

माशों को हिन्दू अबलाओ पर बलात्कार करते हुए हमने अपनी ऑखों देखा है। जिस समाज मे जवॉमर्द लोग रहते हो वहॉ बलात्कार की ऑखो-देखी गवाहियॉ देना प्राय: असम्भव होना चाहिए। ऐसे जुर्म की खबर देने के लिए एक भी शख्स जिन्दा न रहना चाहिए। एक भोला-भाला पुजारी, जो अहिंसा का मतलब नही जानता था, मुझसे खुशी-खुशी आकर कहता है साहब, जब हुल्लडबाजो की भीड मन्दिर मे मूर्ति तोडने को घुसी तो मै बडी होशयारी से छिप रहा। मेरा मत है कि ऐसे लोग पुजारी होने के लायक बिल्कुल नहीं हैं। उसे वहीं मर जाना चाहिए था। तब अपने खून से उसने मूर्त्ति को पवित्र कर दिया होता। और अगर उसे यह हिम्मत न थी कि अपनी जगह पर बिना हाथ उठाये और मुंह से यह प्रार्थना करते हुए कि 'ईश्वर इस खूनी पर रहम कर!' मर मिटे तो उस हालत मे उन मूर्ति तोडने वालो का संहार करना भी उसके लिए ठीक था। परन्तु अपने इस नश्वर शरीर को बचाने के लिए छिप रहना मनुष्योचित न था।"

—यं० इं०। हि० न० जी०। ८।१।'२५, पृष्ठ १७७]

हिंसक और अहिंसा

"...डरकर जो हिंसा नहीं करता वह तो हिंसा कर ही चुका है। चूहा बिल्ली के प्रति अहिंसक नहीं। उसका मन तो निरन्तर बिल्ली की हिंसा करता रहता है। निर्बल होने के कारण वह बिल्ली को मार नहीं सकता। हिंसा करने का पूरा सामर्थ्य रखते हुए भी जो हिंसा नहीं करता है वही अहिंसा-धर्म का पालन करने मे समर्थ होता है। जो मनुष्य स्वेच्छा से और प्रेम भाव से किसी की हिंसा नहीं करता वही अहिंसा धर्म का पालन करता है। अहिंसा का अर्थ है प्रेम, दया, क्षमा। शास्त्र उसको

वर्णन वीर के गुण के रूप मे करते हैं। यह वीरता शरीर की नहीं बल्कि हृदय की है।"

—नवजीवन । हिं० न० जी०, २०।८।'२५ पृष्ठ ३]

कायरता हिंसा का प्रकार है

" डर कर भाग जाना कायरता है और कायरता से न तो समझौता हो सकेगा, न अहिंसा को ही कुछ मदद मिलेगी। कायरता हिंसा की एक किस्म है और उसे जीतना बहुत दुश्वार है। हिंसा से प्रेरित मनुष्य को हिंसा छोड़कर अहिंसा की उत्तम शक्ति को ग्रहण करने को समझाने मे सफल होने की आशा की जा सकती है लेकिन कायरता तो सब प्रकार की शक्ति का अभाव है।"

"वे जो मरना जानते हैं उन्हें मै अपनी अहिंसा सफलतापूर्वक सिखा सकता हूँ, जो मरने से डरते हैं उन्हें मै अहिंसा नही सिखा सकता।"

—य० इ० । हिं० न० जी० १५।१०।'२५। पृष्ठ ७१। बिहार के दौरे मे भागलपुर की एक सभा में हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न पर बोलते हुए]।

अहिंसा और अभय

" अहिंसा क्षत्रिय का धर्म है। महावीर क्षत्रिय थे। बुद्ध क्षत्रिय थे। राम कृष्ण आदि क्षत्रिय थे। वे सब थोड़े या बहुत अहिंसा के उपासक थे। हम उनके नाम पर भी अहिंसा का प्रदर्शन चाहते हैं। लेकिन इस समय तो अहिंसा का ठेका भीरु वैश्य वर्ग ने ले रखा है, इसलिए वह धर्म निस्तेज हो गया है। अहिंसा का दूसरा नाम है क्षमा की परिसीमा। लेकिन क्षमा तो वीर पुरुष का भूषण है। अभय के बिना अहिंसा नहीं हो सकती।"

—नवजीवन । हिं० न० जी० [illegible], पृष्ठ ८५

हिंसा बनाम कायरता

"   मेरा अहिंसा धर्म एक महान शक्ति है । उसमें कायरता और कमजोरी के लिए जरा भी स्थान नहीं है । एक हिंसा का उपासक अहिंसा का भक्त बन सकता है । परन्तु एक कायर से तो कभी अहिंसक बनने की आशा ही नहीं की जा सकती । इसीलिए मैंने कई मर्तबा ·· लिखा है कि यदि कष्ट-सहन अर्थात् अहिंसा द्वारा हम अपनी स्त्रियों और पूजा-स्थानों की रक्षा नहीं कर सकते हों तो, यदि हम मर्द हैं, कम से कम हमें सशस्त्र प्रतीकार करके तो जरूर उनकी रक्षा करनी चाहिए ।·· "

—य० इ० । हि० न० जी०, १६।६।'२७, पृष्ठ ३४९]

अहिंसा वीर-धर्म है

" *अहिंसा कुछ डरपोक का, निर्बल का धर्म नहीं है । वह तो बहादुर और जान पर खेलनेवाले का धर्म है । तलवार से लडते हुए जो मरता है वह अवश्य बहादुर है, किन्तु जो मारे बिना धैर्यपूर्वक खडा-खडा मरता है, वह अधिक बहादुर है । · · मार के डर से जो अपनी स्त्रियों का अपमान सहन करता है वह मर्द न रहकर नामर्द बनता है । वह न पति बनने लायक है, न पिता या भाई बनने लायक । ·····जहाँ नामर्द बसते हैं वहाँ बदमाश तो होंगे ही ।"*

—नवजीवन । हिं० न० जी० ११।१०।'२८, पृष्ठ ६२]

अहिंसा बनाम कायरता

"····अहिंसा और कायरता परस्पर-विरोधी शब्द हैं । अहिंसा सर्व-श्रेष्ठ सद्गुण है कायरता बुरी से बुरी बुराई है । अहिंसा का मूल प्रेम में कायरता का घृणा में । अहिंसक सदा कष्ट-सहिष्णु होता है; कायर दूसरों को पीडा पहुँचाता है । सम्पूर्ण अहिंसा उच्चतम वीरता है·····।"

—य० इ० । हि० न० जी० ३१।१०।'२९; पृष्ठ ८५]

कायरता बनाम शरीर-बल

"   कायरता की अपेक्षा बहादुरी के साथ शरीरबल का प्रयोग करना कहीं श्रेयस्कर है।"

—गांधी सेवा संघ सम्मेलन, डेलांग, २५ मार्च, '३८]

× × ×

"   चाहे जो हो, कायरता को तो छोड़ ही देना है। अहिंसा लाचार और भीरुओं के लिए नहीं है।"

—गांधी सेवा संघ सम्मेलन, डेलांग, २६ मार्च, '३८]

× × ×

"मेरा मतलब यह है कि हमारी अहिंसा उन कायरों की न हो जो लड़ाई से डरते हैं, खून से डरते हैं हत्यारों की आवाज से जिनका दिल कॉपता है। हमारी अहिंसा तो पठानों की अहिंसा होनी चाहिए।"

—गांधी सेवा संघ सम्मेलन, डेलांग, २७ मार्च, '३८]

कायरता बनाम अहिंसा

"   कायरता से तो बहादुरी के साथ शारीरिक बल काम में लाना हजार दर्जे अच्छा है। कायरता की अपेक्षा लड़ते लड़ते मर जाना हजार गुना अच्छा है। हम सब मूलतः तो शायद पशु ही होंगे, और मैं यह मानने के लिए तैयार हूँ कि हम धीरे-धीरे विकास के क्रमानुसार पशु से मनुष्य हुए हैं। अतः हम पशु-बल लेकर तो अवतीर्ण हुए ही थे पर हमारा मानव-अवतार इसलिए हुआ कि हमारे अन्तर में जो ईश्वर रमता है उसका साक्षात्कार हम कर सकें। यह मनुष्य का विशेषाधिकार है और यही इसके और पशु-सृष्टि के बीच अन्तर है।"

—ह० से० ९।४।'३८, पृ० ५९ - गांधी-सेवा-संघ के डेलांग अधिवेशन में २५।३।'३८ को दिये गये प्रवचन से]

कायरता बनाम हिंसा

"क्या आप इतनी दूर तक मेरे साथ जाने को तैयार हैं ? क्या जो कुछ मैं कहता हूँ वह आपकी बुद्धि को जँचता है ? यदि हाँ, तो हमें अपने भीतरी से भीतरी विचारों में से भी हिंसा को निकाल देना चाहिए। लेकिन यदि आप मेरे साथ न चल सकें, तो आप अपने ही रास्ते खुशी से जावें। अगर आप किसी दूसरे रास्ते से अपने मुकाम को पहुँच सकते हों तो बेशक जावें। आप मेरी बधाइयों के पात्र होंगे। क्योंकि मैं कायरता तो किसी हालत में सहन नहीं कर सकता। मेरे गुजर जाने के बाद कोई यह न कहने पाये कि गांधी ने लोगों को नामर्द बनना सिखाया। अगर आप सोचते हों कि मेरी अहिंसा कायरता के बराबर है, या उससे कायरता ही पैदा होगी तो आपको उसे छोड़ देने में जरा भी हिचकना नहीं चाहिए। आप निपट कायरता से मरें, इसकी अपेक्षा आपका बहादुरी से प्रहार करते हुए और प्रहार सहते हुए मरना मैं कहीं बेहतर समझूँगा। मेरे सपने की अहिंसा अगर सम्भव न हो तो अहिंसा का स्वाँग भरने की अपेक्षा यह बेहतर होगा कि आप उस सिद्धान्त का ही त्याग कर दें।"

—१७ जून,'३९, 'हरिजन' में]

वीरों की अहिंसा

"... सिर्फ मर जाने से हम परीक्षा में उत्तीर्ण नहीं होंगे। हमारे दिल में मारनेवालों के लिए दया होनी चाहिए।.........वे अज्ञान हैं इसलिए ईश्वर से प्रार्थना करेंगे कि वह उन्हें ज्ञान दे। हम तितिक्षा से उनके आघात सह लेंगे। हमारे हृदय में दया के उद्गार निकलेंगे। सिर्फ लोगों को सुनाने के लिए नहीं, बल्कि सच्चे दिल से हम उनपर

दया करेगे। कोई मुझपर हमला करता है लेकिन मुझे उसपर गुस्सा नही आता वह मारता जाता है, मै सहता जाता हूॅ, मरते-मरते भी मेरे मुख पर दर्द का भाव नहीं, बल्कि हास्य है, मेरे दिल मे रोष के बदले दया है तो मै कहूॅगा कि हमने वीर पुरुषो की अहिंसा सिद्ध कर ली। · अहिंसा मे इतनी ताकत है कि वह विरोधियो को मित्र बना लेती है और उनका प्रेम प्राप्त कर लेती है।''

अहिंसा कायरों का नाश करती है !

" · अहिंसा एक हद तक अशक्तो का शस्त्र भी हो सकती है। लेकिन एक हद तक ही। परन्तु वह बुजदिलो का—कायरो का—शस्त्र तो हर्गिज नहीं हो सकती। अगर कोई बुजदिल होकर अहिंसा को लेता है तो अहिंसा उसका नाश करेगी।''

—गां० से० सं० सम्मेलन, मालिकान्दा (बंगाल) २१।२।'४०]

जीवन मृत्यु की शय्या है !

" हिन्दुस्तान के लड़वैयो मे हम अग्रगामी रहे। जीवन को मृत्यु की शय्या समझकर चलें। इस मौत के बिछौने मे अकेले न सोयें। हमेशा यमदूत को साथ लेकर सोयें। मृत्यु (देवता) से कहे कि अगर तू मुझे ले जाना चाहता है तो ले जा, मै तो तेरे मुंह मे नाच रहा हूँ। जबतक नाचने देगा, नाचूँगा, नहीं तो तेरी ही गोद मे सो जाऊँगा। अगर आपने इस तरह मृत्यु का भय जीत लिया, तो यह संघ अमर हो जायगा। अगर आप इस तरह के है, तो किसी संघ की क्या जरूरत है ! तब तो आप खुद ही एक संघ है।''

—मालिकान्दा (बंगाल), २[illegible]।[illegible]।'४० गांधी सेवा संघ के सदस्यों को [illegible] [illegible] की [illegible] [illegible] हुए।

लाचारी का भाव

"...'हिंसा के मुकाबले मे लाचारी का भाव आना अहिसा नहीं, कायरता है। अहिंसा को कायरता के साथ मिला नहीं देना चाहिए।"

—ह० से० २३।३।'४०, पृष्ठ ४८, शान्ति निकेतन में बातचीत में]

मृत्यु का भय

"...... मौत के भय से मुक्त हर एक पुरुष या स्त्री स्वय मरकर अपनी और अपनो की रक्षा करे। सच तो यह है कि मरना हमे पसन्द नहीं होता, इसलिए आखिर हम घुटने टेक देते हैं। कोई मरने के बदले सलाम करना पसन्द करता है, कोई धन देकर जान छुडाता है, कोई मुँह में तिनका लेता है, और कोई चींटी की तरह रेंगना पसन्द करता है। इसी तरह कोई स्त्री लाचार होकर, जूझना छोड, पुरुष की पशुता के वश हो जाती है।... ...सलामी से लेकर सतीत्व-भग तक की सभी क्रियाएँ एक ही चीज की सूचक हैं। जीवन का लोभ मनुष्य से क्या-क्या नहीं कराता? अतएव जो जीवन का लोभ छोडकर जीता है, वही जीता है। 'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः'। प्रत्येक पाठक को यह अनुपम श्लोक याद कर लेना चाहिए। किन्तु इसके प्रति केवल जबानी वफादारी से कोई काम नहीं हो सकता। इसे उसे अपने हृदय की गहराई में उतार लेना चाहिए। जीवन का स्वाद लेने के लिए हमें जीवन के लोभ का त्याग कर देना चाहिए।"

—सेवाग्राम २३।२।'४२, हरिजन १।३।'४२, पृष्ठ ६०]

---

[५]

अहिंसा : विविध पहलू

अहिंसा असहयोग से अधिक महत्व रखती है

"...यदि हम इस बात को याद रक्खें कि असहयोग की अपेक्षा अहिंसा अधिक महत्त्वपूर्ण है और अहिंसा के बिना असहयोग पाप है तो मैं आजकल जिन विचारों को इन पृष्ठों में पल्लवित कर रहा हूँ वे सूर्य-प्रकाश की तरह स्पष्ट हो जायँगे।"

—य० इ० । हिं० न० जी०, १४।९। २४, पृष्ठ ३६]

अहिंसावादी उपयोगितावादी नहीं है

" बात तो यह है कि अहिंसावादी उपयोगितावाद का समर्थन नहीं कर सकता। वह तो 'सर्वभूत हिताय' यानी सबके अधिकतम लाभ के लिए ही प्रयत्न करेगा और इस आदर्श की प्राप्ति में मर जायगा। इस प्रकार वह इसलिए मरना चाहेगा जिससे दूसरे जी सकें। दूसरों के साथ-साथ वह अपनी सेवा भी आप मरकर करेगा। सबके अधिकतम सुख के अन्दर अधिकांश का अधिकतम सुख भी मिला हुआ है।

—य० इ० । हिं० न० जी० [illegible]।१२। [illegible]६ पृष्ठ [illegible]]

रूढ़िग्रस्त अहिंसा

" रूढ़ि या आवश्यकता के कारण पाली जानेवाली अहिंसा के भौतिक परिणाम भले ही आवें किन्तु शुद्ध अहिंसा एक ऊँचे प्रकार की भावना है, और उसका आरोपण तो उसी आदमी के सम्बन्ध में किया जा सकता है जिसका मन अहिंसक है और जो प्राणिमात्र के प्रति

करुणा से, प्रेम से उभरा पडता है। खुद किसी दिन मासाहार किया नहीं, इसलिए आज भी नहीं करता है किन्तु क्षण-क्षण मे क्रोध करता है, दूसरो को लूटता है, लूटने मे नीति-अनीति की पर्वा नही करता, जिसे लूटता है उसके सुख-दु:ख की फिक्र नही रखता, वह आदमी किसी तरह अहिंसक मानने लायक नहीं है किन्तु यह कहना चाहिए कि वह घोर हिंसा करनेवाला है। इसके उलटे मासाहार करनेवाला वह आदमी जो प्रेम से उभरा पडता है, राग-द्वेषादि से मुक्त है, सबके प्रति सम भाव रखता है, वह अहिंसक है, पूजा करने योग्य है। अहिंसा का ख्याल करते हुए हम हमेशा केवल खान-पानादि का विचार करते है। यह अहिंसा नहीं कही जायगी। यह तो मूर्च्छा है। जो मोक्षदायी है, जो परम धर्म है, जिसके निकट हिंसक प्राणी अपनी हिंसा छोड देते है, दुश्मन वैर भाव का त्याग करते है, कठोर हृदय पिघल जाते हैं, वह अहिंसा कोई अलौकिक शक्ति है, और वह बहुत प्रयत्न के बाद, बहुत तपश्चर्या के बाद किसी-किसी का ही वरण करती है।"

—नवजीवन। हिं० न० जी०, १९।७।'२८; पृष्ठ ३८२]

हिंसा आत्मघाती है।

" हिंसा आत्मघाती है और उसके सामने यदि प्रतिहिंसा न हो तो वह जिन्दा नहीं रह सकती।..."

—न० जी०। हिं० न० जी० १७।११।'२७, पृष्ठ १००]

ठगिनी हिंसा

"...लालच और कपट हिंसा की सन्तान भी है और उसके जनक भी है। हिंसा अपने नग्न रूप मे लोगों को उसी तरह बुरी लगती है, जिस तरह खून, मांस और कोमल त्वचा से शून्य एक नर कङ्काल बुरा लगता

है। ऐसी हिसा बहुत समय तक नही टिक सकती। लेकिन जब वह शान्ति और प्रगति का भेष धारण कर लेती है तो काफी लम्बे समय तक बनी रहती है।

—य० इ० । हिं० न० जी० ६।२।'३०, पृष्ठ १९७]

अहिसा बनाम दया

" · · 'जहाँ दया नही वहा अहिसा नही अतः यो कह सकते हैं कि जिसमे जितनी दया है उतनी ही अहिंसा है। जो जीने के लिए खाता है, सेवा करने के लिए जीता है, मात्र पेट पालने के लिए कमाता है वह काम करते हुए भा अक्रिय है, वह हिसा करते हुए भी अहिसक है। क्रियाहीन अहिसा आकाश के फूल के समान है। क्रिया हाथ-पैर से ही होती हो, सो नही। मन हाथ-पैर की अपेक्षा बहुत ज्यादा काम करता है। विचारमात्र क्रिया है। विचार-रहित अहिसा हो ही नही सकती। "

—नवजीवन । हिं० न० जी०, ४।४।'२९, पृष्ठ २५७]

अहिसा और मासाहार

" मासाहारी सत्याग्रही हो सकता है।'

×   ×   ×

"मैने मासाहारी अहिसक और निरामिष-भोजी हिसक भी देखे है। . निरामिषहारी अभिमान न करें। अहिसा एक अनोखी चीज है। वह भावना का विषय है, सिर्फ बाहरी आचार का नहीं।'

—गाधी सेवा संघ सम्मेलन, सावली, ४ मार्च, '३८]

हिसक और अहिसक प्रवृत्तियाँ

"हिसक और अहिसक प्रवृत्तियाँ एक साथ चल रही हैं। ईश्वर उनका द्रष्टा है। जनता परिणाम देखती है। हम भी देखेंगे। अहिसा

का किस तरह अमल मे करता हूँ वह नई सी चीज मालूम होती है। जैनो और बौद्धो ने भी अहिंसा के प्रयोग किये। लेकिन वह आहार मे मर्यादित हो गई है। राजनीतिक और सामाजिक कामों मे भी हिंसक और अहिंसक दोनों शक्तियाँ प्रेरक हो जाती हैं। बाह्यतः उनके स्वरूप में फर्क नहीं दीख पडता पर हेतु मे होता है। हर चीज मे इस बात का ध्यान रक्खें तो हानि न होगी, और कठिनाइयाँ भी न रहेंगी।"

—गांधी सेवा सघ सम्मेलन, सावली, ६ मार्च, '३६]

सङ्कटापन्न विरोधी के प्रति आचरण

" 'अहिंसक आदमी का कोई दुश्मन नहीं होता। लेकिन अपने को जो दुश्मन कहता है, वह जब दुर्बल हो जाता है तो अहिसक मनुष्य उसपर दया करता है। वह उसकी आपत्ति मे उसपर सवारी नहीं कसना चाहता। जब वह सङ्कट से मुक्त हो जाता है तभी अपनी लडाई शुरु करता है।.."

—गांधी सेवा सघ सम्मेलन, डेलाग, २५ मार्च, '३८]

हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न और अहिंसा

"अगर हम सचमुच शक्तिशाली अहिंसा का प्रयोग कर रहे हैं, तो हिन्दू मुसलमानों के बीच मैत्री कराने का प्रयत्न होना चाहिए। अब तक दोस्ती नहीं थी सिर्फ खुशामद से उन्हे जीतने की कोशिश हुई। उन सब चीजों में पालिसी थी।..."

—गांधी सेवा सघ सम्मेलन, डेलांग, २८।३।'३८]

अहिंसा

"मैं यह कहने का साहस करता हूँ कि अगर हमारी अहिंसा वैसी न हुई जैसी कि वह होनी चाहिए, तो राष्ट्र को उससे बडा नुकसान

पहुँचेगा। क्योंकि उसकी आखिरी तपिश मे हम बहादुर के बजाय कायर साबित होंगे। और आजादी के लिए लड़नेवालो के लिए कायरता से बड़ी कोई बेइज्जती नही है।"

× × ×

"अगर हम यह महसूस करे कि हिंसा की लड़ाई बगैर हम ब्रिटिश सत्ता को नही हटा सकते, तो हमे याने कांग्रेस को राष्ट्र से साफ-साफ यह कह देना और उसे उसके लिए तैयार करना चाहिए। इसके बाद जो सारी दुनिया मे हो रहा है वही हम भी करे, याने जब जरूरत हो खामोश रहे और जब मौका हो तब वार करे।'

—ह० से० १।४।'३८, पृष्ठ ५८]

युरोपीय युद्ध और अहिंसा

" युरोप ने चार दिन की दुनियवी जिन्दगी के लिए अपनी आत्मा को बेच दिया है। म्यूनिच मे युरोप को जो शान्ति प्राप्त हुई है वह तो हिंसा की विजय है। साथ ही, वह उसकी पराजय भी है। मै तो कहता हूँ कि अपने विरोधियो से लड़ते हुए मरना अगर बहादुरी है, जैसी कि वह वस्तुतः है, तो अपने विरोधियो से लड़ने से इन्कार करके भी उनके आगे न झुकना और भी बहादुरी है। जब दोनो ही सूरतो मे मृत्यु निश्चित है, तब दुश्मन के प्रति अपने मन मे कोई भी द्वेष-भाव रखे बगैर छाती खोलकर मरना क्या अधिक श्रेय नही है?

—ह० से० ८।१०।'३८, पृष्ठ २६८]

अहिंसात्मक प्रतिकार

"अहिंसा का यह मतलब नही है कि हम बुराई के खिलाफ अपनी लड़ाई को छोड़कर बैठ जायँ। बल्कि मेरी कल्पना की अहिंसा मे हिंसा

अधिक सक्रिय और वास्तविक प्रतिकार है, उतना प्रतिघात में नहीं है, क्योंकि प्रतिघात का तो स्वभाव ही ऐसा है कि उससे दुष्टता पनपती है। मेरा उद्देश दुष्टता का मानसिक और इसीलिए नैतिक प्रतिकार है। अत्याचारी की तलवार के विरुद्ध उससे पैनी धार वाली तलवार के प्रयोग से उसकी तलवार की धार भोटी करने का मेरा इरादा नहीं है। मैं तो उसकी इस अपेक्षा को कि मैं शारीरिक प्रतिकार करूँगा, झूठा साबित करके उसकी तलवार भोटी करना चाहता हूँ। मै जो आत्मिक प्रतिकार करूँगा उससे वह पार नहीं पा सकेगा। पहले तो वह चौंधिया जायगा और अन्त में उसे उस प्रतिकार का लोहा मानना पड़ेगा, लेकिन ऐसा करने से उसकी मान-हानि होने के बदले उसका उत्थान होगा। कोई कहेंगे, यह तो आदर्श अवस्था है। हॉ, है तो सही।"

—'सर्वोदय', आवरण पृष्ठ, अक्टूबर,' ३८]

सच्चा बन्धुत्व

"बन्धुत्व से यह मतलब नहीं है कि जो तुम्हारा बन्धु बने और तुमसे प्रेम करे, उसके बन्धु बनो और उससे प्रेम करो। यह तो सौदा हुआ। बन्धुत्व में व्यापार नहीं होता। और मेरा धर्म तो मुझे यह सिखाता है कि बन्धुत्व केवल मनुष्यमात्र से ही नहीं, बल्कि प्राणिमात्र के साथ होना चाहिए। हम अपने दुश्मन से भी प्रेम करने के लिए तैयार न होंगे तो हमारा बन्धुत्व निरा ढोंग है। दूसरे शब्दों में कहूँ तो, जिसने बन्धुत्व की भावना को हृदयस्थ कर लिया है वह यह नहीं कहने देगा कि उसका कोई शत्रु है।"

—'सर्वोदय', अप्रैल, '३९, पृष्ठ ३३]

हिंसा बनाम अहिंसा

"हिन्दुस्तान मे आज जगह-जगह हिंसा और अहिंसा की पद्धति के बीच एक द्वन्द्व युद्ध चल रहा है। हिंसा तो पानी के प्रवाह की तरह है। पानी को निकलने का रास्ता मिलते ही उसमे से उसका प्रवाह भयानक जोर से बहने लगता है। अहिंसा पागलपन से काम कर ही नहीं सकती। वह तो अनुशासन का सार तत्त्व है। किन्तु जब वह सक्रिय बन जाती है, तब फिर हिंसा की कोई भी शक्तियाँ उसे पराजित नही कर सकती। अहिंसा सोलहो कलाओं से वही उदित होती है जहाँ उसके नेताओं मे कुन्दन की जैसी शुद्धता और अटूट श्रद्धा होती है।"

—ह० से०, २८।१।'३९ पृष्ठ ४०]

प्रजातन्त्र और अहिंसा

" जबतक प्रजातन्त्र का आधार हिंसा पर है, वह दीन दुर्बलो की रक्षा नही कर सकता। दुर्बलो के लिए ऐसे राजतन्त्र मे कोई स्थान ही नही है। प्रजातन्त्र का अर्थ मै यह समझता हूँ कि इस तन्त्र मे नीचे-से-नीचे और ऊँचे-से-ऊँचे आदमी को आगे बढने का समान अवसर मिलना चाहिए। लेकिन सिवा अहिंसा के ऐसा कभी हो ही नही सकता।"

—ह० से० १८।५।'४०, पृष्ठ ११२]

हिंसा बनाम अहिंसा

" जैसे हिंसा की तालीम मे मारना सीखना जरूरी है उसी तरह अहिंसा की तालीम मे मरना सीखना पड़ता है। हिंसा से भय से मुक्ति नही मिलती, किन्तु भय से बचने का इलाज ढूंढने का प्रयत्न रहता है। अहिंसा मे भय को स्थान ही नही है। भयमुक्त होने के लिए अहिंसा के उपासक को उच्च कोटि की त्याग शक्ति विकसित करनी चाहिए। जमीन

अधिक सक्रिय और वास्तविक प्रतिकार है, उतना प्रतिघात मे नही है, क्योकि प्रतिघात का तो स्वभाव ही ऐसा है कि उससे दुष्टता पनपती है। मेरा उद्देश दुष्टता का मानसिक और इसीलिए नैतिक प्रतिकार है। अत्याचारी की तलवार के विरुद्ध उससे पैनी धार वाली तलवार के प्रयोग से उसकी तलवार की धार भोटी करने का मेरा इरादा नही है। मै तो उसकी इस अपेक्षा को कि मै शारीरिक प्रतिकार करूँगा, झूठा साबित करके उसकी तलवार भोटी करना चाहता हूँ। मै जो आत्मिक प्रतिकार करूँगा उससे वह पार नही पा सकेगा। पहले तो वह चौंधिया जायगा और अन्त मे उसे उस प्रतिकार का लोहा मानना पडेगा, लेकिन ऐसा करने मे उसकी मान-हानि होने के बदले उसका उत्थान होगा। कोई कहेंगे, यह तो आदर्श अवस्था है। हाँ, है तो सही।"

—'सर्वोदय', आवरण पृष्ठ, अक्टूबर,' ३८]

सच्चा बन्धुत्व

"बन्धुत्व से यह मतलब नहीं है कि जो तुम्हारा बन्धु बने और तुमसे प्रेम करे, उसके बन्धु बनो और उससे प्रेम करो। यह तो सौदा हुआ। बन्धुत्व मे व्यापार नहीं होता। और मेरा धर्म तो मुझे यह सिखाता है कि बन्धुत्व केवल मनुष्यमात्र से ही नहीं, बल्कि प्राणिमात्र के साथ होना चाहिए। हम अपने दुश्मन से भी प्रेम करने के लिए तैयार न होंगे तो हमारा बन्धुत्व निरा ढोंग है। दूसरे शब्दों मे कहूँ तो, जिसने बन्धुत्व की भावना को हृदयस्थ कर लिया है वह यह नहीं कहने देगा कि उसका कोई शत्रु है।"

—'सर्वोदय', अप्रैल, '३९ पृष्ठ ३३]

: ३ :

ईश्वर और उसकी साधना

जाय, धन जाय, शरीर भी जाय, इसकी परवा ही न करे। जिसने सब प्रकार के भय को नहीं जीता वह पूर्ण अहिंसा का पालन नहीं कर सकता। इसलिए अहिंसा का पुजारी एक ईश्वर का ही भय रखे, और दूसरे सब भयों को जीत ले। ईश्वर की शरण ढूँढने वालों को आत्मा शरीर से भिन्न है, यह भान होना चाहिए। और आत्मा का भान होते ही क्षणभङ्गुर शरीर का मोह उतर जाता है। इस तरह अहिंसा की तालीम हिंसा की तालीम से एक दम उल्टी होती है। बाहर की रक्षा के लिए हिंसा की जरूरत पडती है। आत्मा की, स्वमान की रक्षा के लिए अहिंसा की आवश्यकता है। • ”

—सेवाग्राम, २५।८।'४०, ह० से० ३१।८।'४०, पृष्ठ २४२]

" ...मेरा ईश्वर तो मेरा सत्य और प्रेम है। नीति और सदाचार ईश्वर है। निर्भयता ईश्वर है। ईश्वर जीवन और प्रकाश का मूल है। और फिर भी वह इन सबसे परे है। ईश्वर अन्तरात्मा ही है। वह तो नास्तिकों की नास्तिकता भी है। क्योंकि वह अपने अमर्यादित प्रेम से उन्हें भी जिन्दा रहने देता है। वह हृदय को देखनेवाला है। वह बुद्धि और वाणी से परे है। हम स्वयं जितना अपने को जानते हैं उससे कहीं अधिक वह हमें और हमारे दिलों को जानता है। जैसा हम कहते हैं वैसा ही वह हमें नहीं समझता। क्योंकि वह जानता है कि जो हम जबान से कहते हैं अक्सर वही हमारा भाव नहीं होता। ... ईश्वर उन लोगों के लिए एक व्यक्ति ही है जो उसे व्यक्ति रूप में हाजिर देखना चाहते हैं। जो उसका स्पर्श करना चाहते हैं उनके लिए वह शरीर धारण करता है। वह पवित्र में पवित्र तत्त्व है। जिन्हें उसमें श्रद्धा है उन्हीं के लिए उसका अस्तित्व है।

"वह हममें व्याप्त है और फिर भी हमसे परे है ... वह बड़ा सहनशील है, वह बड़ा धैर्यवान है, लेकिन वह बड़ा भयङ्कर भी है। उसका व्यक्तित्व इस दुनिया में, और भविष्य की दुनिया में भी, सबसे अधिक काम करानेवाली ताकत है। जैसा हम अपने पड़ोसी—मनुष्य और पशु दोनों—के साथ बर्ताव करते हैं वैसा ही बर्ताव वह हमारे साथ भी करता है। उसके सामने अज्ञान की दलील नहीं चल सकती। लेकिन यह सब होने पर भी वह बड़ा रहमदिल है क्योंकि वह हमें पश्चात्ताप करने के लिए मौका देता है। दुनिया में सबसे बड़ा प्रजातन्त्रवादी वही है क्योंकि वह बुरे-भले को पसन्द करने के लिए हमें स्वतन्त्र छोड़ देता है। वह सबसे बड़ा जालिम है क्योंकि वह अक्सर हमारे मुँह तक आये हुए कौर को छीन लेता है और इच्छा-स्वातन्त्र्य की ओट में हमें इतनी कम छूट देता है कि

ईश्वर

"ईश्वर निश्चय ही एक है। वह अगम, अगोचर और मानवजाति के बहु-जन-समाज के लिए अज्ञात है। वह सर्वव्यापी है। वह बिना आँखों के देखता है, बिना कानों के सुनता है। वह निराकार और अभेद है। वह अजन्मा है, उसके न माता है, न पिता, न सन्तान। फिर भी वह पिता, माता, पत्नी या सन्तान के रूप में पूजा ग्रहण करता है। यहाँ तक कि वह काष्ठ और पाषाण के भी रूप में पूजा-अर्चा को अङ्गीकार करता है, हालाँ कि वह न तो काष्ठ है, न पाषाण आदि ही। वह हाथ नहीं आता—चकमा देकर निकल जाता है। अगर हम उसे पहचान लें तो वह हमारे बिल्कुल नजदीक है। पर अगर हम उसकी सर्वव्यापकता को अनुभव न करना चाहें तो वह हमसे अत्यन्त दूर है।"

—१९।९।'२४, य० इं०। हिं० न० जी० २८।९।'२४, पृष्ठ ५३]

ईश्वरीय प्रकाश की सार्वदेशिकता

"ईश्वरीय प्रकाश किसी एक ही राष्ट्र या जाति की सम्पत्ति नहीं है।"

—१९।९।'२४ य० इं०। हिं० न० जी० २८।९।'२४, पृष्ठ ५३]

ईश्वर

"...ईश्वर न काबा में है, न काशी में है। वह तो घर-घर में व्याप्त है—हर दिल में मौजूद है।"

—य० इं०। हिं० न० जी० १।१।'२५, पृष्ठ १६७]

× × ×

होगा।…… जबतक हम अपने को शून्यता तक नहीं पहुँचा देते तब-तक हम अपने अन्दर के दोषों को नहीं हटा सकते। ईश्वर पूर्ण आत्म-समर्पण के बिना सन्तुष्ट नहीं होता। वास्तविक स्वतन्त्रता का इतना मूल्य वह अवश्य चाहता है। और जिस क्षण मनुष्य इस प्रकार अपने को भुला देता है उसी क्षण वह अपने को प्राणिमात्र की सेवा में लीन पाता है। वह उसके लिए आनन्द और श्रम-परिहार का विषय हो जाती है। तब वह एक बिल्कुल नया मनुष्य हो जाता है और ईश्वर की इस सृष्टि की सेवा में अपने को खपाते हुए कभी नहीं थकता।"

—य० इं० । हिं० न० जी०, २९।१२।'२८, पृष्ठ १४०]

ईश्वर के अस्तित्व की अनुभूति

" मैं धुँधले तौर पर जरूर यह अनुभव करता हूँ कि जब मेरे चारों ओर सब कुछ बदल रहा है, मर रहा है तब भी इन सब परिवर्तनों के नीचे एक जीवित शक्ति है जो कभी नहीं बदलती, जो सबको एक में ग्रथित करके रखती है जो नई सृष्टि करती है, उसका संहार करती है और फिर नये सिरे से पैदा करती है। यही शक्ति ईश्वर है, परमात्मा है। मैं इन्द्रियों से जिनका अनुभव करता हूँ उनमें से और कोई वस्तु टिकी नहीं रह सकती, नहीं रहेगी, इसलिए 'तत्त्व' एक वही है। और यह शक्ति शिव है या अशिव? मैं तो इसे शुद्ध शिव रूप में देखता हूँ क्योंकि मैं देखता हूँ कि मृत्यु के मध्य में जीवन कायम रहता है, असत्य के मध्य सत्य पनपता है अन्धकार के बीच प्रकाश कायम रहता है इसलिए मैं मानता हूँ कि ईश्वर जीवन है, सत्य है, प्रकाश है। वह प्रेम है। वह परम मङ्गल है।"

—कोलम्बिया ग्रामोफोन कम्पनी के एक रेकर्ड में।]

हमारी मजबूरी के कारण उसमे सिर्फ उसी को आनन्द मिलता है। यह सब, हिन्दूधर्म के अनुसार, उसकी लीला है, उसकी माया है। हम कुछ नहीं है, सिर्फ वही है। ”

—य० इ० । हिं० न० जी० ५।३।'२५, पृष्ठ २३८-२३९]

× × ×

“ यदि वह नहीं है तो हम भी नहीं हो सकते है। इसीलिए हम सब उसे एक आवाज मे अनेक और अनन्त नामो से पुकारते है। वह एक है, अनेक है। अणु से भी छोटा और हिमालय से भी बडा है। समुद्र के एक बिन्दु मे भी समा जा सकता है और ऐसा भारी है कि सात समुद्र मिलकर भी उसे सहन नहीं कर सकते। उसे जानने के लिए बुद्धिवाद का उपयोग ही क्या हो सकता है? वह तो बुद्धि से अतीत है। ईश्वर का अस्तित्व मानने के लिए श्रद्धा की आवश्यकता है। . ..मेरी श्रद्धा बुद्धि से भी इतनी अधिक आगे दौडती है कि मै समस्त ससार का विरोध होने पर भी यही कहूँगा कि ईश्वर है, वह है ही है।”

—नवजीवन। हिं० न० जी० २१।१।'२६, पृष्ठ १८१]

× × ×

“ईश्वर प्रकाश है, अन्धकार नहीं। वह प्रेम है, घृणा नहीं। वह सत्य है असत्य नहीं। एक ईश्वर ही महान है। हम उसके बन्दे उसकी चरण रज है।”

—ह० से०, २६।३।'३३]

ईश्वर के प्रति सच्ची श्रद्धा

“ ...यदि हमारे अन्दर सच्ची श्रद्धा है, यदि हमारा हृदय वास्तव मे प्रार्थनाशील है तो हम ईश्वर को प्रलोभन नहीं देंगे, उसके साथ शर्तें नहीं करेंगे। हमें उसके आगे अपने को शून्य—नगण्य—कर देना

से वानर सेना ने रावण के छक्के छुडा दिये, रामनाम के सहारे हनुमान ने पर्वत उठा लिया और राक्षसो के घर अनेक वर्ष रहने पर भी सीता अपने सतीत्व को बचा सकी। भरत ने चौदह साल तक प्राण धारण कर रक्खा, क्योकि उनके कण्ठ से रामनाम के सिवा दूसरा कोई शब्द न निकलता था। इसलिए तुलसीदास ने कहा कि कलिकाल का मल धो डालने के लिए रामनाम जपो।

"इस तरह प्राकृत और सस्कृत दोनो प्रकार के मनुष्य रामनाम लेकर पवित्र होते है। परन्तु पावन होने के लिए रामनाम हृदय से लेना चाहिए, जीभ और हृदय को एक-रस करके रामनाम लेना चाहिए। मै अपना अनुभव सुनाता हूँ। मै ससार मे यदि व्यभिचारी होने से बचा हूँ तो रामनाम की बदौलत! मैने दावे तो बडे-बडे किये है परन्तु यदि मेरे पास रामनाम न होता तो तीन स्त्रियो को मै बहिन कहने के लायक न रहा होता। जब-जब मुझपर विकट प्रसग आये है मैने रामानाम लिया है और मै बच गया हूँ। अनेक सङ्कटो से रामनाम ने मेरी रक्षा की है।

—नवजीवन। हि० न० जी० ३०।४।'२५, पृ० ३००—३०१]

× × ×

"   करोडो के हृदय का अनुसन्धान करने और उनमे ऐक्य भाव पैदा करने के लिए एक साथ रामनाम की धुन-जैसा दूसरा कोई सुन्दर और सरल साधन नही है। कई नौजवान इसपर एतराज करते है कि मुँह से रामनाम बोलने से क्या लाभ जब कि हृदय मे जबर्दस्ती रामनाम की धुन जाग्रत की ही नही जा सकती। लेकिन जिस तरह गायनविद्या-विशारद जबतक सुर नही मिलते तबतक बराबर तार कसता रहता है और ऐसा करते हुए जैसे उसे अकस्मात् ठीक स्वर मिल जाता

जीवन में ईश्वर का स्थान

"आजकल तो यह एक फैशन-सा बन गया है कि जीवन में ईश्व का कोई स्थान नहीं समझा जाता और सच्चे ईश्वर मे अडिग आस्था रखने की आवश्यकता के बिना ही सर्वोच्च जीवन तक पहुँचने पर जोर दिय जाता है। पर मेरा अपना अनुभव तो मुझे इसी ज्ञान पर ले जाता है कि जिसके नियमानुसार सारे विश्व का सञ्चालन होता है उस शाश्वत नियम में अचल विश्वास रक्खे बिना पूर्णतम जीवन सम्भव नहीं है। इस विश्वास से विहीन व्यक्ति तो समुद्र से अलग आ पडने वाल उस बूँद के समान है जो नष्ट होकर ही रहती है।"

—ह० से०, २५।८।'३६, पृष्ठ ७६]

ईश्वर मे विश्वास

"जो लोग ईश्वर के अस्तित्व मे विश्वास नहीं करना चाहते, वे अपने शरीर के सिवा और किसी वस्तु के अस्तित्व मे विश्वास नहीं करते मानवता की प्रगति के लिए ऐसा विश्वास अनावश्यक है। आत्मा य परमात्मा के अस्तित्व के प्रमाण रूप कितनी ही भारी दलील क्यों न हो ऐसे मनुष्यो के लिए वह व्यर्थ ही है। जिस मनुष्य ने अपने कानों में डाट लगा रखी हो, उसे आप कितना ही बढिया सगीत क्यो न सुनायें वह उसकी सराहना तो क्या करेगा उसे सुन भी नहीं सकेगा। इसी तरह जो लोग विश्वास ही नहीं करना चाहते, उन्हे आप प्रत्यक्ष ईश्व के अस्तित्व मे विश्वास करा ही नहीं सकते।"

—ह० से० १३।६।'३६, पृष्ठ १३२]

रामनाम की महिमा

...... रामनाम के प्रताप से पत्थर तैरने लगे, रामनाम के ब

पूजा है। मन्दिर में जाकर ऐसे पत्र करोड़ों लोग प्रतिदिन लिखते हैं और उन्हें श्रद्धा है कि उनके पत्र का उत्तर भगवान ने दे ही दिया है। यह निरपवाद सिद्धान्त है—भक्त भले ही उसका कोई बाह्य प्रमाण न दे सके। उसकी श्रद्धा ही उसका प्रमाण है। उत्तर प्रार्थना में ही सदा से रहा है, भगवान की ऐसी प्रतिज्ञा है।"

—ह० से० ३१।३।'३३]

× × ×

"प्रार्थना का आमन्त्रण निश्चय ही आत्मा की व्याकुलता का द्योतक है। प्रार्थना पश्चात्ताप का एक चिन्ह है। प्रार्थना हमारे अधिक अच्छे, अधिक शुद्ध होने की आतुरता को सूचित करती है।

—ह० से०, २१।६।'३५ पृष्ठ १४४]

प्रार्थना और हृदय का सम्बन्ध

" प्रार्थना या भजन जीभ से नहीं हृदय से होता है। इसी से गूँगे, तुतले, मूढ भी प्रार्थना कर सकते हैं। जीभ पर अमृत हो और हृदय में हलाहल तो जीभ का अमृत किस काम का? कागज के गुलाब में सुगन्ध कैसे निकल सकती है?

—नवजीवन। [हि० न० जी० [illegible] पृष्ठ ४६]

प्रार्थना

" स्तुति उपासना, प्रार्थना अन्ध-विश्वास नहीं बल्कि उतनी अथवा उससे भी अधिक सच बातें हैं, जितना कि हम खाते हैं, पीते हैं, चलते हैं, बैठते हैं, ये सच हैं। बल्कि यों भी कहने में अत्युक्ति नहीं कि यही एक मात्र सच है, दूसरी सब बातें झूठ हैं, मिथ्या हैं।

"ऐसी उपासना, ऐसी प्रार्थना वाणी का वैभव नहीं है। उसका मूल कण्ठ नहीं बल्कि हृदय है। अतएव यदि हम हृदय को निर्मल

है उसी तरह हम भी भावपूर्ण हृदय से रामनाम का उच्चारण करते रहे तो किसी न किसी वक्त अकस्मात् ही हृदय के छुपे हुए तार एकतान हो जायँगे। यह अनुभव मेरे अकेले का नहीं है, कई दूसरों का भी है। मैं खुद इस बात का साक्षी हूँ कि कई-एक नटखट लडको का तूफानी स्वभाव निरन्तर रामनाम के उच्चारण से दूर हो गया और वे रामभक्त बन गये है। लेकिन इसकी एक शर्त है। मुँह से रामनाम बोलते समय वाणी को हृदय का सहयोग मिलना चाहिए क्योंकि भावनाशून्य शब्द ईश्वर के दरबार तक नहीं पहुँचते।"

—नवजीवन। हिं० न० जी०, ७।३।'२९, पृष्ठ २३०। कराची के एक प्रवचन मे।]

प्रार्थना

"... प्रार्थना करना याचना करना नहीं है, वह तो आत्मा की पुकार है।"

—य० इ०। हिं० न० जी०, ३०।९।'२६, पृष्ठ ५२]

×   ×   ×

"... हम जब अपनी असमर्थता खूब समझ लेते हैं और सब कुछ छोड़ कर ईश्वर पर भरोसा करते हैं तो उसी भावना का फल प्रार्थना है।"

—य० इ०। हिं० न० जी० २५।११।'२६; पृष्ठ ११४]

×   ×   ×

"एक मनुष्य को हम पत्र लिखते हैं। उसका भला-बुरा उत्तर [illegible] भी है और नहीं भी मिलता। वह पत्र आखिर कागज का टुकड़ा [illegible]। ईश्वर को पत्र लिखने में न कागज चाहिए, न कलम-दावात ही न शब्द भी। ईश्वर को जो पत्र लिखा जाता है उसका उत्तर न[illegible], वह सम्भव ही नहीं। उस पत्र का नाम पत्र नहीं, प्रार्थना है,

पूजा है। मन्दिर में जाकर ऐसे पत्र करोड़ों लोग प्रतिदिन लिखते हैं और उन्हें श्रद्धा है कि उनके पत्र का उत्तर भगवान ने दे ही दिया है। यह निरपवाद सिद्धान्त है—भक्त भले ही उसका कोई बाह्य प्रमाण न दे सके। उसकी श्रद्धा ही उसका प्रमाण है। उत्तर प्रार्थना में ही सदा से रहा है, भगवान की ऐसी प्रतिज्ञा है।'

—ह० से०, ३१।३।'३३]

× × ×

"प्रार्थना का आमन्त्रण निश्चय ही आत्मा की व्याकुलता का द्योतक है। प्रार्थना पश्चात्ताप का एक चिन्ह है। प्रार्थना हमारे अधिक अच्छे, अधिक शुद्ध होने की आतुरता को सूचित करती है।"

—ह० से०; २१।६।'३५ पृष्ठ १४४]

प्रार्थना और हृदय का सम्बन्ध

" प्रार्थना या भजन जीभ से नहीं हृदय से होता है। इसी से गूँगे, तुतले, मूढ़ भी प्रार्थना कर सकते हैं। जीभ पर अमृत हो और हृदय में हलाहल तो जीभ का अमृत किस काम का? कागज के गुलाब से सुगन्ध कैसे निकल सकती है?'

—नवजीवन । हि० न० जी०, २२।१।'२७, पृष्ठ ४४]

प्रार्थना

" स्तुति, उपासना, प्रार्थना अन्धविश्वास नहीं, बल्कि उतनी अथवा उससे भी अधिक सच बातें हैं, जितना कि हम खाते हैं, पीते हैं, चलते हैं, बैठते हैं, ये सच हैं। बल्कि यों भी कहने में अत्युक्ति नहीं कि यही एक मात्र सच है, दूसरी सब बातें झूठ हैं, मिथ्या हैं।

"ऐसी उपासना, ऐसी प्रार्थना वाणी का वैभव नहीं है। इसका मूल कण्ठ नहीं, बल्कि हृदय है। अतएव यदि हम हृदय को निर्म

है उसी तरह हम भी भावपूर्ण हृदय से रामनाम का उच्चारण करते रहें तो किसी न किसी वक्त अकस्मात् ही हृदय के छुपे हुए तार एकतान हो जायेंगे। यह अनुभव मेरे अकेले का नहीं है, कई दूसरों का भी है। मैं खुद इस बात का साक्षी हूँ कि कई-एक नटखट लड़कों का तूफानी स्वभाव निरन्तर रामनाम के उच्चारण से दूर हो गया और वे रामभक्त बन गये हैं। लेकिन इसकी एक शर्त है। मुँह से रामनाम बोलते समय वाणी को हृदय का सहयोग मिलना चाहिए क्योंकि भावनाशून्य शब्द ईश्वर के दरबार तक नहीं पहुँचते।"

—नवजीवन। हिं० न० जी०, ७।३।'२९, पृष्ठ २३०। कराची के एक प्रवचन में।]

प्रार्थना

"प्रार्थना करना याचना करना नहीं है, वह तो आत्मा की पुकार है।"

—य० इं०। हिं० न० जी०, ३०।९।'२६, पृष्ठ ५०]

×   ×   ×

"... हम जब अपनी असमर्थता खूब समझ लेते हैं और सब कुछ छोड़कर ईश्वर पर भरोसा रखते हैं तो उसी भावना का फल प्रार्थना है।"

—य० इं०। हिं० न० जी० २५।११।'२६; पृष्ठ ११४]

×   ×   ×

"एक मनुष्य को हम पत्र लिखते हैं। उसका भला बुरा उत्तर मिलता भी है और नहीं भी मिलता। वह पत्र आखिर कागज का टुकड़ा ही है। ईश्वर को पत्र लिखने में न कागज चाहिए, न कलम-दावात ही और न शब्द ही। ईश्वर को जो पत्र लिखा जाता है उसका उत्तर न मिले, यह सम्भव ही नहीं। उस पत्र का नाम पत्र नहीं, प्रार्थना है,

त्याग हिमालय के शिखर पर भी नहीं है। हृदय की गुफा ही सच्ची गुफा है। मनुष्य को चाहिये कि वह उसमे छुपकर, सुरक्षित रहकर, ससार मे रहते हुए भी उससे अलिप्त रहे और अनिवार्य कामो में प्रवृत्त होते हुए विचरण करे।"

—नवजीवन। हि० न० जी० २०।८।'२५, पृष्ठ ३]

भ्रमात्मक वस्तुएं

" शरीर यदि मोक्ष मे बाधक होता हो तो वह भ्रमात्मक है। इसी प्रकार आत्मा की गति को जितनी चीज रोकती है, वे भ्रमात्मक है।"

—नवजोवन। हि० न० जी० २।११।'२४, पृष्ठ ९०। श्री रामचन्द्रन से बातचीत के सिलसिले में]

मृत्यु

" सच पूछा जाय तो कहना होगा कि मौत ईश्वर की अमर देन है। काम करनेवाला शरीर चेतना शून्य हो जाता है और उसमे रहने वाला पखी उड जाता है। जब तक इस पखी की मौत नही आती तब तक शोक करने का सवाल ही नही उठता।'

—नवजीवन। हि० न० जी०, ७।३।'२९ पृष्ठ २२६। अपने पोते रसिक की मृत्यु के सम्बन्ध मे]

सच्चा हिमालय हृदय मे है।

" सच्चा हिमालय हमारे हृदयो मे है। इस हृदय रूपी गुफा मे छिपकर उसमे शिवदर्शन करना ही सच्ची यात्रा है, यही पुरुषार्थ है।

—नवजीवन। हि० न० जी० १८।७।'२९ पृ० २८२]

मानव जीवन का लक्ष्य

" मनुष्य जीवन का उद्देश्य आत्मदर्शन है और उसकी सिद्धि का मुख्य एव एक मात्र उपाय पारमार्थिक भाव से जीवमात्र की सेवा करना है उसमे तन्मयता तथा अद्वैत के दर्शन करना है।

—ह० न० ज० [illegible] ।८।'[illegible] पृ० [illegible]]

बना ले, उसके तारो का सुर मिला ले तो उसमें से जो सुर निकलता है वह गगनगामी हो जाता है। उसके लिए जीभ की आवश्यकता नही। यह तो स्वभावतः ही अद्‌भुत वस्तु है। विकार रूपी मल की शुद्धि के लिए हार्दिक उपासना एक जीवन-जडी है। · ”

—हिन्दी आत्मकथा, भाग १, अध्याय २२, पृष्ठ ८२-८३, सस्ता सस्करण, १९३९]

प्रार्थना और उपवास

“अर्थहीन स्तोत्र-पाठ प्रार्थना नहीं है, न शरीर को भूखों मारना उपवास है। प्रार्थना तो उसी हृदय से निकलती है जिसे कि ईश्वर का श्रद्धापूर्वक ज्ञान है, और उपवास का अर्थ है बुरे या हानिकारक विचार, कर्म या आहार से परहेज रखना। मन तो विविध प्रकार के व्यञ्जनों की ओर दौड रहा है, और शरीर को भूखो मारा जा रहा है, तो ऐसा उपवास तो निरर्थक व्रत-उपवास से भी बुरा है।”

—ह० से० १०।४।’३७, पृष्ठ ६२]

प्रार्थना—हार्दिक

“ ··प्रार्थना लाज़िमी हो ही नहीं सकती। प्रार्थना तभी प्रार्थना है, जब वह अपने आप हृदय से निकलती है।···”

—नई दिल्ली, १।७।’४०, ह० से० ६।७।’४०; पृष्ठ १७१]

आत्मबल का अस्तित्व

“· · आत्मबल की सफलता का सबसे बड़ा प्रमाण तो यही है कि इतने युद्धों के बावजूद दुनिया अभी कायम है। इससे यह स्पष्ट है कि युद्ध-बल के बजाय कोई और बल ही उसका आधार है।”

—१९०८, ‘हिन्द स्वराज्य’]

हृदय की गुफा ही सच्ची गुफा है

“· · ममत्व का आत्यन्तिक त्याग ही मोक्ष प्राप्ति है। संसार का सर्वथा

त्याग हिमालय के शिखर पर भी नही है। हृदय की गुफा ही सच्ची गुफा है। मनुष्य को चाहिये कि वह उसमे छुपकर, सुरक्षित रहकर, ससार मे रहते हुए भी उससे अलिप्त रहे और अनिवार्य कामो मे प्रवृत्त होते हुए विचरण करे।"

—नवजीवन। [हि० न० जी० २०।८।'२५ पृष्ठ ३]

भ्रमात्मक वस्तुएं

" शरीर यदि मोक्ष मे बाधक होता हो तो वह भ्रमात्मक है। इसी प्रकार आत्मा की गति को जितनी चीज रोकती है, वे भ्रमात्मक है।"

—नवजीवन। [हि० न० जी० २।११।'२४, पृष्ठ ९०। श्री रामचन्द्रन से बातचीत के सिलसिले में]

मृत्यु

" सच पूछा जाय तो कहना होगा कि मौत ईश्वर की अमर देन है। काम करनेवाला शरीर चेतना शून्य हो जाता है और उसमे रहने वाला पक्षी उड जाता है। जब तक इस पक्षी की मौत नही आती तब तक शोक करने का सवाल ही नही उठता।"

—नवजीवन। [हि० न० जी०, ७।३।'२९, पृष्ठ २२८। अपने पोते रसिक की मृत्यु के सम्बन्ध में]

सच्चा हिमालय हृदय मे है

" · सच्चा हिमालय हमारे हृदयो मे है। इस हृदय रूपी गुफा मे छिपकर उसमे शिवदर्शन करना ही सच्ची यात्रा है यही पुरुषार्थ है।"

—नवजीवन। [हि० न० जी० १८।७। [illegible]]

मानव जीवन का लक्ष्य

" · मनुष्य जीवन का उद्देश्य आत्मदर्शन है और उसकी सिद्धि का मुख्य एव एक मात्र उपाय पारमार्थिक भाव से जीवमात्र की सेवा करना है उसमे तन्मयता तथा [illegible] के दर्शन करना है।

—[हि० न० जी० [illegible]]

अन्तरात्मा का जागरण

"...अन्तरात्मा तो अभ्यास से जाग्रत होती है। वह मनुष्य-मात्र में स्वभावतः जाग्रत नहीं होती। इसके अभ्यास के लिए बहुत पवित्र वायुमण्डल की जरूरत रहती है, सतत प्रयत्न की जरूरत होती है। यह अत्यन्त नाजुक चीज है।.. अन्तःकरण क्या चीज है? परिपक्व बुद्धि के रास्ते हमारे अन्तरपट पर पडनेवाली प्रतिध्वनि।"

—नवजीवन। हिं० न० जी०, २४।८।'२४, पृष्ठ ११]

अन्तर्नाद

"मैं मानता हूँ कि सत्य का तादृश ज्ञान, सत्य का साक्षात्कार ही अन्तर्नाद है।"

—ह० से०, १०।११।'३३]

आत्मशान्ति का उपाय

" साधुजीवन में ही आत्म-शान्ति की प्राप्ति सम्भव है। यही इह-लोक और परलोक, दोनों का, साधन है। साधु जीवन का अर्थ है, सत्य और अहिंसामय जीवन, संयमपूर्ण जीवन। भोग कभी धर्म नहीं बन सकता, धर्म की जड तो त्याग में ही है।"

—हिं० न० जी०, १५।८।'२९, पृष्ठ ४१२]

सब कुछ हमारे अन्दर है!

"स्वर्ग और पृथिवी सब हमारे ही अन्दर है। हम पृथिवी से तो परिचित हैं पर अपने अन्दर के स्वर्ग से बिल्कुल अपरिचित हैं।"

—ह० से०। २६।९।'३६, पृष्ठ २५२-२५३]

मानव की तात्त्विक एकता

"धर्म तो सिखाता ही है कि जीवमात्र अन्त में एक ही हैं। अनेकता क्षणिक होने के कारण आभास मात्र है। लेकिन राष्ट्र-भावना भी हमें यही पाठ देती है।"

—ह० से० १।७।'३६, पृष्ठ १७६]

: ४ :

हृद्गत भाव-तत्त्व

\

आशावाद

"आशावाद आस्तिकता है। सिर्फ नास्तिक ही निराशावादी हो सकता है। आशावादी ईश्वर का डर मानता है, विनयपूर्वक अपना अन्तरनाद सुनाता है, उसके अनुसार बरतता है और मानता है कि 'ईश्वर जो करता है वह अच्छे के ही लिए करता है'।"

× × ×

आशावादी प्रेम में मगन रहता है। किसी को अपना दुश्मन नहीं मानता। इससे वह निडर होकर जङ्गलों और गाँवों में सैर करता है। भयानक जानवरों तथा ऐसे जानवरों–जैसे मनुष्यों से भी वह नहीं डरता क्योंकि उसकी आत्मा को न तो साँप काट सकता है और न पापी का खञ्जर ही छेद सकता है। शरीर की तो वह चिन्ता ही नहीं करता क्योंकि वह तो काया को काँच की बोतल समझता है। वह जानता है कि एक न एक दिन तो वह फूटने वाली ही है। इसलिए वह उसकी रक्षा के निमित्त संसार को पीड़ित नहीं करता···।

—नवजीवन। हिं० न० जी० २८।१०।'२१]

शान्ति पत्थर की नहीं, हृदय की

"मैं शान्ति-परायण मनुष्य हूँ। शान्ति में मेरा विश्वास है। लेकिन मैं चाहे जो कीमत देकर शान्ति नहीं खरीदना चाहता। आप पत्थर में जो शान्ति पाते हैं वह मुझे नहीं चाहिये। जिसे आप कब्र में देखते हैं वह शान्ति मैं नहीं चाहता। लेकिन मैं वह शान्ति अवश्य चाहता हूँ जो

मनुष्य के हृदय मे सन्निहित है, और सारी दुनिया के वार करने के लिए उद्यत होते हुए भी सर्वशक्तिमान ईश्वर की शक्ति जिसकी रक्षा करती है।"

—'सर्वोदय', एप्रिल, ३९, पृष्ठ ३७]

श्रद्धा का अर्थ

" श्रद्धा का अर्थ है आत्म-विश्वास, और आत्म-विश्वास का अर्थ है ईश्वर पर विश्वास। जब चारो ओर काले बादल दिखाई देते हो किनारा कहीं नजर न आता हो और ऐसा मालूम होता हो कि बस अब डूबे, तब भी जिसे यह विश्वास होता है कि मे हर्गिज न डूबूँगा उसे कहते है श्रद्धावान।'

—पूना की सभा में। नवजीवन। हिं० न० जी०, १४।९।'२४, पृष्ठ ३८)

श्रद्धा

" काशी विश्वनाथ की भव्य मूर्ति मो० हसरत मोहानी के नजदीक एक पत्थर का टुकड़ा हो पर मेरे लिए तो वह ईश्वर की प्रतिमा है। मेरा हृदय उसका दर्शन करके द्रवित होता है। यह श्रद्धा की बात है। जब मै गाय का दर्शन करता हूँ तब मुझे किसी भक्ष्य पशु का दर्शन नहीं होता, उसमे मुझे एक करुण काव्य दिखाई देता है। मै उसकी पूजा करूँगा और फिर करूँगा और यदि सारा जगत् मेरे खिलाफ उठ खड़ा हो तो उसका मुकाबला करूँगा। ईश्वर एक है पर वह मुझे पत्थर की पूजा करने की श्रद्धा प्रदान करता है।'

—हिं० न० जी०, ८।१।'२५, पृष्ठ १७८]

× × ×

" मै यह कहने का साहस करता हूँ कि श्रद्धा और विश्वास न रहे तो क्षण भर मे प्रलय हो जाय। सच्ची श्रद्धा के मानी। इन लोगों के

युक्तियुक्त अनुभवो का आदर करना जिनके विषय मे हमारा विश्वास है कि उन्होने तपस्या और भक्ति से पवित्र जीवन विताया है। इसलिए प्राचीन काल के अवतारो या नवियो मे विश्वास करना कुछ बेमतलब वहम नही है, वल्कि यह है आत्मा की आन्तरिक भूख की सन्तुष्टि।"

—य० इं० । हि० न० जी० १४।४।'२७, पृष्ठ २७६]

× × ×

"॰ श्रद्धा वह वस्तु है जिसकी केवल आशा ही की जाती है; उन वस्तुओ का प्रमाण है जो देखी नही जा सकती।"

—य० इ० । हि० न० जी० २६।१।'२८, पृष्ठ १८८]

श्रद्धा, अन्ध श्रद्धा नही

"···मेरी श्रद्धा तो ज्ञानमयी और विवेकपूर्ण है। जो बुद्धि का विषय है, वह श्रद्धा का विषय कदापि नहीं हो सकता। इसलिए अन्ध-श्रद्धा श्रद्धा ही नही।"

—हि० न० जी०, २९।८।'२९; पृष्ठ १२]

श्रद्धा का महत्व

"जहाँ बड़े बड़े बुद्धिमानों की बुद्धि काम नहीं करती, वहाँ एक श्रद्धावान की श्रद्धा काम कर जाती है। दूसरो की आँख जहाँ चकाचौंध मे पड़ जाती है, वहाँ श्रद्धालु की आँख स्पष्ट रूप से दीपकवत् सब देख लेती है। जहाँ श्रद्धा है, वहाँ पराजय नही। श्रद्धालु का अकर्म भी कर्म हो जाता है।"

—ह० से०, २१।४।'३३]

भक्ति बुद्धि का विषय नहीं

"भक्ति-धर्म स्पर्श से नहीं बढ़ सकती। वह बुद्धि का विषय नहीं

है। वह तो हृदय की गुफा में से ही निकल सकती है, और जब वहाँ से फूट निकलेगी, तब उसके प्रवाह को कोई भी शक्ति नहीं रोक सकेगी। गंगा के प्रबल प्रवाह को कौन रोक सकता है।"

—ह० से०, ५।५।'३३]

बुद्धि कर्मानुसारिणी है

" प्रथम हृदय है, और फिर बुद्धि। प्रथम सिद्धान्त और फिर प्रमाण। प्रथम स्फुरणा और फिर उसके अनुकूल तर्क। प्रथम कर्म और फिर बुद्धि। इसीलिए बुद्धि कर्मानुसारिणी कही गई है। मनुष्य जो भी करता है या करना चाहता है उसका समर्थन करने के लिए प्रमाण भी ढूँढ निकालता है।"

—नवजीवन। हिं० न० जी०, १५।१०।'२५ पृष्ठ ६८]

बुद्धि की मर्यादा

" बुद्धिवाद को तब भयङ्कर राक्षस का नाम देना चाहिए जब वह सर्वज्ञता का दावा करने लगे। बुद्धि को ही सर्वज्ञ मानना उतनी ही बुरी मूर्ति-पूजा है जितनी ईंट पत्थर को ही ईश्वर मानकर पूजा करना।"

—य० इं०। हिं० न० जी०, १४।१०।'२६, पृष्ठ ६९।

× × ×

" निरी व्यावहारिक बुद्धि तो सत्य का आवरण है। वह तो हिरण्मय पात्र है जो सत्य के रूप को ढक देता है। ऐसी बुद्धि से तो हजारों चीजें पैदा हो जायेंगी। उनमें एक ही चीज बचायेगी—श्रद्धा।

—गांधी सेवा संघ सम्मेलन, डेलांग [illegible]]

बुद्धि बनाम श्रद्धा

" मैं अपने उन पाठकों के सामने भी इसे ([illegible]) ऐसा

करता हूँ जिनकी दृष्टि धुँधली न हुई हो और जिनकी श्रद्धा बहुत विद्वत्ता प्राप्त करने से मन्द न हो गई हो। विद्वत्ता हमें जीवन की अनेक अवस्थाओं से सफलतापूर्वक निकाल ले जाती है पर सङ्कट और प्रलोभन के समय वह हमारा साथ बिल्कुल नहीं देती। उस हालत में अकेली श्रद्धा ही उबारती है। रामनाम उन लोगों के लिए नहीं है जो ईश्वर को हर तरह से फुसलाना चाहते हैं और हमेशा अपनी रक्षा की आशा उससे लगाये रहते हैं। यह उन लोगों के लिए है जो ईश्वर से डरकर चलते हैं, और जो संयमपूर्वक जीवन बिताना चाहते हैं पर अपनी निर्बलता के कारण उसका पालन नहीं कर पाते।"

—यं० इं० २२।१।'२५, पृष्ठ २७]

× × ×

" जिस विषय में बुद्धि का प्रयोग किया जा सकता है वहाँ केवल श्रद्धा से हम नहीं चल सकते हैं। जो बातें बुद्धि से परे हैं उन्हीं के लिए श्रद्धा का उपयोग है।"

—नवजीवन। हि० न० जी०, २८।६।'२६, पृष्ठ ३५३]

× × ×

"...... श्रद्धा और बुद्धि के क्षेत्र भिन्न भिन्न हैं। श्रद्धा से अन्तर्ज्ञान, आत्मज्ञान की वृद्धि होती है, इसलिए अन्तःशुद्धि तो होती ही है। बुद्धि से बाह्य ज्ञान की, सृष्टि के ज्ञान की वृद्धि होती है परन्तु उसका अन्तःशुद्धि के साथ कार्यकारण-जैसा कोई सम्बन्ध नहीं रहता। अत्यन्त बुद्धिशाली लोग अत्यन्त चरित्रभ्रष्ट भी पाये जाते हैं मगर श्रद्धा के साथ चरित्रशून्यता असम्भव है।"

—हि० न० जी० १०।१।'२७, पृष्ठ ३६]

× × ×

" जिसमे शुद्ध श्रद्धा है, उसकी बुद्धि तेजस्वी रहती है। वह स्वय अपनी बुद्धि से जान लेता है कि जो वस्तु बुद्धि से भी अधिक है— परे है—वह श्रद्धा है। जहाँ बुद्धि नहीं पहुँचती वहाँ श्रद्धा पहुँच जाती है। बुद्धि की उत्पत्ति का स्थान मस्तिष्क है, श्रद्धा का हृदय। और यह तो जगत् का अविच्छिन्न अनुभव है कि बुद्धि-बल से हृदय-बल सहस्रगुना अधिक है। श्रद्धा से जहाज चलते हैं, श्रद्धा से मनुष्य पुरुषार्थ करता है, श्रद्धा से वह पहाड़ों को हिला सकता है। श्रद्धावान को कोई पराजित नहीं कर सकता बुद्धिमान को हमेशा पराजय का डर रहता है।"

—हिं० न० जी०, १०।१।'२० पृष्ठ ३६]

प्रेम-तत्व

" प्रेम तत्व ही संसार पर शासन करता है। मृत्यु से घिरा रहते हुए भी जीवन अटल रहता है। विनाश के निरन्तर जारी रहते हुए भी यह विश्व बराबर चलता ही रहता है। असत्य पर सत्य सदा जय पाता है प्रेम घृणा को जीत लेता है। ईश्वर शैतान पर सदैव विजय पाता है।"

—प० इ० । [हिं० न० जी०, [illegible], पृ० ८४]

प्रेम-बन्धन

" हर एक धर्म पुकार-पुकारकर कहता है कि प्रेम की ग्रन्थि से ही जगत् बँधा हुआ है। विज्ञान लोग यह सिखाते हैं कि यदि प्रेम बन्धन न हो तो पृथ्वी का एक-एक परमाणु अलग-अलग हो जाय और पानी में भी यदि स्नेह न हो तो उसका एक-एक बिन्दु अलग-अलग हो जाय। इसी प्रकार यदि मनुष्य मनुष्य के बीच प्रेम न होगा तो हम नष्टप्राय हो रहे [illegible]

—हिं० न० जी० [illegible]

विकारयुक्त प्रेम

"जो प्रेम पशुवृत्ति की तृप्ति पर आश्रित है वह आखिर स्वार्थ ही है और थोडे से भी दबाव से वह ठण्डा पड सकता है ।"

—य० इं० । हिं० न० जी०, १६।९।'२६ पृष्ठ ३६]

उन्मुक्त प्रेम

"गुप्त या खुले स्वतन्त्र प्रेम मे मेरा विश्वास नही है । उन्मुक्त प्रेम को मै कुत्तो का प्रेम समझता हूँ । और गुप्त प्रेम मे तो, इसके अलावा कायरता भी है ।"

—ह० से०, ४।११।'३९, पृष्ठ ३०३]

वज्रादपि कठोराणि, मृदूनि कुसुमादपि

"प्रेम की मेरी कल्पना यह है कि वह कुसुम से भी कोमल और वज्र से भी कठोर हो सकता है ।"

—ह० से०, १३।१।'४०, पृष्ठ ३८६]

प्रेम निर्भय है

"तुम्हारे डर मे भी तुम्हारा अभिमान है इसमे हिंसा है । जहाँ प्रेम है, तहाँ डर को स्थान ही कहाँ है ?

—ह० से०, २७।७।'४०, पृष्ठ २०६, श्री प्यारेलाल के लेख से]

विकार

"विकार आग की तरह है । वह मनुष्य को घास की तरह जलाता है । घास के ढेर मे एक तिनके को सुलगा दीजिये, बस सारा ढेर सुलग जायगा । हर एक तिनके को अलग अलग जलाने का कष्ट हमे नहीं उठाना पडता । एक के मन मे विकार उत्पन्न हुआ तो उसका स्पर्श दूसरे को होता है । दम्पती मे एक के विकार उत्पन्न होने

शील बन सकता है। मूक रूप मे की जानेवाली हार्दिक प्रार्थना का मुझे तो यही अर्थ मालूम पडता है। अगर मनुष्य ईश्वर की मूर्ति का उपासक है तो उसे अपने मर्यादित क्षेत्र के अन्दर किसी बात की इच्छा भर करने की देर है, जैसा वह चाहता है वैसा ही बन जाता है। जिस तरह चूनेवाले नल मे भाफ रखने से कोई शक्ति पैदा नहीं होती उसी प्रकार जो अपनी शक्ति का किसी भी रूप में क्षय होने देता है उसमे इस शक्ति का होना असम्भव है।"

—ह० से०, २३।७।'३८, पृष्ठ १८०]

ब्रह्मचर्य का आचरण

"…ब्रह्मचारी रहने का यह अर्थ नहीं कि मै किसी स्त्री को स्पर्श न करूँ, अपनी बहिन का स्पर्श न करूँ। ब्रह्मचारी होने का अर्थ यह है कि स्त्री का स्पर्श करने से किसी प्रकार का विकार न उत्पन्न हो जिस तरह कि कागज को स्पर्श करने से नहीं होता। मेरी बहिन बीमार हो और उसकी सेवा करते हुए, उसका स्पर्श करते हुए ब्रह्मचर्य के कारण मुझे हिचकना पडे तो वह ब्रह्मचर्य तीन कौडी का है। जिस निर्विकार दशा का अनुभव हम मृत शरीर को स्पर्श करके कर सकते हैं उसी का अनुभव जब हम किसी सुन्दरी युवती का स्पर्श करके कर सकें तभी हम ब्रह्मचारी हैं।"

—हि० न० जी० २८।२।'२५, पृष्ठ २३३, मादरण में एक अभिनन्दनपत्र के उत्तर में]

सेवा के लिए ब्रह्मचर्य

"…… देश-सेवा के लिए जो लोग सत्याग्रही होना चाहते हैं उन्हें

ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए, सत्य का सेवन तो करना ही चाहिए और निर्भय बनना चाहिए।"

—१९०८, 'हिन्द स्वराज्य']

ब्रह्मचर्य और आस्तिकता

"मुझे यह बात कहनी ही होगी कि ब्रह्मचर्य-व्रत का तबतक पालन नहीं हो सकता जबतक कि ईश्वर में, जो कि जीता जागता सत्य है, अटूट विश्वास न हो।"

—ह० से०, २०।४।'३६, पृष्ठ ७६]

अस्वाद

"अस्वाद का अर्थ होता है स्वाद न लेना। स्वाद माने रस। किसी भी वस्तु को स्वाद के लिए चखना (अस्वाद) व्रत का भङ्ग है।

—यरवदा जेल, १२।८।'३०]

स्वाद का उद्गम

"स्वाद का सच्चा स्थान जीभ नहीं बल्कि मन है।"

—हिन्दी आत्मकथा, भाग १, अध्याय १७, पृष्ठ ६४ सस्ता संस्करण १९२९]

अस्तेय

"जिस चीज की हमें जरूरत नहीं है उसे जिसके अधिकार में वह हो उसके पास से उसकी आज्ञा लेकर भी लेना चोरी है। अनावश्यक एक भी वस्तु न लेनी चाहिए। ... मन से हमने किसी की वस्तु प्राप्त करने की इच्छा की या उसपर जूठी नजर डाली तो वह चोरी है।

—यरवदा जेल १९।८।३०]

अपरिग्रह आत्यन्तिक

"... आदर्श आत्यन्तिक अपरिग्रह तो उसी का होगा जो मन से

करता है। यदि सब अपनी रोटी के लिए खुद मिहनत करें तो ऊँच-नीच का भेद दूर हो जाय। जिसे अहिंसा का पालन करना है, सत्य की आराधना करनी है, ब्रह्मचर्य को स्वाभाविक बनाना है उसके लिए तो कायिक श्रम रामबाण है।"

—यरवदा जेल, ६।९।'३०]

आलस्य

"... जो सत्य और अहिंसा का उपासक है, भारत और जीवमात्र की सेवा करना चाहता है, वह सुस्त नहीं रह सकता। जो समय का नाश करता है वह सत्य, अहिंसा और सेवा का भी नाश करता है।..."

—गांधी सेवा संघ सम्मेलन, सावली, ३ मार्च, '३६]

× × ×

"...आलस्य एक प्रकार की हिंसा है।"

—तृतीय गांधी सेवा संघ सम्मेलन, हुदली, १७ अप्रैल, '३७]

अस्पृश्यता

"... अस्पृश्यता स्वयं एक असत्य है। असत्य का समर्थन कभी सत्य से नहीं हुआ, जैसे कि सत्य का समर्थन असत्य से नहीं हो सकता। अगर होता है तो वह स्वयं असत्य हो जाता है।"

—ह० से० २३।०।'३९, पृष्ठ २५४]

धार्मिक सहिष्णुता

"... ...इस समय आवश्यकता इस बात की नहीं है कि सब का धर्म एक बना दिया जाय बल्कि इस बात की है कि भिन्न-भिन्न धर्मों के अनुयायी और प्रेमी परस्पर आदर भाव और सहिष्णुता रखें। हम सब धर्मों को मृतवत् एक सतह पर लाना नहीं चाहते। बल्कि चाहते हैं

विविधता मे एकता। पूर्व परम्परा तथा आनुवंशिक सस्कार, जलवायु और दूसरी आसपास की बातो के प्रभाव को उन्मूलित करने का प्रयत्न केवल असफल ही नही बल्कि अधर्म्य होगा। आत्मा सब धर्मो की एक है, हॉ वह भिन्न-भिन्न आकृतियो मे मूर्तिमान होती है। और यह बात काल के अन्त तक कायम रहेगी। इसलिए जो बुद्धिमान है वे तो ऊपरी कलेवर पर ध्यान न देकर भिन्न-भिन्न आकृतियो मे उसी एक आत्मा का दर्शन करेगे।'

—१०।९।'२४। य० इ०। हि० न० जी० २८।९।'२४, पृष्ठ ५३-५४]

सर्वधर्म सम भाव

" सभी धर्म ईश्वरदत्त है परन्तु वे मनुष्य-कल्पित होने के कारण अपूर्ण है। ईश्वरदत्त धर्म अगम्य है। मनुष्य उसे भाषा मे प्रकट करता है। उसका अर्थ भी मनुष्य लगाता है। किसका अर्थ सच्चा माना जाय? सब अपनी-अपनी दृष्टि से, जब तक वह दृष्टि बनी रहे, सच्चे है। परन्तु सभी का गलत होना भी असम्भव नहीं है। इसीलिए हमे सब धर्मों के प्रति समभाव रखना चाहिए। इससे अपने धर्म के प्रति उदासीनता नही उत्पन्न होती, परन्तु स्वधर्म विषयक प्रेम अन्ध प्रेम न रहकर ज्ञानमय हो जाता है। सब धर्मों के प्रति समभाव आने पर ही हमारे दिव्य चक्षु खुल सकते है। धर्मान्धता और दिव्यदर्शन मे उत्तर दक्षिण जितना अन्तर है।"

—यरवडा जेल, [illegible]।१।३०]

परस्पर-सहिष्णुता आचार-धर्म का सुवर्ण सूत्र

"आचारधर्म का सुवर्णसूत्र है परस्पर सहिष्णुता। क्योंकि यह असम्भव है कि हम सब एक ही तरह विचार करे। हम तो अपने भिन्न [illegible] दृष्टिकोणो से सत्य को अंशतः ही देख सकते है। [illegible] विवेक-बुद्धि सबके लिए एक ही वस्तु नही होती। इसलिए यह व्यक्तिगत आचरण के

बहुत अच्छा पथप्रदर्शक जरूर है। लेकिन उस आचार को बलपूर्वक सब लोगों पर लादना व्यक्तिमात्र के बुद्धि-स्वातन्त्र्य मे अक्षम्य और असह्य हस्तक्षेप है।"

—'सर्वोदय', नवम्बर, '३८; पृष्ठ २२ के नीचे का उद्धरण]

उपवास का रहस्य

" ··मैं जानता हूँ कि मानसिक अवस्था ही सब कुछ है। जैसे प्रार्थना किसी पक्षी के कलरव की तरह भक्तिशून्य हो सकती है वैसे ही उपवास भी शारीरिक कष्ट के अतिरिक्त कुछ नहीं हो सकता। ·· जैसे प्रार्थना के केवल गायन से कण्ठ अच्छा हो सकता है वैसे ही उपवास से भी देह-शुद्धि हो सकती है। किन्तु आत्मा पर तो दोनो का असर कुछ नहीं होगा।

"किन्तु जब पूर्ण आत्म-प्रकाशन के हेतु उपवास किया जाता है, जब शरीर पर आत्मा का प्रभुत्व प्रस्थापित करने के हेतु उपवास काम मे लाया जाता है तब उसका मनुष्य की प्रगति मे अत्यन्त महत्वपूर्ण भाग हो जाता है।"

—यं० इं० । हि० न० जी० १५।२।'२२, पृष्ठ ११५]

उपवास

"उपवास सत्याग्रह के शस्त्रागार मे एक महान् शक्तिशाली अस्त्र है। इसे हर कोई नहीं चला सकता। केवल शारीरिक योग्यता इसके लिए कोई योग्यता नहीं। ईश्वर मे जीती जागती श्रद्धा न हो तो दूसरी योग्यताएँ बिल्कुल निरुपयोगी हैं। विचार-रहित मनोदशा या निरी अनुकरण वृत्ति से वह कभी नहीं होना चाहिए। वह तो अपनी अन्तरात्मा की गहराई में से उठना चाहिए।'

—ह० से०, २५।३।'३९, पृष्ठ ४८]

: ६ :

साधना-पथ

साध्य-साधन सम्बन्ध

"साधन बीज है और साध्य वृक्ष। इसलिए जो सम्बन्ध बीज और वृक्ष में है, वही सम्बन्ध साधन और साध्य में है। शैतान की उपासना करके मैं ईश्वर-भजन का फल नहीं पा सकता।"

—१९०८, 'हिन्द स्वराज्य']

साधनों में क्रान्ति

"कुछ लोग मुझे अपने जमाने का सब से बड़ा क्रान्तिकारी मानते हैं। शायद यह गलत भी हो, लेकिन फिर भी मैं अपने आपको एक क्रान्तिकारक—शान्तिपरायण क्रान्तिकारक तो मानता ही हूँ। कहा जाता है कि आखिर साधन तो साधन ही है। मैं कहूँगा कि अन्त में साधन ही सब कुछ है। जैसा साधन वैसा साध्य। साध्य और साधन में कोई अभेद्य दीवार नहीं है। जिस अनुपात में साधन का अनुष्ठान होगा ठीक उसी अनुपात में ध्येय प्राप्ति होगी। यह नियम निरपवाद है।"

—'सर्वोदय', अक्तूबर,' ३८, अन्तिम कवरका उद्धरण]

साध्य-साधन का अभेद

'अहिंसा सत्य की गवेषणा का अधिष्ठान है। अहिंसा और सत्य एक दूसरे के साथ इस तरह गुंथे हुए हैं कि उनको खोलकर अलग-अलग करना बहुत मुश्किल है। वे सिक्के की दो बाजुओं के समान हैं, बल्कि यों कहिये कि वे एक धातु की गोल, चिकनी और बिना छापवाली चकती की दो बाजुएँ हैं। कौन कह सकता है कि उनमें से कौन सी सीधी और कौन-सी उलटी है? फिर भी अहिंसा साधन है और सत्य साध्य।

साधन का साधनत्व इसी मे है कि वह अव्यवहार्य न हो। इसलिए अहिंसा हमारा परम धर्म है। यदि हम साधन की रक्षा करे तो आज नही तो कल हम साध्य को प्राप्त कर ही लेगे। • ”

—'सर्वोदय', नवम्बर, ३८ पहले कवर का उद्धरण]

दिव्य जीवन-धर्म

"मेरा यह अनुभव है कि विनाश के बीच भी जीवन कायम रहता है। इसलिए विनाश से बढ़कर कोई कुदरती कानून जरूर है। ऐसे कानून के आधार पर ही सुव्यवस्थित समाज का अस्तित्व समझ मे आ सकता है, और जीवन सुलभ हो सकता है। ज्यो ज्यो मे इस कानून पर अमल करता हूँ, त्यो-त्यो मुझे जिन्दगी मे मजा आता है, सृष्टि की रचना मे आनन्द आता है। उसमे मुझे जो शान्ति मिलती है, और प्रकृति के गूढ़ भाव समझने की जो शक्ति प्राप्त होती है, उसका वर्णन करना मेरी शक्ति से परे है।

जगत् का नियमन प्रेम धर्म करता है। मृत्यु के होते हुए भी जीवन मौजूद ही है। प्रति क्षण विनाश चल रहा है। परन्तु फिर भी विश्व तो विद्यमान ही है। सत्य असत्य पर विजय प्राप्त करता है, प्रेम द्वेष को परास्त करता है, ईश्वर निरन्तर शैतान के दाँत खट्टे करता है।"

—'सर्वोदय', वर्ष १, अङ्क ८, चतुर्थ आवरण पृष्ठ]

आध्यात्मिक उन्नति व्यक्तिगत और सार्वजनिक

"मेरा यह विश्वास ही नहीं है कि जब कि उसके पड़ोसी दुख मे डूबे हुए है किसी एक व्यक्ति की आध्यात्मिक उन्नति हो सकती है। मनुष्य मात्र की—शायद प्राणि मात्र की—मूलभूत एकता मे मेरा विश्वास है। इसलिए मै तो यह मानता हूँ कि अगर एक मनुष्य

सेवा में विवेक

"· 'सेवा भी उसकी करो जिसे सेवा की जरूरत है। जिसे सेवा की जरूरत नहीं है उसकी सेवा करना ढोंग है। वह तो दम्भ है।"

सर्वग्राही सेवा

"लोग चाहे जो कहें, सेवा का कोई सम्प्रदाय नहीं बन सकता। वह तो सब के लिए है। · हम तो तीव्र कोटि के साथ अद्वैत सिद्ध करना चाहते हैं।· "

—गां० से० सं० सम्मेलन, मालिकान्दा (बंगाल) २१।२।'४०]

तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा.

" 'जो जीवन का लोभ छोडकर जीता है, वही जीवित रहता है।"

—सेवाग्राम, २३।२।'४२। 'ह० व०'। ह० से०, १।३।'४२, पृष्ठ ६०]

आचरण का बल

"· आचरण का बल क्या है? रामनाम तो एक ही है लेकिन एक आदमी रामनाम निकालता है तो असर पडता है, दूसरे का नहीं। इसका क्या कारण है? एक ने उसे अपनाया, दूसरा सितार या दिलरुबे की तरह केवल ध्वनि निकालता रहता है। तोते के कण्ठ से भी रामनाम निकलता है। पर वह उसके हृदय तक थोडे ही पहुँचता है। वह तो उसके महत्व को समझता ही नहीं ·· "

—तृतीय गांधी सेवा संघ सम्मेलन, हुदली, १७ अप्रैल, '३७]

शास्त्र का उच्चारण नहीं, आचरण

"· · · शास्त्र का मुख से उच्चारण करने में कोई लाभ नहीं है, उस पर अमल करने में ही लाभ है।"

—त्रावणकोर। [हि० न० जी० १५।१।'२७, पृष्ठ २७, मैसूर में [illegible] संस्कृत पाठशालाओं के समक्ष दिये गये प्रवचन से]

विवाह बन्धनों को जकड़नेवाला है

" मोक्ष ही मनुष्य जीवन की सार्थकता है। हिन्दू होने से मैं यह मानता हूँ कि मोक्ष का अर्थ है जीवन-मरण से मुक्ति—ईश्वर-साक्षात्कार। मोक्ष पाने के लिए शरीर के बन्धन टूटना आवश्यक है। शरीर के बन्धन को तोडनेवाली प्रत्येक वस्तु पथ्य है, शेष सब अपथ्य। विवाह बन्धन को तोडने के बजाय उसे और अधिक जकड देता है। केवल एक ब्रह्मचर्य ही मनुष्य के बन्धनों को मर्यादित करके उसे ईश्वरार्पित जीवन बिताने के लिए शक्ति प्रदान करता है।'

—नवजीवन। [हिं० न० जी० २।११।'२४, पृष्ठ ९१, श्रीरामचन्द्रन से बातचीत के सिलसिले में]

सच्चा भक्त

" जो भक्त स्तुति का या पूजा का भूखा है, जो मान न मिलने से चिढ़ जाता है, वह भक्त नहीं है। भक्त की सच्ची सेवा आप भक्त बनने में है। '

—नवजीवन। [हिं० न० जी० १४।६।'२८ पृष्ठ ६४१]

तपस्या जीवन की सब से बड़ी कला

" तपस्या जीवन की सब से बड़ी कला है।'

—नवजीवन। [हिं० न० जी० १०।२।'२४ पृष्ठ [illegible], दिलीपकुमार राय से बातचीत के सिलसिले में]

तप के साथ श्रद्धा की आवश्यकता

" यदि तपादि के साथ श्रद्धा, भक्ति, नम्रता न हो तो तप एक मिथ्या कष्ट है। वह दम्भ भी हो सकता है।"

—नवजीवन। [हिं० न० जी० [illegible] पृष्ठ ६[illegible]]

सेवा में विवेक

"....सेवा भी उसकी करो जिसे सेवा की जरूरत है। जिसे सेवा की जरूरत नहीं है उसकी सेवा करना ढोंग है। वह तो दम्भ है।"

सर्वग्राही सेवा

"लोग चाहे जो कहें, सेवा का कोई सम्प्रदाय नहीं बन सकता। वह तो सब के लिए है। ..हम तो तीस कोटि के साथ अद्वैत सिद्ध करना चाहते हैं।.."

—गा० से० सं० सम्मेलन, मालिकान्दा (बंगाल) २१।२।'४०]

तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः

" जो जीवन का लोभ छोड़कर जीता है, वही जीवित रहता है।"

—सेवाग्राम, २३।२।'४२। 'ह० से०'। ह० से०, १।३।'४२; पृष्ठ ६०]

आचरण का बल

" आचरण का बल क्या है? रामनाम तो एक ही है लेकिन एक आदमी रामनाम निकालता है तो असर पड़ता है, दूसरे का नहीं। इसका क्या कारण है? एक ने उसे अपनाया, दूसरा सितार या दिलरुबा की तरह केवल ध्वनि निकालता रहता है। तोते के कण्ठ से भी रामनाम निकलता है। पर वह उसके हृदय तक थोड़े ही पहुँचता है। वह तो इसमें मन्त्र का स्पर्श [illegible] ही नहीं "

—गांधी सेवा संघ सम्मेलन, हुदली, १७ अप्रैल, '३७]

शास्त्र का उच्चारण नहीं, आचरण

" शास्त्र का मुख से उच्चारण करने में कोई लाभ नहीं है, उस पर अमल करने में ही लाभ है।"

—[illegible] २५।१०।'२७, पृष्ठ २७, [illegible]]

विवाह बन्धनों को जकड़नेवाला है

" मोक्ष ही मनुष्य जीवन की सार्थकता है। हिन्दू होने से मैं यह मानता हूँ कि मोक्ष का अर्थ है जीवन-मरण से मुक्ति—ईश्वर-साक्षात्कार। मोक्ष पाने के लिए शरीर के बन्धन टूटना आवश्यक है। शरीर के बन्धन को तोड़नेवाली प्रत्येक वस्तु पथ्य है, शेष सब अपथ्य। विवाह बन्धन को तोड़ने के बजाय उसे और अधिक जकड़ देता है। केवल एक ब्रह्मचर्य ही मनुष्य के बन्धनों को मर्यादित करके उसे ईश्वरार्पित जीवन बिताने के लिए शक्ति प्रदान करता है।"

—नवजीवन। हि० न० जी० २।११।'२४, पृष्ठ ९१, श्रीरामचन्द्रन से बातचीत के सिलसिले में]

सच्चा भक्त

" जो भक्त स्तुति का या पूजा का भूखा है, जो मान न मिलने से चिढ़ जाता है, वह भक्त नहीं है। भक्त की सच्ची सेवा आप भक्त बनने में है। "

—नवजीवन। हि० न० जी० १४।६।'२८, पृष्ठ ६४]

तपस्या जीवन की सब से बड़ी कला

" तपस्या जीवन की सब से बड़ी कला है।"

—नवजीवन। हि० न० जी० १०।२।'२४ पृष्ठ २१२ दिलीपकुमार राय से बातचीत के सिलसिले में]

तप के साथ श्रद्धा की आवश्यकता

" यदि तपादि के साथ श्रद्धा, भक्ति, नम्रता न हो तो तप एक निरा कष्ट है। वह दम्भ भी हो सकता है।"

—नवजीवन। हि० न० जी० [illegible] पृष्ठ ८५]

तपश्चर्या और श्रद्धा

" शुद्ध तपश्चर्या के बल से अकेला एक आदमी भी सारे जगत् को कँपा सकता है, मगर इसके लिए अटूट श्रद्धा की आवश्यकता है।"

—नवजीवन। हिं० न० जी० ३।१०।'२०, पृष्ठ ५४]

सच्ची साधुता

" मैं मानता हूँ कि साधुता का दावा ही नहीं किया जा सकता। साधुता स्वयंसिद्ध होती है। सबूत और दावे की अपेक्षा रखनेवाली साधुता साधुता नहीं।"

—नवजीवन। हिं० न० जी० ९।७।'३१, पृष्ठ १९०]

मनुष्य की मानसिक स्थिति

"अपनी हर एक इच्छा को हमें आवश्यकता का नाम नहीं देना चाहिये। मनुष्य की स्थिति तो एक प्रकार से प्रयोगात्मक है। इस बीच आसुरी और दैवी दोनों प्रकार की शक्तियाँ अपने खेल खेलती हैं। किसी भी समय वह प्रलोभन का शिकार हो सकता है। अत: प्रलोभनों से लड़ते हुए उनका शिकार न बनने के रूप में उसे अपना पुरुषार्थ सिद्ध करना चाहिये।

—हि० से० [illegible]'३६, पृष्ठ [illegible]]

सन्तोष में ही सुख है

"देखने में आता है कि जिन्दगी की जरूरतों को बढ़ाने में मनुष्य अक्सर विचार में पीछे रह जाता है। इतिहास यही बताता है। सन्तोष में ही मनुष्य का सुख छिपा है। चाहिए जितना मिलने पर भी जिस मनुष्य को असन्तोष रहता है उसे तो अपनी आदतों का गुलाम ही समझना चाहिये। अपनी वृत्ति की गुलामी से बढ़कर कोई दूसरी गुलामी

आज तक नहीं देखी। सब ज्ञानियो ने, और अनुभवी मानसशास्त्रियो ने, पुकार पुकारकर कहा है कि मनुष्य स्वय अपना शत्रु है, और वह चाहे तो अपना मित्र भी बन सकता है। बन्धन और मुक्ति मनुष्य के अपने हाथ मे है। जैसे यह बात एक के लिए सच्ची है वैसे ही अनेक के लिए भी सच्ची है। यह युक्ति केवल सादे और शुद्ध जीवन से ही मिल सकती है।"

—सेवाग्राम ९।१०।'४० । [ह० से० १९।१०।'४०, पृष्ठ ३०१]

नम्रता शक्ति है

" आम का पेड ज्यो-ज्यो बढता है त्यो-त्यो झुकता है। उसी तरह बलवान का बल ज्यो ज्यो बढता जाता है त्यो त्यो वह नम्र होता जाता है और त्यो ही त्यो वह ईश्वर का डर अधिक रखता जाता है।'

—नवजीवन । [हि० न० जी० । ८।६।'२४, पृष्ठ [illegible]४९]

आन्तरिक गुणो पर जोर

" मेरा स्वभाव ही ऐसा बना हुआ है कि मने अपने सारे जीवन भर भीतरी शक्तियो और गुणो की बस्ती का ही विचार किया है। यदि भीतरी शक्तियो का प्रभाव न हो तो बाहरी बातो का प्रयोग बिल्कुल निरर्थक है

—य० इ० । [हि० न० जी० ७।९।'२४, पृष्ठ [illegible]]

श्रद्धा की कसौटी

" जिसे अपने कार्य और सिद्धान्त पर अविचल श्रद्धा है वह दूसरे की अश्रद्धा से या दूसरे के हट जाने से क्यो डरने लगा? जो श्रद्धावान होता है वह तो दूसरे की अश्रद्धा देखकर उलटा दुगना दृढ होता है। श्रद्धावान मनुष्य अपने साथियो को भागते देखकर स्वय

मुदृढ़ होता है और सिंह की तरह अकेला लड़ता है और पहाड़ की तरह अचल हो जाता है।"

—नवजीवन। [हि० न० जी० । २३।११।'२४, पृष्ठ ११८]

मेरी हलचल ईश्वर के नाम पर है

" मै जो कुछ कह सकता हूँ वह यह है कि मेरी हलचल नास्तिक नहीं है। वह ईश्वर का इन्कार नहीं करती। वह तो उसी के नाम पर शुरू की गई है और निरन्तर उसकी प्रार्थना करते हुए चल रही है। हाँ, यह जनता के हित के लिए जरूर शुरू की गई है, परन्तु वह जनता तक उसके हृदय के द्वारा, उसकी सत्प्रवृत्ति के द्वारा ही पहुँचना चाहती है।"

—[illegible] । [हि० न० जी०, २४।८।'२४, पृष्ठ १२]

स्वाभाविक त्याग

[illegible] त्याग को बाह्य स्वरूप देने की आवश्यकता नहीं होती। [illegible] त्याग प्रवेश करने के पहले बाजा नहीं बजाता। वह अदृश्य रूप से आता है और किसी को खबर तक नहीं होने देता। वह त्याग [illegible] होता है और [illegible] करता है। वह त्याग किसी को भाररूप नहीं [illegible] और स्वाभाविक मालूम होता है।"

—[illegible] । [हि० न० जी० [illegible], पृष्ठ २८०]

त्याग

प्रेम जिस न्याय का प्रदान करता है वह है त्याग, और कानून [illegible] न्याय का प्रदान करता है वह है दण्ड। प्रेमी की दी हुई वस्तु न्याय [illegible] और फिर भी हमेशा उससे कम होती है [illegible] क्योंकि वह इस बात के लिए [illegible] और [illegible] करता है कि अब ज्यादा नहीं है।

—[illegible] ३।'२४, पृष्ठ ३[illegible]]

धर्म सेवा है, अधिकार नहीं

"   धर्म तो कहता है—'मैं सेवा हूँ मुझे विधाता ने अधिकार दिया ही नहीं है' ।"

—नवजीवन । हिं० न० जी० १५।१०।'२८ पृष्ठ ७[illegible]]

शुद्धतम प्रायश्चित्त

"   जो मनुष्य अधिकारी व्यक्ति के सामने स्वेच्छापूर्वक अपने दोष शुद्ध हृदय से कह देता है और फिर कभी न करने की प्रतिज्ञा करता है, वह मानो शुद्धतम प्रायश्चित्त करता है   ।"

— हिन्दी आत्मकथा । सस्ता संस्करण १०३०, भाग १, अध्याय ८, पृष्ठ [illegible]]

क्षमा का रहस्य

"   क्रोध का कारण उपस्थित होने पर भी चुप्पी मार लेना   मार खा लेना, मार खाकर भी कुछ न बोलना—इसी मान्यता ने हिन्दुस्तान की जड़ खोद फेंकी है । बुद्ध भगवान् ने जब कहा था—'अक्रोधेन जिने क्रोधं' (अर्थात् अक्रोध से क्रोध को जीतना चाहिए), तब क्या उनके मन में यही धारणा होगी कि अक्रोध के मानी हैं कुछ नहीं करना हाथ पर हाथ धरकर बैठे रहना ? मुझे तो नहीं जान पड़ता है । कहा है—'क्षमा वीरस्य भूषणम् ।' तब क्या यह क्षमा केवल निष्क्रिय क्षमा होगी ? नहीं यह अक्रोध, यह क्षमा जब दया के रूप में बदलती है, प्रेम का रूप धारण करती है तभी वह शुद्ध क्षमा होती है । अहिंसा कुछ आलस्य नहीं, प्रमाद नहीं अशक्ति नहीं सक्रियता है ।

—नवजीवन । हिं० न० जी० [illegible] पृष्ठ [illegible]]

मृत्यु-शोक मिथ्या है

"   पुत्र मरे या पति मरे उसका शोक मिथ्या है [illegible]

—नवजीवन । हिं० न० जी० [illegible]

दीक्षा

"दीक्षा का अर्थ आत्म-समर्पण है। आत्म-समर्पण बाहरी आडम्बर से नहीं होता। यह मानसिक वस्तु है।"

—नवजीवन। हिं० न० जी०, २।९।'२७, पृष्ठ ११]

श्रद्धा और चरित्र

"हमें जिस बात की आवश्यकता है, वह है अपरिमित श्रद्धा और उसे अनुप्राणित करनेवाला निष्कलङ्क चरित्र।"

—ह० से०, २५।८।'३३]

सेवा का मोह

"सेवा का भी मोह हो सकता है। मोह-मात्र छोड़ने से ही सच्ची सेवा हो सकती है। क्या अपङ्ग आदमी भक्ति नहीं कर सकते? मन से भी सेवा की जा सकती है।"

—ह० से०, १०।११।'३३]

गजेन्द्र-मोक्ष

"गजेन्द्र-मोक्ष कोरा काव्य नहीं है। हमारे-जैसों के लिए वह [illegible] आश्वासन है, रक्षा की बात है।"

—ह० [illegible] ।१२।'३३, पृष्ठ ३३८]

[illegible] दूकान से खरीदने की चीज नहीं

"[illegible] ऐसी कोई चीज नहीं है कि गांधी की दूकान पर [illegible] और [illegible] लेकर चले।"

—[illegible] (आल्), [illegible]।'४०]

दूसरों के दोष नहीं, गुण देखो!

"... [illegible] की त्रुटियों को रजकण-सा गिनकर उसकी [illegible] परमाणु जितना भी हो, तो उसे [illegible] है।"

—[illegible] ।'४०, पृष्ठ [illegible]]

: ७ :

इन्द्रिय-संयम

युवक और अङ्कुश

"जब भाप अपने-आपको एक मजबूत लेकिन छोटे से पात्र में कैद कर लेती है तो वह महान शक्तिशालिनी बन जाती है और बाद में एक नपे-तुले छोटे रास्ते से निकलकर एक ऐसी प्रचण्ड गति उत्पन्न कर देती है कि उसके द्वारा बड़े-बड़े जहाज और भारी वजनदार मालगाड़ियाँ चलाई जा सकती है। इसी तरह देश के नवजवानो को भी स्वेच्छा से अपनी अटूट शक्ति को एक सीमा मे आबद्ध कर लेने और उसे अङ्कुश मे रखने की जरूरत है जिससे मौका पड़ने पर वे उसका उचित परिमाण मे आवश्यक उपयोग कर सकें।"

—यं० इं० । हि० न० जी० [illegible] पृष्ठ [illegible]]

संयमहीन जीवन

"संयमहीन स्त्री या पुरुष तो गया-बीता समझिए। इन्द्रियो को निरंकुश छोड़ देनेवाले का जीवन कर्णधारहीन नाव के समान है, जो निश्चय पहली चट्टान से ही टकराकर चूर-चूर हो जायगा।

× × ×

"मुझे सन्यासी कहना गलत होगा। मेरे जीवन के नियामक आदर्श तो सारी मानवता के ग्रहण करने योग्य है। मैंने उन्हें धीरे धीरे, ज्यो ज्यो मेरा जीवन विकास होता गया, प्राप्त किया है।

× × ×

"मुझे तो इसमे जरा भी सन्देह नहीं कि मैंने जो साधन किया, उसे हर पुरुष स्त्री साधन कर सकते है, यदि वे भी उतने ही प्रयत्न, आशा और श्रद्धा से करे। [illegible] प्रकट करने की [illegible] है।

विक परिणाम सन्तानोत्पत्ति को छोडकर महज अपनी पाशविक विषय-वासना की पूर्ति ही उसका सबसे बडा उपयोग मान लिया जाता है।"

—ह० से० २८।३।'३६, पृष्ठ ४५]

वर्तमान विवाह

" · आज हम जिसे विवाह कहते हैं वह विवाह नहीं, उसका आडम्बर है। जिसे हम भोग कहते हैं वह भ्रष्टाचार है।"

× × ×

" पशु जीवन में दूसरी बात हो सकती है लेकिन मनुष्य के विवाहित जीवन का यह नियम होना चाहिए कि कोई भी पति पत्नी बिना आवश्यकता के प्रजोत्पत्ति न करें और बिना प्रजोत्पादन के हेतु के सम्भोग न करें।"

—गांधी सेवा संघ सम्मेलन, सावली, ६ मार्च,'३६]

विवाह-बन्धन में शिथिलता

" देखता हूँ, इधर विवाह की बड़ी अवगणना होने लगी है। समाज के पोषक बन्धनों को ढीला करना आसान जरूर है, लेकिन वह उतना ही घातक भी है। व्यक्तियों को भले इसका अनुभव न हो लेकिन अन्त में समाज को तो इससे हानि ही पहुँचती है। सभी व्यवस्थाएँ बन्धन रूप होती हैं। बिना व्यवस्था या विधान के किसी समाज का संगठन नहीं किया जा सकता।"

—२८।२।'४०, [illegible]

[illegible]

" [illegible]

[illegible]

एकता में विश्वास करता हूँ। इसी कारण मुझे तो ऐसा यकीन है कि एक मनुष्य के आध्यात्मिक लाभ के साथ सारी दुनिया का लाभ होता है। उसी तरह एक मनुष्य के अधःपतन के साथ उस हद तक सारे संसार की अधोगति होती है।"

—य० इं० । [हि० न० जी०, ७।१२।'२४, पृष्ठ १३२]

भूल का सुधार

"भूल करना मनुष्य का स्वभाव है, की हुई भूल को मान लेना और इस तरह आचरण रखना कि जिससे वह भूल फिर न होने पावे—यह मर्दानगी है।"

—ह० से० १०।४।'३७ पृष्ठ ६३]

: ८ :

धर्म-प्रकरण

[धर्म, हिन्दूधर्म, उसके व्याख्याता]

धर्म एक महावृक्ष है

"···धर्म सीधी लकीर नहीं, बल्कि विशाल वृक्ष है। उसके करोड़ पत्ते हैं जिनमें दो पत्ते भी एक से नहीं हैं। प्रत्येक टहनी जुदी-जुदी है। उसकी एक भी आकृति रेखागणित की आकृति की तरह नपी हुई नहीं होती। ऐसा होते हुए भी हम जानते हैं कि बीज, टहनी या पत्ते एक ही हैं। रेखागणित की आकृति के सदृश उनमें कोई बात नहीं है। फिर भी वृक्ष की शोभा के साथ रेखागणित की आकृति की तुलना तक नहीं हो सकती। धर्म जिस प्रकार सीधी लकीर नहीं उसी प्रकार टेढ़ी भी नहीं। वह सीधी लकीर से परे है क्योंकि वह बुद्धि से परे है। वह अनुभव से जाना जाता है।"

—नवजीवन। [हि० न० जी०, १०।८।'२८, पृष्ठ ११८]

धर्म की व्यापकता

के विचार से रहित व्यापार प्रजा का नाश करता है।”

—नवजीवन। हि० न० जी० १०।९।'२५, पृष्ठ २८]

धर्म

“...धर्म कुछ सङ्कुचित सम्प्रदाय नहीं है, केवल बाह्याचार नहीं है। विशाल, व्यापक धर्म है ईश्वरत्व के विषय में हमारी अचल श्रद्धा, पुनर्जन्म में अविचल श्रद्धा, सत्य और अहिंसा में हमारी सम्पूर्ण श्रद्धा।”

—नवजीवन। हि० न० जी० ३०।८'२८, पृष्ठ १४। अहमदाबाद प्रार्थना समाज के भाषण से]

आध्यात्मिक सम्बन्ध-विहीन लौकिक सम्बन्ध

“आध्यात्मिक सम्बन्ध से हीन लौकिक सम्बन्ध प्राणहीन शरीर के समान है।”

—हिं० आ० क० भाग ५, अध्याय ६, पृष्ठ ५३३। स० संस्करण'३९]

धर्म उत्कट श्रद्धा का नाम है

“धर्म तो उत्कट श्रद्धा का नाम है। धर्म का निचोड़, उसका दूसरा नाम, अहिंसा है। उसमें यह ताकत है कि अंग्रेज के हाथ में उसकी तलवार गिर जाय, मुसलमान का गुण्डापन धरा रह जाय। पतञ्जलि ने कहा है—अहिंसा के सामने हिंसा निकम्मी हो जाती है। अगर आज तक ऐसा नहीं हुआ है तो उसका कारण यह है कि हमारी अहिंसा दुर्बलों और भीरुओं की थी।”

—गांधी सेवा संघ सम्मेलन, डेलांग, [illegible]'३८]

विविध धर्म एक दूसरे के पूरक

“मेरा हिन्दू-धर्म सर्वसंग्राहक है। उसमें न तो किसी धर्म के [illegible]

है, न अवगणना। समस्त धर्म एक दूसरे के साथ ओत-प्रोत है। प्रत्येक धर्म में कई विशेषताएँ हैं, किन्तु एक धर्म दूसरे धर्म से श्रेष्ठ नहीं। जो एक में है वह दूसरे में नहीं है। इसलिए एक धर्म दूसरे धर्म का पूरक है। अतः एक धर्म की विशेषता दूसरे धर्म की विशेषता के प्रतिकूल नहीं हो सकती, जगत् के सर्वमान्य सिद्धान्तों की विरोधी नहीं हो सकती।"

—ह० से० ३१।३।'३३, पृष्ठ ३]

धर्मों के एकीकरण की चावी

" जितना सम्भव था उतना विविध धर्मों का अध्ययन करने के बाद मैं इस निर्णय पर आया हूँ कि सब धर्मों का एकीकरण करना यदि उचित और आवश्यक है, तो उन सबकी एक महाचावी होनी चाहिये। यह चावी सत्य और अहिंसा है। इस चावी से जब मैं किसी धर्म की पेटी खोलता हूँ तो मुझे एक धर्म का दूसरे धर्म से ऐक्य करने में जरा भी कठिनाई नहीं आती। यद्यपि वृक्ष के पत्तों की तरह सब धर्म अलग अलग नजर आते हैं, मगर जड़ को देखा जाय तो सब एक ही दिखाई देते हैं।

—ह० से० [illegible] पृष्ठ [illegible]]

हिन्दू धर्म विशालमना है

हिन्दू धर्म की विशेषता

" मेरी राय में हिन्दू धर्म की खूबी उसकी सर्वव्यापकता और सर्वसंग्राहकता है ।"

—यं० इं० । हिं० न० जी०, १७।९।२५, पृष्ठ ३४]

हिन्दू-धर्म

" हिन्दू धर्म जीवित धर्म है । उसमें भरती और खोट आती ही रहती है । वह संसार के नियमों का ही अनुसरण करता है । मूल रूप से तो वह एक ही है लेकिन वृक्ष रूप से वह विविध प्रकार का है । उसपर ऋतुओं का असर होता है । उसका वसन्त भी होता है और पतझड़ भी । उसकी शरद् ऋतु भी होती है और उष्ण ऋतु भी । वर्षा से भी वह वञ्चित नहीं रहता है । उसके लिए शास्त्र है भी और नहीं भी है । उसका एक ही पुस्तक पर आधार नहीं है । गीता सर्वमान्य है लेकिन वह केवल मार्गदर्शक है । हिन्दू धर्म गंगा का प्रवाह है । मूल में वह शुद्ध है । मार्ग में उसपर मैल चढ़ता है । फिर भी जिस प्रकार गंगा की प्रवृत्ति अन्त में पोषक है उसी प्रकार हिन्दू धर्म भी है ।"

—नवजीवन । हिं० न० जी०, १२।८।'२६, पृष्ठ २०८]

× × ×

" हिन्दू वह है जो ईश्वर में विश्वास करता है, आत्मा की अनश्वरता, पुनर्जन्म, कर्म-सिद्धान्त और मोक्ष में विश्वास करता है और अपने दैनिक जीवन में सत्य और अहिंसा का अभ्यास करने का प्रयत्न करता है और इसलिए व्यापक अर्थ में गोरक्षा करता है, और वर्णाश्रम धर्म को समझता है और उसपर चलने का प्रयत्न करता है ।

— [illegible] इं०, १४।१०।२६

× × ×

"...वर्णाश्रम धर्म संसार को हिन्दू धर्म की अपूर्व भेंट है। हिन्दू धर्म ने हमें भय से बचा लिया है। अगर हिन्दू धर्म मेरे सहारे को नहीं आता तो मेरे लिए आत्म हत्या के सिवाय और कोई चारा नहीं होता। मैं हिन्दू इसलिए हूँ कि हिन्दू धर्म ही वह चीज है जो संसार को रहने लायक बनाता है।"

—य० इं० । [हि० न० जी० [illegible]'२७, पृष्ठ १२०]

× × ×

"...हिन्दू धर्म की प्रतिष्ठा सत्य और अहिंसा पर निर्भर है और इस कारण हिन्दू धर्म किसी धर्म का विरोधी हो नहीं सकता है। हिन्दूधर्मी की नित्य प्रार्थना यह होनी चाहिये कि जगत के सर्वप्रतिष्ठित धर्मों की तरक्की हो और उसके द्वारा सारे संसार की।"

—ह० से० [illegible]।३।'३९ पृष्ठ [illegible] (श्री लक्ष्मीनारायण मन्दिर, नई दिल्ली का उद्घाटन करते हुए)

ब्राह्मण धर्म हिन्दू धर्म का दूसरा नाम है

'मेरी दृष्टि में ब्राह्मण धर्म का दूसरा नाम हिन्दू धर्म है। ब्राह्मण धर्म का अर्थ है ब्रह्म-ज्ञान। इसलिए ब्राह्मण धर्म उस ज्ञान का नाम है, जिसके द्वारा मनुष्य को ईश्वर दर्शन अथवा आत्म दर्शन होता है। यदि मेरा यह अनुभव न होता, तो मैं हिन्दू-धर्म का अनुयायी कभी न रहता।'

—[illegible]

वर्ण-धर्म

[illegible]

—[illegible]

'जन्मना' वर्ण-विभाग

"मैं 'जन्मना' वर्ण-विभाग में विश्वास रखता हूँ। यदि ऐसा न होता, तो वर्ण व्यवस्था का कुछ अर्थ ही न रहता, वर्ण-व्यवस्था का कुछ उपयोग ही न रहता। तब तो केवल शब्द-जाल मात्र रह जाता।"

—ह० से०, १४।४।'३३]

वर्ण-धर्म का सच्चा अर्थ

"वर्ण असल में धर्म है, अधिकार नहीं। इसलिए वर्ण का अस्तित्व केवल सेवा के लिए ही हो सकता है, स्वार्थ के लिए नहीं। इसी कारण न तो कोई उच्च है, न कोई नीच। ज्ञानी होते हुए भी जो अपने को दूसरों से उच्च मानेगा, वह मूर्ख से भी बदतर है। उच्चता के अभिमान से वह वर्ण च्युत हो जाता है। यहाँ यह भी समझ लेना आवश्यक है, कि वर्ण-धर्म में ऐसी कोई बात नहीं कि शूद्र ज्ञान का सञ्चय अथवा राष्ट्र की रक्षा न करे। हाँ, शूद्र अपने ज्ञान के विनिमय को अथवा राष्ट्र-रक्षा को अपनी आजीविका का साधन न बना ले। ब्राह्मण अथवा क्षत्रिय परिचर्या न करे, यह भी बात नहीं है। परन्तु परिचर्या के द्वारा आजीविका न चलावे। इस सहज स्वाभाविक धर्म का यदि सर्वथा पालन किया जाय, तो समाज में जो उपद्रव आज हो रहे हैं, एक दूसरे के प्रति जो द्वेषपूर्ण प्रतिस्पर्धा बढ़ रही है, धन इकट्ठा करने के जो कष्ट उठाये जा रहे हैं, असत्य का जो प्रचार हो रहा है, और जो युद्ध के साधन तैयार किये जा रहे हैं वे सब शान्त हो जायँ। इस नीति का पालन चाहे संसार करे अथवा न करे, सभी हिन्दू करें या न करें, पर जितने लोग इस व्यवस्था पर चलेंगे, उतना लाभ तो समाज को होगा ही। मैं विश्वास करता ही जाता हूँ कि वर्ण-धर्म से ही संसार का उद्धार होगा।
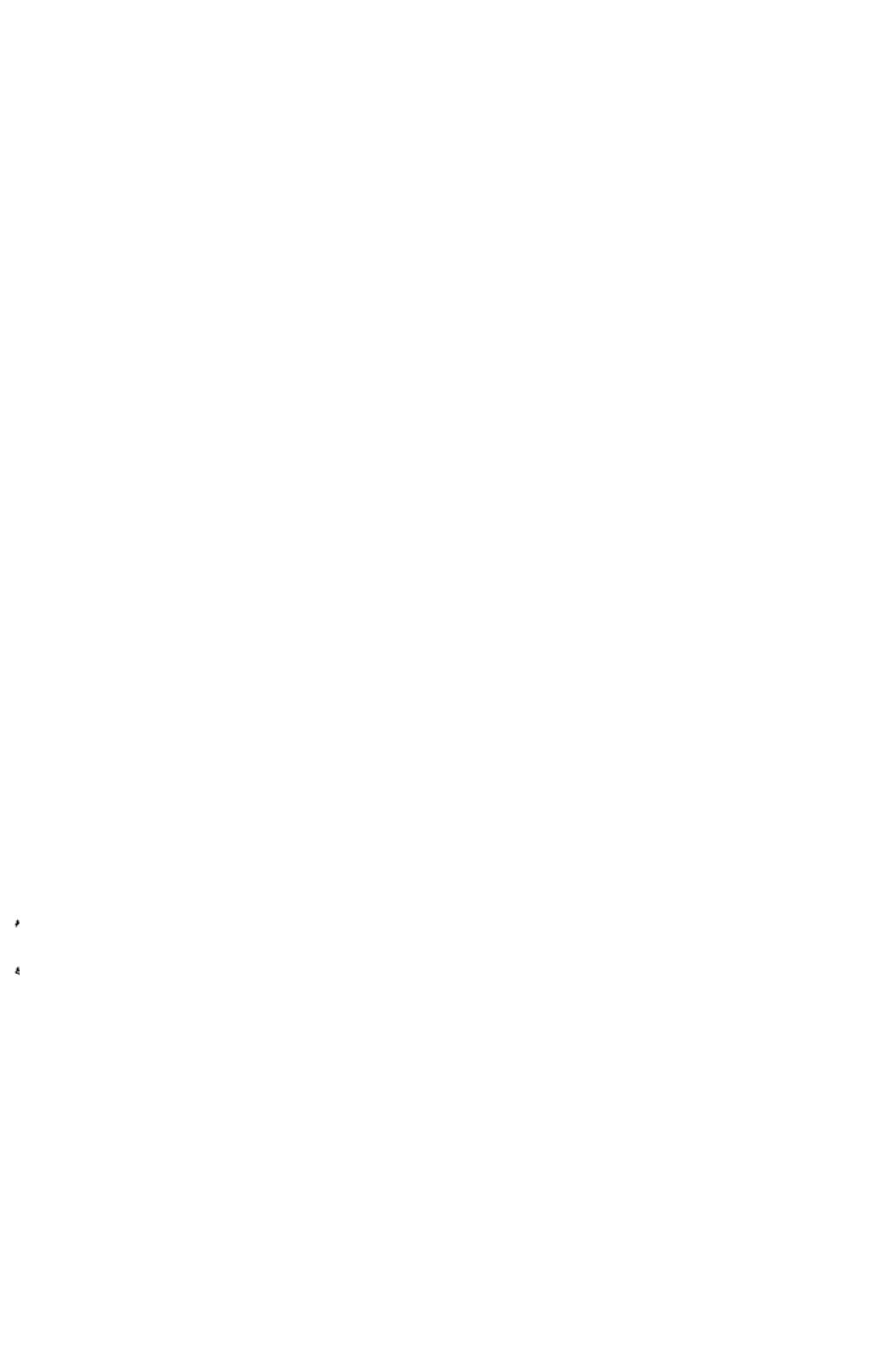
स्याह का सफेद और सफेद का स्याह करके दिखा सकता है। किसे इस बात का अनुभव नहीं होता? बहुत से वेद-वादरत प्राणी वेदों से अनेक बात साबित करते हैं। और वैसे ही नाम धारण करनेवाले दूसरे कितने ही लोग उनके विरुद्ध बातें उतने ही जोर के साथ उनमें से सिद्ध करते हैं। मैं अपने जैसे प्राकृत मनुष्यों को एक आसान तरीका बताता हूँ जिसका अनुभव मैंने किया है। मैंने हर एक धर्म का विचार करके उसका लघुत्तम निकाल रखा है। कितने ही सिद्धान्त अचलवत् मालूम होते हैं। भक्त तुलसीदास ने आधे दोहे में कह दिया है—"दया धर्म को मूल है।" 'सत्य के सिवा दूसरा धर्म नहीं।' यह सनातन वचन है। किसी भी धर्म ने इन सूत्रों को अस्वीकार नहीं किया है। ऐसे हर एक वचन को, जिसके लिए धर्म शास्त्र के वचन होने का दावा किया गया हो, सत्य की निहाई पर दयारूपी हथौड़े से पीटकर देख लेना चाहिए। अगर वह पक्का मालूम हो और टूट न जाय तो ठीक समझना चाहिए। नहीं तो हजारों शास्त्रवादियों के रहते हुए भी 'नेति' 'नेति' कहते रहना चाहिए। अखा (एक गुजराती भक्त कवि) की अनुभव वाणी में शास्त्र एक अन्धा कुआँ है। जो उसमें गिरता है वही मरता है।

—[illegible] [illegible] २९।८।२६, पृष्ठ [illegible]

"...अब तो तत्त्वज्ञान के लिए उसे (गीता को) मैं सर्वोत्तम ग्रन्थ मानता हूँ ।"

—हिन्दी आत्मकथा भाग १, अध्याय २०, पृष्ठ ७७, १९३९]

× × ×

"मेरे लिए तो गीता आचार की एक प्रौढ़ मार्ग-दर्शिका बन गई है । यह मेरा धार्मिक कोष हो गई है ।..."

—हि० आ० क०, भाग ४, अध्याय ५, पृष्ठ २०१ । स० संस्करण, १९३०]

× × ×

"गीता सर्वों की खान है ।"

—गां० वा० । हि० न० जी०, २।२।'२८, पृष्ठ १०२]

× × ×

"मेरे लिए तो गीता ही संसार के सब धर्मग्रन्थों की कुंजी हो गई है । संसार के सब धर्मग्रन्थों में गहरे से गहरे जो रहस्य भरे हुए हैं उन सबको यह मेरे लिए खोलकर रख देती है ।"

—[illegible], १८।८ '३[illegible], पृष्ठ [illegible]]

रामायण

"आज मैं तुलसीदास की रामायण को भक्तिमार्ग का सर्वोत्तम ग्रन्थ मानता हूँ।"

—हिन्दी आत्म-कथा, भाग १, अध्याय १० पृष्ठ ३६, सस्ता संस्करण, '३०]

× × ×

"रामचरितमानस विचार रत्नों का भाण्डार है।"

—हिं० न० जी० ५।९।'२९ पृष्ठ २०]

× × ×

"रामचरितमानस के लिए यह दावा अवश्य है कि उससे लाखों मनुष्यों को शान्ति मिली है जो लोग ईश्वर विमुख थे वे ईश्वर के सम्मुख गये हैं और आज भी जा रहे हैं। मानस का प्रत्येक पृष्ठ भक्ति से भरपूर है। मानस अनुभवजन्य ज्ञान का भाण्डार है।

—हिं० न० जी०, १०।१०।'२९ पृष्ठ ६०]

महाभारत

"महाभारत मेरे नजदीक एक गहन धार्मिक ग्रन्थ है। वह अधिकांश में एक रूपक है। इतिहास के साथ उसका कोई सम्बन्ध नहीं। उसमें तो उस शाश्वत युद्ध का वर्णन है जो हमारे अन्दर निरन्तर होता रहता है।"

—[illegible] हि० न० जी०, [illegible] पृ० ६०

× × ×

"महाभारत तो रत्नों की एक खान [illegible] किन्तु सबसे अधिक देदीप्यमान [illegible] है।"

× × ×

"मनुष्य को अगर एक अमर प्राणी समझा जाय तो महाभारत उसका एक आध्यात्मिक इतिहास है।"

× × ×

"हमारे हृदयों में सत् और असत् के बीच जो सनातन संग्राम चल रहा है, महाभारतकार उसे इस कथानक के द्वारा, एक अमर काव्य के रूप में हमारे सामने प्रस्तुत करता है।"

—हि० न०, [illegible]।'३६, पृष्ठ ११८]

तुलसीदास : भारतीय सभ्यता के रक्षक

"... भारत की सभ्यता की रक्षा करने में तुलसीदासजी ने बहुत ज़्यादा भाग लिया है। तुलसीदास के चेतनामय रामचरितमानस के अभाव में किसानों का जीवन जड़वत् और शुष्क बन जाता। ... तुलसीदासजी की भाषा में जो प्राणप्रद शक्ति है वह दूसरों की भाषा में नहीं पाई जाती।"

—[illegible], पृष्ठ २०]

रामायण और महाभारत के प्रणेता

"[illegible] रामायण और महाभारत को [illegible] मानता हूँ [illegible] इनके [illegible], अथवा वे बड़े कवि यानी ऋषि थे। [illegible], मनुष्यजाति के [illegible] थे।"

—[illegible] पृष्ठ [illegible]]

अनुवाद

[illegible]

घोर अस्पृश्य और पापपूर्ण विचारों का प्रवाह हमें स्पर्श कर रहा है और अपवित्र बना रहा है। ऐसी दशा में हम अपनी पवित्रता के घमण्ड में मस्त होकर अपने उन भाइयों के स्पर्श के प्रभाव को तिल का ताड न बनावें जिन्हें हम अक्सर अपने अज्ञानवश, और उससे भी अधिक अपने बड़प्पन की ठसक से, अपने से नीच समझते हैं।'

—य० इं० [हिं० न० जी०, ८।१।[illegible]]

अन्त्यज पङ्गुहीन हैं

" अन्त्यजों के तो हमने पर काट डाले हैं, उनकी सद्भावनाओं को दबा दिया है।

—नवजीवन [हिं० न० जी० २५।५।'२४ पृष्ठ ३३०]

अन्त्यज आपके देव हैं

" गीता कहती है कि देवों को सन्तुष्ट रखना चाहिए। देवता आस्मान पर नहीं हैं। आपके देव अन्त्यज हैं। आपके देव दूसरे अस्पृश्य हैं। हिन्दुस्तान के देव कंगाल लोग हैं। दयाधर्म से हीन धर्म पाखण्ड है। दया ही धर्म का मूल है। और उसका त्याग करनेवाला ईश्वर का त्याग करता है। ईश का त्याग करनेवाला सबका त्याग करता है।

—हिं० न० जी०, ५।२।'[illegible] [illegible], [illegible]

अस्पृश्यता

" जिस प्रकार एक रत्ती [illegible] विष से [illegible] दूध बिगड़ जाता है, उसी प्रकार अस्पृश्यता से हिन्दूधर्म [illegible] रहा है।

—य० इं० [हिं० न० जी० [illegible]]

[illegible]

"[illegible]

मानव-सम्मान की रक्षा के लिए है। यह संग्राम हिन्दूधर्म में बहुत ही कल्याण सुधार के निमित्त है। यह संग्राम सनातनियों के स्वाईदार गढ़ों के विरुद्ध है।"

—ह० से०, २६।५।'३३]

दलित जातियों से आत्मीयता न छोड़ूँगा

"चाहे मैं टुकड़े-टुकड़े कर दिया जाऊँ, पर दलित जातियों से आत्मीयता न छोड़ूँगा।"

—ह० से०, ७।६।'३३]

असत्य, पाखण्ड का मैल

"मेरी अपनी बुद्धि के अनुसार तो भंगी पर जो मैल चढ़ता है, वह शारीरिक है और वह तुरन्त दूर हो सकता है। किन्तु जिनपर असत्य पाखण्ड का मैल चढ़ गया है, वह इतना सूक्ष्म है कि दूर करना बड़ा कठिन है। किसी को अछूत गिन सकते हैं तो असत्य और पाखण्ड से भरे हुए लोगों को।"

—ह० से०, ७।६।'३३]

: ६ :

कला, काव्य, साहित्य और संस्कृति

"बाह्य साधनों पर अथवा इन्द्रिय-ज्ञान पर आधार रखनेवाली कला में जितनी आत्मा होती है उतने ही अंशों में वह अमृतकला के समान बनती है । जिसमें आत्मा का बिल्कुल ही अभाव होगा, वह कला न होगी किन्तु केवल कृति ही बन जायगी और क्षणभङ्गुर होगी । उस अमृत कला का अंश जिसमें अधिक है, वह मोक्षदायी है ।'

—नवजीवन । हिं० न० जी०, ४।३।'२६ पृष्ठ २२१।२३०]

जीवन समस्त कलाओं से श्रेष्ठ है

" जीवन समस्त कलाओं से श्रेष्ठ है । मैं तो समझता हूँ कि जो अच्छी तरह जीना जानता है वही सच्चा कलाकार है । उत्तम जीवन की भूमिका के बिना कला किस प्रकार चित्रित की जा सकती है ? कला के मूल्य का आधार है जीवन को उन्नत बनाना । जीवन ही कला है । कला जीवन की दासी है और उसका काम यही है कि वह जीवन की सेवा करे । कला विश्व के प्रति जागृत होनी चाहिये ।

—नवजीवन । हिं० न० जी० । १०।२।'२४ पृष्ठ २१२ दिलीपकुमार राय से बातचीत के सिलसिले में]

कला

" मेरा ध्येय हमेशा है कल्याण । कला मुझे उसी अंश तक स्वीकार्य है जिस अंश तक वह कल्याणकारी है, मङ्गलकारी है । मैं इसे युरोप की दृष्टि से नहीं देख सकता ।

*　　*　　*

" भारतीय कलाकार ने [illegible] में प्रकट करके [illegible] कर दिया [illegible]

"कलाकार जब कला को कल्याणकारी बनावेंगे और जनसाधारण के लिए उसे सुलभ कर देंगे तभी उस कला को जीवन में स्थान रहेगा। जब कला सब लोगों की न रहकर थोड़े लोगों की रह जाती है तब मैं मानता हूँ कि उसका महत्व कम हो जाता है।"

—नवजीवन। [हि० न० जी० २३।११।'२४ पृष्ठ ११०]

भारतीय और यूरोपीय कला

"हिन्दुस्तान की कला में कल्पना भरी हुई है, यूरोप की कला में प्रकृति का अनुकरण है। इस कारण शायद पश्चिम की कला समझने में आसान हो सकती है लेकिन समझ में आने पर वह हमें पृथ्वी में ही [illegible] रखेगी; और हिन्दुस्तान की कला जैसे-जैसे हमारी समझ में आयेगी, वैसे-वैसे ऊपर उठाती जायगी।"

—[illegible], ७।१२।'३२, [illegible] निजी पत्र में]

काव्य

"[illegible] अन्त तक कल्पना शक्ति अर्थात् काव्यमनुष्य [illegible] उपयोगी और आवश्यक काम जरूर करेगा।"

—[illegible] [हि० न० जी० [illegible], पृष्ठ ३६]

भक्ति और काव्य

"[illegible] जिस द्रव्य की रचना करता है उसके सब अंगों की [illegible] [illegible] में सुन्दरता [illegible] [illegible] जाता।"

—[illegible]]

कवि

" हमारी अन्त स्थ सुप्त भावनाओ को जाग्रत करने का सामर्थ्य जिसमे होता है, वह कवि है । ”

—[हिं० आ० क०, भाग ४, अध्याय १८, पृष्ठ ३३३। सस्तासंस्करण १९३०]

काव्य-साहित्य

" 'वही काव्य और वही साहित्य चिरञ्जीवी रहेगा जिसे लोग सुगमता से पा सकेंगे, जिसे वे आसानी से पचा सकेंगे ।'

—नवजीवन । [हिं० न० जी०, २३।११।'२४ पृष्ठ १२०, श्री दिलीपकुमार राय के साथ बातचीत के सिलसिले मे]

सगीत

" सगीत जानने के मानी जीवन को सगीतमय बना देना है । हमारा जीवन सुरीला नही है इसी से तो आज हमारी दशा दयाजनक बनी हुई है ।"

—[हिं० न० जी०, ८।४।'२६ पृष्ठ २६५, अहमदाबाद राष्ट्रीय सगीत मण्डल के दूसरे वार्षिकोत्सव पर दिये गये भाषण से]

गन्दा साहित्य

" कोई देश और कोई भाषा गन्दे साहित्य से मुक्त नही है । जबतक स्वार्थी और व्यभिचारी लोग दुनिया मे रहेंगे तबतक गन्दा साहित्य प्रकट करनेवाले और पढनेवाले भी रहेंगे । लेकिन जब ऐसे साहित्य का प्रचार प्रतिष्ठित माने जानेवाले सज्जनो के द्वारा होता है, और इसका प्रचार कला या सेवा के नाम पर किया जाता है, तब वह भयङ्कर स्वरूप धारण करता है ।

—[हिं० न० जी० ६।३।'२० पृ० २०८]

कवि

"   हमारी अन्तःस्थ सुप्त भावनाओं को जाग्रत करने का सामर्थ्य जिसमें होता है, वह कवि है।   "

—[हि० आ० क०, भाग ४, अध्याय १८, पृष्ठ ३३३। सस्तासस्करण, १९३०]

काव्य-साहित्य

"   वही काव्य और वही साहित्य चिरञ्जीवी रहेगा जिसे लोग सुगमता से पा सकेंगे, जिसे वे आसानी से पचा सकेंगे।"

—नवजीवन। [हि० न० जी०, २३।११।'२४ पृष्ठ १२०, श्री दिलीपकुमार राय के साथ बातचीत के सिलसिले में]

सगीत

"   सगीत जानने के मानी जीवन को सगीतमय बना देना है। हमारा जीवन सुरीला नहीं है इसी से तो आज हमारी दशा दयाजनक बनी हुई है।'

—[हि० न० जी०, ८।४।'२६, पृष्ठ २६५, अहमदाबाद राष्ट्रीय सगीत मण्डल के दूसरे वार्षिकोत्सव पर दिये गये भाषण से]

गन्दा साहित्य

"   कोई देश और कोई भाषा गन्दे साहित्यसे मुक्त नहीं है। जबतक स्वार्थी और व्यभिचारी लोग दुनिया में रहेंगे तबतक गन्दा साहित्य प्रकट करनेवाले और पढ़नेवाले भी रहेंगे। लेकिन जब ऐसे साहित्य का प्रचार प्रतिष्ठित माने जानेवाले अखबारों के द्वारा होता है, और उसका प्रचार कला या सेवा के नाम पर किया जाता है, तब वह भयङ्कर स्वरूप धारण करता है।

—[हि० न० जी० [illegible] पृष्ठ [illegible]]

: १० :

देशधर्म

किसानों में पाई जाती है, दुनिया के और किन्हीं किसानों में नहीं पाई जाती।'

—[हि० न० जी०, १९ '२०, पृष्ठ २०]

भारतीय संस्कृति की गंगा

"लोकमान्य तिलक के हिसाब से हमारी सभ्यता दस हजार बरस पुरानी है। बाद के कई पुरातत्त्वशास्त्रियों ने उसे इससे भी पुरानी बताया है। इस सभ्यता में अहिंसा को परम धर्म माना गया है। इसलिए इसका एक नतीजा तो यह होना चाहिए कि हम किसी को अपना दुश्मन न समझें। वेदों के समय से हमारी यह सभ्यता चली आ रही है। जिस तरह गंगाजी में अनेक नदियाँ आकर मिली हैं, उसी तरह इस देश की संस्कृति-गंगा में भी अनेक संस्कृति रूपी सहायक नदियाँ आकर मिली हैं। इन सब का कोई सन्देश हमारे लिए हो सकता है तो यही कि हम सारी दुनिया को अपनायें और किसी को अपना दुश्मन न समझें।"

: १० :

देशधर्म

राजनैतिक आदर्श

"मेरी दृष्टि में राजनैतिक सत्ता हमारा ध्येय नहीं हो सकता। जिन साधनों की बदौलत जीवन के प्रत्येक विभाग में अपनी उन्नति करने की शक्ति लोगों में आती है उनमें से राजनैतिक सत्ता एक है। राष्ट्र के प्रतिनिधियों द्वारा राष्ट्रीय जीवन का नियमन करने की शक्ति का ही नाम राजनैतिक सत्ता है। यदि राष्ट्रीय जीवन इतना पूर्ण हो जाय कि वह स्वनियंत्रित हो तो फिर प्रतिनिधित्व की आवश्यकता ही नहीं रहती। वह एक सुसंस्कृत अराजकता की अवस्था होगी। जिसमें प्रत्येक व्यक्ति अपना ही शासक होगा। वह अपना नियमन अपने आप इस तरह करेगा कि जिसमें उसके पड़ोसी के लिए वह बाधक न हो। आदर्श स्थिति में राज्यसत्ता ही नहीं रहेगी तो फिर राजनैतिक सत्ता कहाँ से आवेगी? इसीलिए थोरो ने अपने [illegible] कहा है कि सबसे अच्छी सरकार वह है जो कम से कम

बल्कि प्राणिमात्र से एकता का सम्बन्ध जोडना—उसका अनुभव करना चाहता हूँ।'

—य० इ० । हिं० न० जी० ४।४।'२९ पृष्ठ २५८]

प्रान्तीयता का विष

" हमे प्रान्तवाद को भी मिटाना चाहिए। यदि आन्ध्रवाले कहे कि आन्ध्र आन्ध्र के लिए है, उत्कल-निवासी कहे कि उत्कल उत्कल वासियों के लिए है तो इस तरह काफी प्रान्तीयता आ जाती है। सच तो यह है कि आन्ध्र और उत्कल दोनों को देश और जगत् के लिए कुर्बान होने के लिए तैयार होना है।'

—गांधी सेवा संघ सम्मेलन, डेलांग, २५ मार्च,' ३८]

नीतिशून्य राजनीति

" मैं देश की आँख में धूल न झोंकूँगा। मेरे नजदीक धर्म विहीन राजनीति कोई चीज नहीं है। धर्म के मानी वहमों और गतानुगतिकता का धर्म नहीं, द्वेष करनेवाला और लड़नेवाला धर्म नहीं, बल्कि विश्वव्यापी सहिष्णुता का धर्म। नीतिशून्य राजनीति सर्वथा त्याज्य है।"

—साबरमती आश्रम, [illegible] । [illegible] । हि० न० जी० [illegible], पृ० [illegible]]

धर्म और राजनीति

" मैं धर्म से भिन्न राजनीति की कल्पना नहीं कर सकता। वास्तव में, धर्म तो हमारे हर एक कार्य में व्यापक होना चाहिए। यहाँ धर्म का अर्थ संकुचित पन्थ से नहीं है। इसका अर्थ है— विश्व की एक नैतिक सुव्यवस्था में श्रद्धा।'

—[illegible] । [illegible] पृ० [illegible]]

मिथ्या राजनीति

“• हम तो तीस कोटि के साथ अद्वैत सिद्ध करना चाहते हैं। यह तभी होगा जब कि हम शून्यवत् बनेंगे। हमें अधिकार से क्या काम? सत्ता का राजकारण मिथ्या है। हमें लोगों को सच्चा राजकारण बताना चाहिए। जो काम दूसरे लोग नहीं करते, बल्कि जिसे वे घृणा की दृष्टि से देखते हैं, वही रचनात्मक काम हम करेंगे।”

—गा० से० स० सम्मेलन, मालिकान्दा (बंगाल), २२।२।'४०]

समाज से धर्म का बहिष्कार असम्भव

“• समाज से धर्म को निकालकर फेंक देने का प्रयत्न बाँझ के घर पुत्र पैदा करने जितना ही निष्फल है, और अगर कहीं सफल हो जाए तो समाज का उसमें नाश है।”

—हरिजन, ६।३।'४०, ह० से० २४।८।'४०, पृष्ठ २३२]

शरीरबल तथा आत्मबल से प्राप्त सत्ता

“शरीरबल से प्राप्त की हुई सत्ता मानवदेह की तरह क्षण-भंगुर होगी, जब कि आत्मबल से प्राप्त सत्ता आत्मा की तरह अजर और अमर रहेगी।”

—[illegible], पृष्ठ २०]

सच्चे स्वराज्य की भावना

१. सच्चा स्वराज्य तो अपने मन पर राज्य है।

२. इसकी कुंजी सत्याग्रह, आत्मबल अथवा दयाबल है।

३. इस बल को काम में लाने के लिए [illegible] स्वदेशी बनना जरूरी है।

—[illegible]]

स्वराज्य की व्याख्या

"१ स्वराज्य का अर्थ है—स्वयं अपने ऊपर प्राप्त किया हुआ राज्य।

२. परन्तु हमने तो उसके कुछ लक्षण और स्वरूप की भी कल्पना की है। अतएव स्वराज्य का अर्थ है—देश के आयात और निर्यात पर, सेना पर और अदालतों पर जनता का पूरा नियन्त्रण।

३ परन्तु व्यक्तिगत स्वराज्य का उपयोग तो साधु लोग आज भी करते होंगे, और हमारी पार्लमेण्ट स्थापित हो जाने पर भी लोगों की दृष्टि में, सम्भव है, वह स्वराज्य न हो। इसलिए स्वराज्य का अर्थ है—अन्न वस्त्र की बहुतायत। वह इतनी होनी चाहिए कि किसी को भी उसके बिना भूखा और नंगा न रहना पड़े।

४ ऐसी स्थिति हो जाने पर भी एक जाति और एक श्रेणी के लोग दूसरों को दबा सकते हैं। अतएव स्वराज्य का अर्थ है—ऐसी स्थिति जिसमें एक बालिका भी घोर अन्धकार में निर्भयता के साथ घूम फिर सके।

५ राष्ट्रीय स्वराज्य में प्रत्येक अङ्ग सजीव और उन्नत होना होगा और होना चाहिए। इस दशा में स्वराज्य का अर्थ है—अन्त्यजों की अस्पृश्यता का सर्वथा नाश।

६ ब्राह्मण और अब्राह्मण के झगड़े की समाप्ति।

७ हिन्दू-मुसलमान के मनोमालिन्य का सर्वथा नाश। इसका अर्थ है कि हिन्दू मुसलमान की मर्यादा करें और उनके लिए स्थान छोड़ दें। इसी तरह मुसलमान हिन्दुओं की मर्यादा ग्रहण करें। मुसलमान गोहत्या करके हिन्दुओं का दिल न दुखावें बल्कि इच्छा से गोवध बन्द करें और अपने हिन्दू भाइयों [illegible]

स्वाधीनता है और दूसरी तरफ आर्थिक स्वतन्त्रता । उसके दो सिरे और भी है । उनमे से एक नैतिक और सामाजिक है । इसी के अनुरूप सिरा है, धर्म—उस शब्द के सबसे उदात्त माने में । उसमे हिन्दू धर्म, ईसाई धर्म आदि शामिल है । हम इसे स्वराज्य का चौकोर कहे । अगर उसका एक भी कोण गलत हुआ तो उसकी सूरत ही बिगड़ जायगी । इस राजकीय और आर्थिक स्वतन्त्रता को,   हम सत्य और अहिंसा के बिना नहीं पहुँच सकते । अधिक प्रत्यक्ष भाषा मे, ईश्वर मे जीवन्त श्रद्धा और इसीलिए नैतिक एवं सामाजिक उत्थान के बिना नही पहुँच सकते ।'

—२।१।३७]

अहिंसक स्वराज

"जनता के स्वराज का अर्थ है प्रत्येक व्यक्ति के स्वराज मे से उत्पन्न हुआ जनसत्तात्मक राज । ऐसा राज केवल प्रत्येक व्यक्ति के एक नागरिक के रूप मे अपने धर्म का पालन करने मे से ही उत्पन्न होता है ।

×   ×   ×

"स्वराज्य मे राजा से लेकर प्रजा तक का एक भी आदमी अशिक्षित रहे, ऐसा नहीं होना चाहिए । उसमे कोई किसी का शत्रु न हो, सब अपना अपना काम करे, कोई निरक्षर न रहे, उत्तरोत्तर उनके ज्ञान की वृद्धि होती जाय, सारी प्रजा मे कम से कम बीमारियॉ हो, कोई भी दरिद्री न हो, परिश्रम करनेवाले को बराबर काम मिलता रहे, जुआ, शराबखोरी मद्यपान और व्यभिचार न हो, वर्ग-विग्रह न हो । धनिक अपने धन का विवेकपूर्वक उपयोग करे—भोग विलास की [illegible]

पत्थर की काया

" जो अपनी काया को पत्थर बनाकर रहता है वह एक ही जगह बैठे हुए सारे संसार को हिलाया करता है। पत्थर को कौन मार सकता है? जिस मनुष्य ने अपने शरीर को इस प्रकार पत्थर बना लिया है उसको इस दुनिया में कौन परास्त कर सकता है? मनुष्य में पत्थर और ईश्वर दोनों का मिलाप होता है। मनुष्य क्या है? चेतनामय पत्थर है। इसी से हमारे शास्त्र हमें शिक्षा देते हैं कि जिसने पूरी तरह देह-दमन कर लिया है बस, उसी की पूरी विजय है।"

—नवजीवन। [हि० न० जी० '४।१०।२१ पृष्ठ ६५]

स्वतन्त्रता सब से चञ्चल स्त्री है

"हमारे राष्ट्रीय इतिहास के इस युग में निर्जीव यन्त्र के जैसा बहुमत किसी काम का नहीं। स्वतन्त्रता इस संसार में सब से अधिक चञ्चल और स्वच्छन्द स्त्री है। यह दुनिया में सबसे बड़ी मोहिनी है। इसको प्रसन्न करना बड़ा कठिन काम है। यह अपना मन्दिर जेलखानों में तथा इतनी ऊंचाई पर बनाती है कि वहां जाते जाते आंखों में अंधेरी छा जाती है, और हम [illegible] हिमालय की चोटी के सदृश ऊंचाई पर बने इस मन्दिर तक जाने की आशा से कंटीली कंकरीली पहाड़ियों में लहूलुहान पैरों से मंजिल तय करते हुए देखकर खिलखिला कर हंसती है।"

—[illegible]]

स्वार्थसाधकों से डरो!

लड़ाई के बाद गरीबों का प्राधान्य

"इसमे शक नहीं कि इस लड़ाई के अन्त मे धनिकों की सत्ता का अन्त होनेवाला है, और गरीबों का सिक्का चलनेवाला है। फिर चाहे वह शरीरबल से चले या आत्मबल से।'

—सेवाग्राम, २७।४।४२ ह० से० [illegible] पृष्ठ [illegible]]

महायुद्ध का परिणाम

" मेरा अपना विचार तो यह है कि इस भीषण युद्ध का भी वही अन्त होगा, जो महाभारत के प्राचीन युद्ध का हुआ था। त्रावणकोर के एक विद्वान ने महाभारत को उचित ही 'मानव जाति का शाश्वत इतिहास' कहा है। उस महाकाव्य मे जो कुछ वर्णित है, सो आज हम अपनी आँखो के सामने होते देख रहे है। युद्ध मे लिप्त राष्ट्र एक दूसरे को इस क्रूरता और भयङ्करता के साथ नष्ट कर रहे है कि अन्त मे दोनों त्रस्तपस्त होकर थक जानेवाले है। युद्ध के अन्त मे जो जीतेगा, उसकी वही दशा होगी, जो पाण्डवों की हुई थी। महाभारतकार कहता है कि अर्जुन के समान गांडीवधारी महारथी को अन्त मे डाकुओं के एक छोटे से दल ने दिन दहाड़े लूट लिया था। परन्तु इस महाप्रलय मे से उस नवविधान का उदय होगा, जिसकी प्रतीक्षा संसार के करोड़ों शोषित नर नारी इतने दिनों से करते आ रहे है।

—सेवाग्राम, १०।[illegible]।४२ ह० [illegible] पृ० [illegible]]

देशी राजा

"... देशी राजाओं के लिए [illegible] एक मात्र रास्ता यही है कि वे [illegible] [illegible] स्वीकार करें [illegible]

—ह० [illegible]

राष्ट्रीय शिक्षा

"मेरी राय है कि शिक्षा की वर्तमान पद्धति इन तीन महत्वपूर्ण बातों में स दोष है —

१ इसका आधार विदेशी संस्कृति पर है जिससे देशी संस्कृति का इसमें नामोनिशान तक नहीं ।

२. यह हृदय और हाथ की संस्कृति पर ध्यान नहीं देती, सिर्फ दिमाग की संस्कृति तक ही इसकी पहुँच है ।

३ विदेशी माध्यम के द्वारा वास्तविक शिक्षा असम्भव है ।"

—य० इं० । [हि० न० जी० २।०।'२१]

हमारे विश्वविद्यालय

" हमारे देश के विश्वविद्यालयों की ऐसी कोई विशेषता होती ही नहीं । वे तो पश्चिमी विश्वविद्यालयों की एक निस्तेज और निष्प्राण नकल हैं । अगर हम उनको सिर्फ पश्चिमी सभ्यता का सोख्ता या स्याही [illegible] शायद [illegible] न होगा ।"

—[illegible]

: ११ :

सर्वोदय का आर्थिक पक्ष

" अंग्रेजी राज को कायम रखनेवाले ये धनी ही है, क्योंकि उनका स्वार्थ इसी में है। पैसा आदमी को रङ्क बना देता है ।"

—१९०८, 'हिन्द स्वराज्य']

स्वावलम्बन की मर्यादा

" हर बात में हमें 'अति सर्वत्र वर्जयेत्' के सिद्धान्त का प्रयोग कर देखना चाहिए क्योंकि मध्यम मार्ग ही सच्चा मार्ग है। स्वावलम्बन स्वमान और परमार्थ की पूर्ति के लिए जरूरी है। अगर वह इससे आगे बढ़ता है तो दोष रूप बनता है। ईश्वर का साम्राज्य कबूल करने के लिए मनुष्य को नम्रता, और आत्महित की साधना के लिए सम्मान-पूर्ण परावलम्बन दोनों आवश्यक हैं। यही सुवर्ण मध्यम मार्ग है। जो इसे छोड़ता है वह 'अतो भ्रष्टस्ततो भ्रष्ट' हो जाता है।"

—नवजीवन। हि० न० जी०, ७।८।'२९ पृ० २२६]

सच्चा अर्थशास्त्र

" अर्थ दो प्रकार के हैं परम और स्व। परम अर्थ ग्राह्य है, धर्म का अविरोधी है स्व अर्थ त्याज्य है, धर्म का विरोधी है। गान्धी शास्त्र परमार्थ का शास्त्र है और इसी कारण सच्चा अर्थशास्त्र भी है।

—हि० न० जी०, १२।८।'२१ पृ० २०]

आजीविका का अधिकार, धनोपार्जन का नहीं

" प्रत्येक उद्यमी मनुष्य को आजीविका पाने का अधिकार है मगर धनोपार्जन का अधिकार किसी को नहीं। [illegible] चोरी है। जो आजीविका से अधिक धन लेता है [illegible] हो या अनजान में, दूसरे की आजीविका [illegible] है।

—हि० न० जी० १२।८।'२१ पृ० २०]

सङ्कट है। उन्हे ईश्वर का सन्देश सुनाने की हिम्मत मै नहीं कर सकता। सामने यह जो कुत्ता बैठा है उसे ईश्वर का सन्देश सुनाना और जिनकी ऑखों मे रोशनी नहीं है, रोटी का एक टुकडा ही जिनका देवता है, उन्हे ईश्वर का सन्देश सुनाना एक-सा ही है। मै पवित्र परिश्रम का पैगाम लेकर ही ईश्वर का सन्देश उन्हे सुनाने जा सकता हूँ। सबेरे मजेदार कलेवा करके सुग्रास भोजन की प्रतीक्षा मे बैठे हुए हम जैसे लोगो के लिए ईश्वर के विषय मे वार्तालाप करना आसान है, लेकिन जिन्हे दोनो जून भूखे रहना पडता है उनसे मैं ईश्वर की चर्चा कैसे करूँ? उनके सामने तो परमात्मा केवल दाल-रोटी के ही रूप मे प्रकट हो सकते है।"

—१५।१०।'३१, 'सर्वोदय', वर्ष १, अङ्क ८, मुखपृष्ठ]

आर्थिक सङ्गठन

"मेरी राय मे हिन्दुस्तान की और सारे ससार की अर्थ व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए कि उसमे बिना खाने और कपडे के कोई भी रहने न पावे। दूसरे शब्दो मे हर एक को अपनी गुजर-बसर के लिए काफी काम मिलना ही चाहिए। यह आदर्श तभी सिद्ध होगा जब कि जीवन की प्राथमिक आवश्यकताएँ पूरी करने के साधनो पर जनता का अधिकार रहेगा। जिस प्रकार भगवान की पैदा की हुई हवा और पानी सबको मुफ्त मयस्सर होता है, या होना चाहिए, उसी तरह ये साधन भी सबको बे रोक-टोक के मिलने चाहिएँ। उन्हे दूसरो को लूटने के लिए लेन देन की चीज हरगिज नहीं बनने देना चाहिए।"

—'सर्वोदय', जनवरी, १९ [illegible]

[illegible] और [illegible] का आर्थिक सिद्धान्त

"... [illegible] सोने का प्रश्न [illegible] है। [illegible] का [illegible] मानवी नहीं, राक्षसी है।"

आर्थिक समानता

" यह चीज अहिंसक स्वतन्त्रता की मानो गुरु-कुञ्जी है। आर्थिक समानता के प्रयत्न के माने पूँजी और श्रम के शाश्वत विरोध का परिहार करना है। इसके मानी ये हैं कि एक तरफ से जिन मुट्ठी-भर धनाढ्यों के हाथ में राष्ट्र की सम्पत्ति का अधिकांश इकट्ठा हुआ है वे नीचे को उतरें, और जो करोड़ों लोग भूखे और नंगे हैं, उनकी भूमिका ऊँची उठे। जबतक मालदार लोगों और भूखी जनता के बीच यह चौड़ी खाई मौजूद है तबतक अहिंसक राज्य-पद्धति सर्वथा असम्भव है। नई दिल्ली के राजमहलों और गरीब मजदूर की झोपड़ियों में जो विषमता है वह स्वतन्त्र भारत में एक दिन भी नहीं टिक सकती क्योंकि उस समय गरीबों को उतना ही अधिकार होगा जितना कि धनवान से धनवान को। अगर सम्पत्ति का और सम्पत्ति से होने वाली सत्ता का खुशी से त्याग नहीं किया जायगा और सार्वजनिक हित के लिए उसका संविभाग नहीं किया जायगा, तो हिंसक क्रान्ति और रक्तपात अवश्यम्भावी है। मैंने ट्रस्टीशिप के सिद्धान्त का जो मजाक किया गया है उसके बावजूद भी मैं उस पर कायम हूँ। यह सच है कि उसे कार्यान्वित करना मुश्किल है। परन्तु अहिंसा की सिद्धि भी तो उतनी ही मुश्किल है।"

—बारडोली, १३।१२।'४१]

वर्ग-युद्ध

" यह कहना सही नहीं है कि [illegible]

उनकी योजना मे नहीं है। अहिंसा का मार्ग यह नहीं है। उसका प्रारम्भ व्यक्तिगत आचार से हो सकता है।   ”

—गांधी सेवा संघ सम्मेलन, डेलांग, २६।३।'३८]

× × ×

मानव समाज मे यन्त्रो का स्थान

[प्रश्न—आप यन्त्रो के सर्वथा विरुद्ध है न ?]

“ कैसे हो सकता हूँ ? जब मै समझता हूँ कि मेरा शरीर ही एक बड़ा नाजुक यन्त्र है तब यन्त्रो के खिलाफ होकर मै कहाँ रह सकता हूँ ? मेरा विरोध यन्त्रो के सम्बन्ध मे फैले दीवानेपन के साथ है, यन्त्रो के साथ नही। परिश्रम का बचाव करनेवाले यन्त्रो के सम्बन्ध मे लोगो का जो दीवानापन है उसी से मेरा विरोध है। परिश्रम की बचत इस हद तक की जाती है कि हजारो को, आखिर, भूखो मरना पड़ता है, और उन्हे बदन ढकने तक को कुछ नही मिलता। मुझे भी समय और परिश्रम का बचाव अवश्य करना है, लेकिन वह मुट्ठी भर आदमियो के लिए नही, बल्कि समस्त मानव जाति के लिए। समय और परिश्रम का बचाव करके मुट्ठी भर आदमी धनाढ्य हो उठें, यह मेरे लिए असह्य है। मै तो चाहता हूँ, हर एक का समय और परिश्रम बच जाय, सबको खाना मिले, सब पहन-ओढ सके, स्वावलम्ब हो। यही मेरी अभिलाषा है। आज यन्त्रो के कारण लाखो की पीठ पर मुट्ठीभर आदमी सवार हो बैठे है और उन्हे कुचल रहे है। क्योकि इन यन्त्रो के चलाने के मूल मे लोभ है, धन-तृष्णा है, जन कल्याण की भावना नही है।

× × ×

[प्रश्न—किन्तु यदि हम ऐसी मशीनों को स्वीकार करें तो हमें इन मशीनों के बनाने के कारखानों को भी स्वीकार करना होगा न ?]

"हाँ, किन्तु ऐसे कारखाने किसी की निजी सम्पत्ति न होंगे बल्कि सरकारी मिल्कियत होंगे । इतना 'सोशलिस्ट' मैं हूँ ।"

—नवजीवन । हि० न० जी०, २।११।'२४, पृष्ठ ९०–९१ श्री रामचन्द्रन से बातचीत के सिलसिले में]

× × ×

पश्चिम की स्पर्धा सर्वनाश का पथ है

" हमें समझ लेना चाहिए कि पाश्चात्य लोगों के साधनों द्वारा पश्चिमी देशों की स्पर्धा में उतरना अपने हाथों अपना सर्वनाश करना है। इसके विपरीत अगर हम यह समझ सकें कि इस युग में भी जगत् नैतिक बल पर ही टिका हुआ है, तो अहिंसा की असीम शक्ति में हम अडिग श्रद्धा रख सकेंगे और उसे पाने का प्रयत्न कर सकेंगे ।

—नवजीवन । हि० न० जी० ५।९। [illegible]

× × ×

ग्रामों का सर्वनाश

: १२ :

चरखा-खादी

जायगी। चरखा, माला और रामनाम ये मेरे लिए जुदी जुदी चीज नहीं। मुझे तो ये तीनो सेवा धर्म की शिक्षा देती है। सेवा धर्म का पालन किये बिना मै अहिंसा-धर्म का पालन नही कर सकता। और अहिंसा धर्म का पालन किये बिना मै सत्य की खोज नहीं कर सकता और सत्य के बिना धर्म नहीं। सत्य ही राम है, नारायण है, ईश्वर है, खुदा है, अल्ला है, 'गाड' है।"

—नवजीवन। [हि० न० जी० १०।८।२४ पृष्ठ ४१०]

चरखा

"चरखा तो लँगड़े की लाठी है—सहारा है। भूखे को दाना देने का साधन है। निर्धन स्त्रियो के सतीत्व की रक्षा करने वाला किला है।"

—नवजीवन। [हि० न० जी० [illegible] पृष्ठ ५२]

खादी

"स्वराज के समान ही खादी भी राष्ट्रीय जीवन के लिए श्वास के जितनी ही आवश्यक है। जिस तरह स्वराज को हम नहीं छोड़ सकते है, उसी तरह खादी को भी नहीं छोड़ सकते। खादी को छोड़ने के मानी होंगे भारतीय जनता को [illegible], भारतवर्ष की आत्मा को [illegible] देना।"

—[illegible]

बैठा है, तो वही मिट्टी कामधेनु बन जाती है। निरी मिट्टी मे क्या पडा है? दूसरा आदमी उसे उठाकर फेंक देगा। मिट्टी में शङ्कर नही है। श्रद्धा ही शङ्कर है।"

—गांधी सेवा सघ सम्मेलन, वृन्दावन (बिहार)। ३।५।'३९]

मन्त्र मे शक्ति की भावना

"मेरे लिए तो चरखा अहिंसा की प्रतिमा है। उसका आधार, जैसा कि मैं कह चुका हूँ, सङ्कल्प है। रामनाम की भी वही बात है। रामनाम मे कोई स्वतन्त्र शक्ति नही है। वह कोई कुनैन की गोली नहीं है। कुनैन की गोली मे स्वतन्त्र शक्ति है। उसमे कोई विश्वास करे या न करे। वह 'अ' को मलेरिया हुआ तो भी काम देती है और 'ब' को हुआ तो भी काम देती है। रामनाम मे ऐसी स्वतन्त्र शक्ति नहीं है। मन्त्र मे शक्ति सङ्कल्प से आती है।"

—गा० से० स० सम्मेलन, वृन्दावन (बिहार) ५।५।'३९]

चर्खा

"एक अंग्रेज महाकवि ने पूर्व और पश्चिम की टक्कर का भव्य चित्र खींचा है। जब रोमन साम्राज्य अपनी सत्ता से मदान्ध और उच्छृंखल होकर पूर्व पर आँधी की तरह चढ आया, तो पूर्व ने अप्रतिकार भाव से स्वागत किया। वह छोटे पौधो की तरह जरा झुक गया। आँधी निकल गई और पूर्व फिर सिर ऊँचा करके ध्यानावस्थित हो गया। मेरे निकट चर्खा अतीतकालिक पूर्व की इसी शाश्वत नीति का चिह्न है।

—ह० से० १३।११।'३८, पृ० ३८६]

चरखे की शक्ति का रहस्य

"... एक आदर्श है। वह [illegible] तो देता है लेकिन उसका दिल ऊपर को जाता है नीचे को [illegible] है, [illegible] [illegible] है

श्रद्धा क्योंकर फलीभूत नहीं होती ? अगर हम चरखे में ऐसी श्रद्धा रख सके तो हमारे लिए वह प्राणवान प्रतिमा बन जाय। तब हम उसमें अपनी समस्त सङ्कल्प-शक्ति और हृदय लगा दे। चरखा तो हमारे लिए अहिंसा का प्रतीक है। असली चीज़ मूर्त्ति नहीं, हमारी दृष्टि है। एक दृष्टि से ससार सही है, दूसरी दृष्टि से ईश्वर ही एक मात्र सत्य है। अपनी-अपनी दृष्टि से दोनों बातें सत्य है, यदि हम अपने प्रतीक में ईश्वर का साक्षात्कार कर सके तो हमारे लिए वह भी सच हो जाता है।"

चरखा माला है !

"... एकाग्रता के लिए चरखा ही मेरी माला है।"

—गाधी सेवा सघ सम्मेलन, हुदली। २०।४।'३७]

खादी का अर्थशास्त्र

"· खादी का अर्थशास्त्र सामान्य अर्थशास्त्र से भिन्न है। सामान्य अर्थशास्त्र की रचना प्रतिस्पर्धा के तत्व पर हुई है, और उसमे स्वदेश-प्रेम, भावना और मानवता का बहुत थोडा भाग रहता है, बल्कि यह कहना चाहिए कि बिल्कुल नही रहता, जब कि खादी के अर्थशास्त्र की रचना स्वदेश-प्रेम, भावना और मानवता के तत्त्व पर हुई है।"

—ह० से० ३०।७।'३८, पृष्ठ १८९]

चरखा अहिंसा का प्रतीक

"मै तो चरखे को सविनय भग की अपेक्षा अहिंसा का अधिक अच्छा प्रतीक मानता हूॅ।"

चरखा · सङ्कल्प का बल

"यों तो चरखा जड वस्तु है। उसमे शक्ति सङ्कल्प से आती है। हम उसकी साधना करे। मिट्टी मे क्या पडा है ? पर कोई भक्त मिट्टी

बैठा है, तो वही मिट्टी कामधेनु बन जाती है। निरी मिट्टी में क्या पड़ा है? दूसरा आदमी उसे उठाकर फेंक देगा। मिट्टी मे शङ्कर नही है। श्रद्धा ही शङ्कर है।"

—गांधी सेवा संघ सम्मेलन, वृन्दावन (बिहार)। ३।५।'३९]

मन्त्र मे शक्ति की भावना

"मेरे लिए तो चरखा अहिंसा की प्रतिमा है। उसका आधार, जैसा कि मैं कह चुका हूँ, सङ्कल्प है। रामनाम की भी वही बात है। रामनाम मे कोई स्वतन्त्र शक्ति नहीं है। वह कोई कुनैन की गोली नही है। कुनैन की गोली मे स्वतन्त्र शक्ति है। उसमे कोई विश्वास करे या न करे। वह 'अ' को मलेरिया हुआ तो भी काम देती है और 'ब' को हुआ तो भी काम देती है। रामनाम में ऐसी स्वतन्त्र शक्ति नहीं है। मन्त्र मे शक्ति सङ्कल्प से आती है।"

—गा० से० सं० सम्मेलन, वृन्दावन (बिहार), ५।५।'३९]

चर्खा

"एक अंग्रेज महाकवि ने पूर्व और पश्चिम की टक्कर का भव्य चित्र खींचा है। जब रोमन साम्राज्य अपनी सत्ता से मदान्ध और उच्छृंखल होकर पूर्व पर आँधी की तरह चढ आया, तो पूर्व ने अप्रतिकार भाव से स्वागत किया। वह छोटे पौधे की तरह जरा झुक गया। आँधी निकल गई और पूर्व फिर सिर ऊँचा करके ध्यानावस्थित हो गया। मेरे निकट चर्खा अतीतकालिक पूर्व की इसी शाश्वत नीति का चिह्न है।

—ह० से० १६।३।'४०, पृ० ६८६]

चरखे की शक्ति का रहस्य

" · एक आदमी है। वह खाना तो देता है [illegible] लेकिन उसका दिल ऊपर को उठता है, नीचे को जाता है [illegible] और [illegible]

तो वह माला उसको गिराती है। वह झूठा आश्वासन लेता है कि मैं माला फेरता हूँ। वहाँ माला से ईश्वर का अनुसन्धान नहीं है। वह कितना ही माला फेरता रहे, ज्यों का त्यों रहेगा। उसको अंगुलियों में कष्ट होना शुरू हो जाता है। उसकी माला निकम्मी ही नहीं, नुकसानदेह भी है। क्योंकि उसमें दम्भ है। माला अनेक धर्मों में अनादिकाल से नामस्मरण का साधन रही है। लेकिन जहाँ ध्यान और अनुसन्धान नहीं है वहाँ दम्भ ही रह जाता है। इस तरह माला फेरनेवाला ईश्वर को धोखा देता है और जगत को भी।

"यही बात चरखे पर लागू है। चरखे मे मैंने जो शक्ति पाई है वह यदि आप न पावे, जैसी मेरी श्रद्धा है वैसी अगर आपकी न हो तो वह चरखा ही आपका नाश करेगा। ... अगर जडवत् माला फेरने मे दम्भ है तो यन्त्रवत् चरखा चलाने मे आत्म-वञ्चना है।"

चरखा की महिमा

"......चरखा वह मध्यवर्ती सूर्य है जिसके गिर्द अन्य सब तारागण घूमते है। ओक नाम के वृक्ष का बीज कितना छोटा होता है। लेकिन जहाँ एक बार उसकी जड जमी कि उसका विस्तार होता जाता है और वह कितनी ही वनस्पतियो को आश्रय देता है। अगर चरखे की वृत्ति फैल गई तो सिर्फ चरखा ही थोडे रहनेवाला है। उसकी छाया मे असख्य उद्योगो को स्थान मिलेगा। उसकी सुगन्ध से सारी दुनिया सुगन्धित हो जायगी।"

"यह सच है कि सारी चीजें चरखे से ही निकली है। ग्राम उद्योग संघ उसीमें से निकला है। अस्पृश्यता-निवारण और नई तालीम उसीके फल है। मेरी प्रवृत्तियों की ग्रहमाला का वही सूर्य है।"

—गा० से० स० सम्मेलन, मालिकान्दा (बगाल), २१।२।'४०]

: १३ :

हिन्दू-मुस्लिम समस्या

भारतवर्ष एक पक्षी है

" ' भारतवर्ष एक पक्षी है। हिन्दू और मुसलमान उसके दो पंख है। आज ये दोनो पख अपङ्ग हो गये है ओर पक्षी आस्मान में उडकर स्वतन्त्रता की आरोग्यप्रद और शुद्ध हवा लेने मे असमर्थ हो गया है।"

—'कामरेड'। हि० न० जी० २।११।'२४, पृष्ठ ९५]

हृदय-मन्दिर की चुनाई पहले

" ईंट-चूने की चुनाई के पहले हृदय मन्दिर की चुनाई बहुत जरूरी है। अगर यह हो जाय तो और सब तो हुआ ही है।"

—नवजीवन। हिं० न० जी०, १९।९।' २०, पृष्ठ ३३]

हिन्दू-मुसलमान

" 'मेरा निजी अनुभव इस ख्याल को मजबूत करता है कि मुसलमान प्रायः गुण्डे होते है और हिन्दू अमूमन नामर्द।"

—हिं० न० जी० १।६।'२४, पृष्ठ ३३६]

हिन्दू धर्म और इस्लाम

"हिन्दू धर्म का दूसरा नाम कमजोरी और इस्लाम का शारीरिक बल हो गया है।"

—ह० से० ६।१।'४०, पृष्ठ ३७५]

हिन्दू-मुस्लिम मित्रता

" ' 'हिन्दू-मुस्लिम मित्रता का हेतु है भारत के लिए और सारे ससार के लिए एक मगलमय प्रसाद होना, क्योकि इसकी कल्पना के मूल में शान्ति और सर्वभूत-हित का समावेश किया गया है। इमने

भारत में सत्य और अहिंसा को अनिवार्य रूप से स्वराज्य प्राप्त करने का साधन स्वीकार किया है। इसका प्रतीक है चरखा—जो सादगी, स्वावलम्बन, आत्मसंयम, स्वेच्छापूर्वक करोड़ो लोगों में सहयोग, का प्रतीक है।"

—य० इ० । हिं० न० जी०, २४।८।'२४, पृष्ठ १२]

हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य की समस्या

हिन्दुओं का भय मूल कारण है

" 'जबतक हिन्दू डरा करेंगे तबतक झगड़े होते ही रहेंगे। जहाँ डरपोक होता है तहाँ डरानेवाला हमेशा मिल ही जाता है। हिन्दुओं को समझ लेना चाहिये कि जबतक वे डरते रहेंगे तबतक उनकी रक्षा कोई न करेगा। मनुष्य का डर रखना यह सूचित करता है कि हमारा ईश्वर पर अविश्वास है। जिन्हें यह विश्वास न हो कि ईश्वर हमारे चारों ओर है, सर्वव्यापी है, या यह विश्वास शिथिल हो वे अपने बाहुबल पर विश्वास रखते हैं। हिन्दुओं को दो में से एक बात प्राप्त करनी होगी। यदि ऐसा न करेंगे तो हिन्दू जाति के नष्ट हो जाने की सम्भावना है।"

दो मार्ग

"पहला मार्ग है—केवल ईश्वर पर विश्वास रखकर मनुष्य का डर छोड़ देना। यह अहिंसा का रास्ता है और उत्तम है। दूसरा बाहुबल का अर्थात् हिंसा का मार्ग। दोनों मार्ग हमारे लिए प्रशस्त हैं। और इन दो में से किसी भी एक को ग्रहण करने का अधिकार है। पर एक आदमी एक ही समय दोनों का उपयोग नहीं कर सकता।

यदि हिन्दू और मुसलमान दोनों बाहुबल का ही सहारा ग्रहण करना चाहते हों तो [illegible]

उचित है । तलवार के न्याय से ही यदि सुलह करनी हो तो दोनों को पहले खूब लड लेना होगा, खून की नदियाँ बहेगी । दो-चार खून होने या पाँच-पचीस मन्दिर तोडने से फैसला नहीं हो सकता ।"

तपश्चर्या का मार्ग

"यदि हम मुसलमानों के दिल को जीतना चाहें तो हमे तपश्चर्या करनी होगी; हमें पवित्र बनना होगा । हमें अपने ऐबो को दूर कर देना होगा । अगर वे हमारे साथ लडे तो हमे उलटकर प्रहार न करते हुए हिम्मत के साथ मरने की विद्या सीखनी होगी । डर कर, औरतो, बाल-बच्चो और घर-बार को छोडकर भाग जाना और भागते हुए मर जाना मरना नहीं कहाता, बल्कि उनके प्रहार के सामने खडा रहना और हँसते-हँसते मरना हमें सीखना पड़ेगा ।"

बाजे का प्रश्न

" 'हिन्दू धर्म की कोई भी विधि ऐसी नहीं है जो बिना बाजा बजाये हो सकती हो । कितनी ही विधियाँ तो ऐसी हैं जिनमे शुरू से अखीर तक बाजा बजाना जरूरी है । हाँ, इसमे भी हिन्दुओ को इतनी चिन्ता जरूर रखनी चाहिये कि मुसलमानो का दिल न दुखने पाये । बाजा धीमे बजाया जाय, कम बजाया जाय । यह सब लेन-देन की नीति के अनुसार हो सकता है और होना चाहिये । कितने ही मुसलमानो के साथ बाते करने से मुझे ऐसा मालूम होता है कि इस्लाम में ऐसा कोई फरमान नहीं है जिससे दूसरों के बाजे को बन्द करना लाजिमी हो । इसलिए मस्जिद के सामने विधर्मी के बाजे बजाने से इस्लाम को धक्का नहीं पहुँचता । अतएव यह बाजे का सवाल झगडे का मूल न होना चाहिये ।"

" 'कितनी ही जगह मुसलमान भाई जबर्दस्ती बाजे बन्द कराना चाहते हैं। यह नागवार है। जो बात विनय की खातिर की जा सकती है वह जोरो-जब्र की खातिर नहीं की जा सकती। विनय के सामने झुकना धर्म है, जोरो-जब्र के सामने झुकना अधर्म है। मार के डर से यदि हिन्दू बाजे बजाना छोड़ें तो हिन्दू न रहेंगे। इसके लिए सामान्य नियम इतना ही बताया जा सकता है कि जहाँ हिन्दुओं ने समझ-बूझकर बहुत समय से मस्जिद के सामने बाजे बन्द करने का रिवाज रखा है वहाँ उन्हें उसका पालन अवश्य करना चाहिये। जहाँ वे हमेशा बाजे बजाते आये हैं वहाँ उन्हें बजाने का अधिकार होना चाहिये।'

जहाँ मुसलमान बिल्कुल न मानें, अथवा जहाँ हिन्दुओं पर जबर्दस्ती किये जाने का अन्देशा हो, और जहाँ अदालत से बाजा बजाना बन्द न किया गया हो वहाँ हिन्दुओं को निडर होकर बाजा बजाते हुए निकलना चाहिये और मुसलमान चाहे कितनी ही मारपीट करें हिन्दू उसे सहन करें। इस तरह जितने बाजे बजानेवाले वहाँ मिलें सब अपना बलिदान वहाँ कर दें—इसमें धर्म और आत्म सम्मान दोनों की रक्षा होगी।

—नवजीवन। हि० न० जी० [illegible] १९।२२, पृ० [illegible]

हिन्दू-मुस्लिम समस्या सत्याग्रह के प्रकाश में

" मैं मानता हूँ कि काफी मुसलमान ऐसे भी हैं, जो हिन्दुओं को काफिर मानते हैं, और उनसे मेल नहीं चाहते हैं। लेकिन मुसलमानों के दिल में दुश्मनी नहीं है। बहुत से यह भी मानते हैं कि हिन्दू हमारे देश भाई हैं, और उनके साथ हिलमिल रहने में ही दोनों की भलाई और तरक्की है। पर हम तो [illegible] [illegible] के [illegible] रहने और दिलों [illegible] है। हम [illegible] लिये [illegible]

लिए भी हम पर छुरी चलाना अशक्य हो जाय। आखिर क्या हमी मनुष्य हैं और वे नहीं हैं ? एक दिन मनुष्यता की कद्र वे भी करने वाले हैं। हमारा इलाज उनकी समझ में किसी न किसी दिन जरूर आवेगा। यह सवाल हृदय की एकता का है। राज्य-प्रकरण की सौदागिरी से थोड़ी देर के लिए झगड़े भले ही बन्द हो जायँ, लेकिन दिल एक नहीं होने वाला है। ..."

—गाधी सेवासघ मम्मेलन, डेलाग, २६।३।'३८]

× × ×

"...अहिंसा की दृष्टि से चाहे स्वराज्य हो या न हो, हिन्दू-मुस्लिम एकता तो होनी ही है। हिन्दू-मुस्लिम एकता हमारे लिए स्वराज्य का साधन नहीं है।......मैं जिस तरह इस चीज को मानता हूँ उस तरह हजार आदमी भी आज नही मानते। जैसे मै यह कहता हूँ कि असत्य या हिसा से स्वराज्य मिले तो मुझे नही चाहिए, उसी तरह मैं आज यह भी कहना चाहता हूँ कि अगर हिन्दू-मुस्लिम एकता के बिना स्वराज्य मिले तो मुझे ऐसा स्वराज्य भी नहीं चाहिए।.. "

—गाधी सेवा सघ मम्मेलन, डेलाग, २८।३।'३८]

हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्य

"... यह सच है कि हिन्दू-मुसलमानो के झगडे का एक खास कारण तीसरी ताकत की हस्ती है। लेकिन मै यह नही मानता कि केवल उस तीसरी ताकत को परास्त कर देने से झगडा मिट जायगा। .... मेरे पास तो स्वराज्य प्राप्त करने का और हिन्दू मुसलमान एकता का एकही इलाज है, वह है सत्याग्रह।..."

—गांधी सेवा सघ सम्मेलन, डेलाग, २६।३।'३८]

हिन्दुओं और मुसलमानों के दु स्वप्न

" हिन्दुओं के लिए यह आशा करना कि इस्लाम, ईसाई धर्म और पारसी धर्म हिन्दुस्तान से निकाल दिया जा सकेगा, एक निरर्थक स्वप्न है। इसी तरह मुसलमानों का भी यह उम्मीद करना कि किसी दिन अकेले उनके कल्पनागत इस्लाम का राज्य सारी दुनिया में हो जायगा, कोरा ख्वाब है। पर अगर इस्लाम के लिए एक ही खुदा को तथा उसके पैगम्बरों की अनन्त परम्परा को मानना काफी हो तो हम सब मुसलमान हैं इसी तरह हम सब हिन्दू और ईसाई भी . । सत्य किसी एक ही धर्मग्रन्थ की ऐकान्तिक सम्पत्ति नहीं है।'

—[illegible] य० इ०। हि० न० जी०, २८।५।'२१ पृष्ठ ५४।

साम्प्रदायिक वातावरण

" आज तो आकाश [illegible] बादलों से घिरा हुआ है। पर मैं उम्मीद नहीं छोड़ूँगा कि ये बादल तितर बितर हो जायेंगे और हमारे अभागे देश में साम्प्रदायिक ऐक्य जरूर पैदा होगा। यदि मुझ से कोई पूछे कि इसका सबूत दूँ, तो मेरा जवाब यह होगा कि मेरी आशा की बुनियाद तो श्रद्धा है और श्रद्धा को सबूत की कोई जरूरत नहीं।

—ह० से०, [illegible] पृ० [illegible]।

मुसलमानों के अन्दर गलत प्रचार

" धर्म तो इन्सान को ईश्वर के साथ जोड़ता है और इन्सान को इन्सान के साथ। क्या इस्लाम सिर्फ [illegible] को [illegible] के ही साथ जोड़ता है और हिन्दू के साथ [illegible] [illegible] [illegible] हिन्दुओं और [illegible] [illegible]

यही खुराक देनी है, जिसे मै केवल जहर ही कह सकता हूँ ? जो लोग यह जहर मुसलमानों के दिलो मे भर रहे हैं वे इस्लाम की बडी भारी कुसेवा कर रहे है । मैं जानता हूँ कि यह इस्लाम नहीं है । . ”

—ह० से०, ४।५।’४० पृष्ठ १००]

पाकिस्तान

“. मैं तो कह चुका हूँ कि पाकिस्तान एक ऐसा ‘असत्य’ है जो टिक ही नही सकता । ज्यो ही इस योजना के बनाने वाले इसे अमल मे लाने बैठेंगे, उन्हे पता चल जायगा कि यह अमल मे लाने जैसी चीज ही नहीं है ।”

—ह० से० १८।५।’४०, पृष्ठ ११३]

: १४ :

स्त्रियाँ और उनकी समस्याएँ

स्त्री

"स्त्री क्या है ? साक्षात् त्यागमूर्ति है। जब कोई स्त्री किसी काम में जी-जान से लग जाती है तो वह पहाड को भी हिला देती है।"

—य० इं० । हिं० न० जी०, २५।१२।'२१]

स्त्री पुरुष से श्रेष्ठ है

"··स्त्री को अबला कहना उसका अपमान करना है। उसे अबला कहकर पुरुष उसके साथ अन्याय करता है। अगर ताकत से मतलब पाशवी ताकत से है तो निस्सन्देह पुरुष की अपेक्षा स्त्री मे कम पशुता है पर अगर इसका मतलब नैतिक शक्ति से है तो अवश्य ही पुरुष की अपेक्षा स्त्री कही अधिक शक्तिशालिनी है। क्या स्त्री मे पुरुष से अपेक्षाकृत अधिक प्रतिभा नहीं है ? क्या उसका आत्मत्याग पुरुष से बढकर नहीं है ? उसमें सहन शक्ति की कमी है ? साहस का अभाव है ? बिना स्त्री के पुरुष हो नहीं सकता। अगर अहिंसा हमारे जीवन का ध्यान-मन्त्र है तो कहना होगा कि देश का भविष्य स्त्रियों के हाथ मे है।"

—य० इं० । हिं० न० जी० १०।४।'३०, पृष्ठ ३७७]

स्त्री, धर्म का अवतार

"बिना सहन-शक्ति और धैर्य के धर्म की रक्षा असम्भव है। स्त्री सहन-शक्ति की साक्षात् प्रतिमूर्ति है, धैर्य का अवतार है। धर्म के मूल में श्रद्धा रही है। जहाँ श्रद्धा नहीं, वहाँ धर्म नहीं। स्त्री की श्रद्धा के साथ पुरुष की श्रद्धा की कोई तुलना नहीं हो सकती।"

—ह० से०, ७।४।'३३]

स्त्री पुरुष की गुड़िया नहीं

"स्त्री में जिस प्रकार बुरा करने की, लोक का नाश करने की शक्ति है, उसी प्रकार भला करने की, लोक-हितसाधन करने की शक्ति भी उसमें सोई हुई पड़ी है, यह भान अगर स्त्री को हो जाय तो कितना अच्छा हो! अगर वह यह विचार छोड़ दे कि वह खुद अबला है और पुरुष के खेलने की गुड़िया होने के ही योग्य है तो वह खुद अपना और पुरुष का (फिर चाहे वह उसका पिता हो, पुत्र हो, या पति हो) जन्म सुधार सकती है, और दोनों के ही लिए इस संसार को अधिक सुखमय बना सकती है।

× × ×

"अधिकांशत बिना किसी कारण के ही मानव प्राणियों का संहार करने की जो शक्ति पुरुष में है उस शक्ति में उसकी बराबरी करने में स्त्री मानव जाति का सुधार नहीं करता। पुरुष की इस भूल से पुरुष के साथ साथ स्त्री का भी विनाश होनेवाला है, उस भूल में से पुरुष को बचाना उसका परम कर्तव्य है, यह स्त्री को समझ लेना चाहिए।

—हि० न० २१।११, [illegible]]

स्त्री की स्वाधीनता

" 'स्त्री पुरुष की गुलाम नहीं है। वह अर्द्धांगिनी है, सहधर्मिणी है। उसको मित्र समझना चाहिए।"

—हि० न० जी० ४।३।'२६, पृष्ठ २३१, श्री रामेश्वरप्रसाद नेवटिया के साथ जमनालालजी की बड़ी लड़की श्री कमलाबाई के विवाह के समय दिये गये आशीर्वादात्मक भाषण से]

विषयेच्छा

"विषयेच्छा एक सुन्दर और श्रेष्ठ वस्तु है, इसमें शर्म की कोई बात नहीं है। किन्तु यह है सन्तानोत्पत्ति के लिए ही। इसके सिवा इसका कोई उपयोग किया जाय तो वह परमेश्वर और मानवता के प्रति पाप होगा।"

—ह० से०, २८।३।'३६, पृष्ठ ४५]

कृत्रिम सन्तति-निग्रह

"सन्तति-निग्रह के कृत्रिम उपाय किसी न किसी रूप मे पहले भी थे और बाद में भी रहेंगे; परन्तु पहले उनका उपयोग पाप माना जाता था। व्यभिचार को सद्‌गुण कहकर उसकी प्रशंसा करने का काम हमारे ही युग के लिए सुरक्षित रक्खा हुआ था।"

× × ×

"मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं कि जो विद्वान स्त्री-पुरुष सन्तति-निग्रह के कृत्रिम साधनों के पक्ष में बड़ी लगन के साथ प्रचार-कार्य कर रहे हैं वे, इस झूठे विश्वास के साथ कि इससे उन बेचारी स्त्रियों की रक्षा होती है जिन्हें अपनी इच्छा के विरुद्ध बच्चों का भार सम्हालना

पड़ता है, देश के युवकों की ऐसी हानि कर रहे हैं जिसकी कभी पूर्ति नहीं हो सकती।

× × ×

"इस प्रचार कार्य से सबसे बड़ी जो हानि हो रही है वह तो पुराने आदर्श को छोड़कर उसकी जगह एक ऐसे आदर्श को अपनाना है, जो अगर अमल में लाया गया तो जाति का नैतिक तथा शारीरिक सर्वनाश निश्चित है।"

—ह० से० २८।३।'३६, पृष्ठ ४५]

सन्तति-निरोध और नारी

[प्रश्न—सन्तति-निरोध के लिए स्त्रियाँ संयम करना चाहें पर पुरुष बलात्कार करें तब क्या किया जाय?]

"यह तो सच्चे स्त्रीधर्म का सवाल है। स्त्रियों को मैं पूजता हूँ पर उन्हें कुएँ में नहीं गिराना चाहता। स्त्री का सच्चा धर्म तो द्रौपदी ने बताया है। पति अगर गिरता हो तो स्त्री न गिरे। स्त्री के संयम में बाधा डालना शुद्ध व्यभिचार है। यदि वह बलात्कार करने आवे तो उसे थप्पड़ मारकर भी बाधा करना उसका धर्म है। व्यभिचारी पति के लिए वह दरवाजा बन्द कर दे। अधम पति की पत्नी बनने से इन्कार करना चाहिए। ऐसे स्त्रियों में अन्दर यह हिम्मत पैदा कर देनी चाहिए।

—[illegible]]

कृत्रिम सन्तति-निग्रह

जीवन-शक्ति को चूस लेगा । आसुरी वृत्ति के खिलाफ युद्ध करने से इन्कार करना नामर्दी है ।''

—ह० से०, २४।४।'३७ पृष्ठ ८०]

आजकल की लड़कियाँ और आत्म-रक्षा

"· लेकिन मुझे यह भी डर है कि आजकल की लड़की को भी तो अनेक मजनुओं की लैला बनना प्रिय है । वह दुस्साहस को पसन्द करती है । · आजकल की लड़की वर्षा या धूप से बचने के उद्देश्य से नहीं, बल्कि लोगों का ध्यान अपनी ओर खींचने के लिए तरह-तरह के भड़कीले कपड़े पहनती है । वह अपने को रँगकर कुदरत को भी मात करना और असाधारण सुन्दर दिखाना चाहती है । ऐसी लड़कियों के लिए कोई अहिंसात्मक मार्ग नहीं है ।···हमारे हृदय में अहिंसा की भावना के विकास के लिए भी कुछ निश्चित नियम होते हैं । अहिंसा की भावना एक बहुत महान् प्रयत्न है । विचार और जीवन-प्रणाली में यह क्रान्ति उत्पन्न कर देता है । यदि मेरी पत्र-लेखिका और उस तरह से विचार रखनेवाली लड़कियाँ ऊपर बताये गये तरीके से अपने जीवन को बिल्कुल ही बदल डालें तो उन्हें जल्दी ही यह अनुभव होने लगेगा कि उनके सम्पर्क में आनेवाले नौजवान उनका आदर करना तथा उनकी उपस्थिति में भद्रोचित व्यवहार करना सीखने लगे हैं । लेकिन यदि उन्हें मालूम होने लगे कि उनकी लाज और धर्म पर हमला होने का खतरा है, तो उनमें उस पशु-मनुष्य के आगे आत्म-समर्पण करने के बजाय मर जाने तक का साहस होना चाहिए ।''

—ह० से०, ३१।१२।'३८, पृष्ठ ३७१]

× × ×

स्त्रियों को निर्भय होने की आवश्यकता

“ लेकिन असल चीज तो यह है कि स्त्रियाँ निर्भय बनना सीख जायँ । मेरा यह दृढ विश्वास है कि कोई भी स्त्री जो निडर है और जो दृढतापूर्वक यह मानती है कि उसकी पवित्रता ही उसके सतीत्व की सर्वोत्तम ढाल है, उसका शील सर्वथा सुरक्षित है । ऐसी स्त्री के तेजमात्र से पशुपुरुष चौंधिया जायगा और लाज से गड जायगा ।”

—सेवाग्राम २३।२।४२। [ह० से० १।३।’४२ पृष्ठ ६०]

पत्नी के प्रति पति का कर्तव्य

“ तुम अपनी पत्नी की आबरू की रक्षा करना और उसके मालिक मत बन बैठना, उसके सच्चे मित्र बनना । तुम उसका शरीर और आत्मा वैसे ही पवित्र मानना जैसे कि वह तुम्हारा मानेगी । ”

—य० इ० । [हि० न० जी० [illegible] । २८ पृष्ठ [illegible] पुत्र रामदास गांधी के विवाह के समय दिये आशीर्वाद से]

स्त्री के प्रति पति का व्यवहार

[प्रश्न—मैं २६ बरस का नवयुवक हूँ । पिछले दो साल से [illegible] खादी का इस्तेमाल कर रहा हूँ । पिछले २८ दिन से [illegible] हूँ । मगर मेरी पत्नी खादी पहनने से इनकार करती है । कहती है, [illegible] हैं । क्या मैं उसे खादी इस्तेमाल करने के लिए मजबूर करूँ [illegible] कहता हूँ कि हमारे स्वभाव नहीं मिलते ।]

“भारतीय जीवन में [illegible] नहीं रहा है । [illegible] कि पति ज्यादा [illegible] और शिक्षित होता है इसलिए उसे अपनी पत्नी का गुरु बन जाना चाहिए और [illegible] करना चाहिए । [illegible]

सहन ही करना है और अपनी पत्नी को प्रेम से जीतना है, दबाव डालकर हर्गिज नहीं। इससे यह नतीजा निकला कि आप अपनी पत्नी को खादी इस्तेमाल करने के लिए मजबूर नहीं कर सकते। आपको विश्वास रखना चाहिए कि आपका प्रेम और आचरण उससे सही बात करवा लेगा। याद रखिए, जैसे आप उसकी सम्पत्ति नहीं है वैसे ही आपकी पत्नी आपकी सम्पत्ति नहीं है। वह आपका आधा अङ्ग है। आप उसके साथ यही समझकर व्यवहार कीजिए। आपको इस प्रयोग पर अफसोस नहीं होगा।"

—ह० से० १७।२।'४०, पृष्ठ १]

स्त्री-पुरुष समस्या

क. मूल मे एक है :

" मेरी अपनी राय तो यह है कि जैसे मूल मे स्त्री और पुरुष एक हैं, ठीक उसी तरह उनकी समस्या का तत्त्व भी असल मे एक ही है। दोनों में एकही आत्मा विराजमान है। दोनो एकही प्रकार का जीवन बिताते है। दोनों की एकही भाँति की भावनाएँ है। एक दूसरे का पूरक है। एक की असली सहायता के बिना दूसरा जी नहीं सकता।"

× × ×

ख. पर भिन्न भी है :

"फिर भी इसमे कोई शक नहीं कि एक जगह पहुँचकर दोनों के काम अलग-अलग हो जाते हैं। जहाँ यह बात सही है कि मूल मे दोनों एक है, वहाँ यह भी उतना ही सच है कि दोनो की शरीर-रचना एक-दूसरे से बहुत भिन्न है। इसलिए दोनो का काम भी अलग अलग ही होना चाहिए। मातृत्व का धर्म ऐसा है जिसे अधिकाश स्त्रियाँ सदा ही

धारण करती रहेगी। मगर उसके लिए जिन गुणों की आवश्यकता है उनका पुरुषों में होना जरूरी नहीं है। वह सहने वाली है, वह करने वाला है। वह स्वभाव से घर की मालकिन है, वह कमाने वाला है। वह कमाई की रक्षा करती और बाँटती है। वह हर माने में पालक है। मानव जाति के दुधमुँहे बच्चों को पाल-पोसकर बड़ा करने की कला उसी का विशेष धर्म और एकमात्र अधिकार है। वह सँभालकर न रखे तो मानव जाति नष्ट हो जाय।''

—ह० से० २४।२।'४० पृष्ठ ११]

स्त्रियों की आर्थिक स्वतन्त्रता

[प्रश्न—जायदाद पर विवाहित स्त्रियों के अधिकार-सम्बन्धी कानूनों के सुधार का चन्द लोग इस बिना पर विरोध करते हैं कि स्त्रियों की आर्थिक स्वतन्त्रता से उनमें दुराचार फैलेगा और गृहस्थ जीवन टूटकर बिखर जायगा। इस सवाल पर आपका क्या रुख है?]

''मैं इस सवाल का जवाब एक दूसरा सवाल पूछकर दूँगा। क्या पुरुषों की स्वतन्त्रता और मिल्कियत पर उनके प्रभुत्व ने पुरुषों में दुराचार का प्रचार नहीं किया है? अगर तुम इसका जवाब 'हाँ' देते हो तो फिर औरतों के साथ भी वही घटित होने दो। और जब औरतों को भी मिल्कियत के अधिकार तथा और बातों में भी उनका हक मिल जायेंगे, तब यह पता चलेगा कि ऐसे अधिकारों के उपयोग का उनके पास पुरुष की जिम्मेदारी नहीं है। [illegible] सदाचरण सिर्फ [illegible] की निस्सहायता पर निर्भर। उसमें प्रमाण है [illegible] है। सदाचरण तो हमारे हृदय की [illegible] से पैदा होता है।

—हरिजन, [illegible]

सतीत्व-भग बनाम बलात्कार

"...सच्चा सतीत्व-भग तो उस स्त्री का होता है, जो उसमें सम्मत हो जाती है, लेकिन जो विरोध करते हुए भी घायल हो जाती है उसके सम्बन्ध में सतीत्व-भग की अपेक्षा यह कहना अधिक उचित है कि उस पर बलात्कार हुआ। 'सतीत्व भग' या व्यभिचार शब्द बदनामी का सूचक है इसलिए वह बलात्कार का पर्यायवाची नहीं माना जा सकता।"

—सेवाग्राम, २३।२।'४२ ह० ब० । ह० से० १।३।'४२, पृष्ठ ६०]

मातृजीवन धर्म है

" · आम तौर पर बहिनो को मातृधर्म की शिक्षा नहीं मिलती लेकिन अगर गृहस्थजीवन धर्म है तो मातृजीवन भी धर्म ही है। माता का धर्म एक कठिन धर्म है। · जो स्त्री देश को तेजस्वी, नीरोग और सुशिक्षित सन्तान भेंट करती है, वह भी सेवा ही करती है।..."

—सेवाग्राम, ३।३।'४२। ह० से०, ८।३।'४२, पृष्ठ ६६]

हिन्दू विधवा

"... · हिन्दू विधवा दुःख की प्रतिमा है। उसने संसार के दुःख का भार अपने सिर ले लिया है। उसने दुःख को सुख बना डाला है। दुःख को धर्म बना दिया है।"

—नवजीवन। हिं० न० जी० २।७।'२५, पृष्ठ ३७३]

वैधव्य

"..... वैधव्य हिन्दू धर्म का शृङ्गार है। धर्म का भूषण वैराग्य है, वैभव नहीं।"

× × ×

"परन्तु हिन्दूशास्त्र किस वैधव्य की स्तुति और स्वागत करता है ?

पन्द्रह वर्ष की मुग्धा के वैधव्य का नहीं जो कि विवाह का अर्थ भी नहीं जानती। · · वैधव्य सब तरह, सब जगह, सब समय अनिवार्य सिद्धान्त नहीं है। वह उस स्त्री के लिए धर्म है जो उसकी रक्षा करती है।'

× × ×

"सती स्त्रियो, अपने दुःख को तुम सँभालकर रखना! वह दुःख नहीं सुख है। तुम्हारा नाम लेकर बहुतेरे पार उतर गये हैं और उतरेंगे।"

—नवजीवन। हिं० न० जी० २।७।'२५, पृष्ठ ३७३]

हिन्दू विधवा

"हिन्दू विधवा की सृष्टि करके विधाता ने कमाल कर दिया है। जब-जब मैं पुरुषों को अपने दुःख की कथा कहते हुए सुनता हूँ तब-तब विधवा बहिनों की प्रतिमा मेरे सामने खड़ी हो जाती है। उस पुरुष को जो अपने दुःखों का रोना रोता है, देखकर मुझे हँसी आती है।

"हिन्दूधर्म ने संयम को उच्चतम कोटिपर पहुँचाया है और वैधव्य उसकी परिसीमा है।'

"· · · अनेक विधवाएँ दुःख को दुःख ही नहीं मानतीं। त्याग उनके लिए एक स्वाभाविक चीज हो गई है। त्याग का ही त्याग उन्हें दुःख रूप मालूम होता है। विधवा का दुःख ही उसके लिए [illegible] माना गया है।

"यह स्थिति बुरी नहीं [illegible] है। इसमें [illegible] वैधव्य को मैं हिन्दूधर्म का [illegible] मानता हूँ। [illegible] देखता हूँ तो मेरा सिर अपने आप उनके चरणों पर झुक जाता है। विधवा का दर्शन मैं [illegible] [illegible] करके मैं उसके [illegible]

१२

प्रसाद मानता हूँ। उसे देखकर मैं तमाम दुःखों को भूल जाता हूँ। विधवा के मुकाबले पुरुष एक पामर प्राणी है। विधवा-धैर्य का अनुकरण असम्भव है। प्राचीनकाल की जो विरासत विधवा को मिली है उसके सामने पुरुष के क्षणिक त्याग की पूँजी की क्या कीमत हो सकती है?

"यदि इस विधवा-धर्म का लोप हो, यदि कोई अज्ञान या जहालत के वशीभूत होकर सेवा की इस साक्षात् मूर्ति का खण्डन करे तो हिन्दूधर्म को बडी हानि पहुँचे।"

वैधव्य

" • मेरा यह दृढ मत होता जाता है कि दुनिया में बाल-विधवा-जैसी कोई प्रकृति-विरुद्ध वस्तु होनी ही न चाहिए। वैधव्य धर्म नहीं, धर्म तो सयम है। बल-प्रयोग और सयम ये दोनों परस्पर-विरुद्ध है।

× × ×

"… …बलपूर्वक पालन कराया गया वैधव्य पाप है, स्वेच्छा से पालित वैधव्य धर्म है, आत्मा की शोभा है, समाज को पवित्रता की ढाल है।"

—नवजीवन। हिं० न० जी० १०।७।'२५, पृष्ठ ३९३]

सच्ची विधवा और बाल-विधवा

"…… मेरा विश्वास है कि सच्ची हिन्दू विधवा एक रत्न है।… परन्तु बाल-विधवाओं का अस्तित्व हिन्दूधर्म के ऊपर एक कलङ्क है •।"

—य० इ० । हिं० न० जी०, १९।८।'२६, पृष्ठ ६]

वेश्यावृत्ति

"…जबतक स्त्रियों में से ही असाधारण चरित्र वाली बहिने उत्पन्न होकर इन पतित बहिनों के उद्धार का कार्य अपने हाथ मे न लेगी तबतक

वेश्यावृत्ति की समस्या हल नहीं हो सकती। वेश्यावृत्ति उतनी ही पुरानी है जितनी कि यह दुनिया है पर आज की तरह वह नगर-जीवन का एक नियमित अंग शायद ही रही हो। हर हालत मे वह समय आये बिना नही रह सकता जब कि मानव जाति इस पाप के खिलाफ आवाज उठावेगी और वेश्यावृत्ति को भूतकाल की चीज बना देगी।"

—यं० इं० । हिं० न० जी० २८।५।'२५, पृष्ठ ३३८]

× × ×

" वेश्यावृत्ति एक महाभीषण और बढ़ता जाने वाला दोष है। दोष मे भी गुण देखने की और कला के पवित्र नाम पर अथवा दूसरी किसी मिथ्या भावना से बुराई को जायज मानने की प्रवृत्ति ने इस अध पात कारी पाप-विलास को एक प्रकार के सूक्ष्म आदरभाव से सज्जित कर दिया है और वही इस नैतिक कुष्ट के लिए जिम्मेदार है। "

—यं० इं० । हिं० न० जी० १७।५।'२५ पृष्ठ ३८५]

समाज-सुधार अधिक कठिन है

" राजनीतिक हलचल की अपेक्षा, समाज सुधार का काम कहीं अधिक कठिन है।"

—नवजीवन । हिं० न० जी०, [illegible]]

दहेज

" [illegible]

—[illegible]]

परदा और पवित्रता

"...पवित्रता कुछ परदे की आड़ में रखने से नहीं पनपती। बाहर से यह लादी नहीं जा सकती। परदे की दीवार से उसकी रक्षा नहीं की जा सकती। उसे तो भीतर से ही पैदा होना होगा। और अगर उसका कुछ मूल्य है तो वही सभी प्रकार के विन-बुलाये आकर्षणों का सामना करने योग्य होनी चाहिए। वह तो सीता की पवित्रता-सी उद्धत होगी। अगर वह पुरुषों की नजर को सहन न कर सके तो उसे बहुत ही साधारण वस्तु कहना होगा।"

—यं० इं०। हिं० न० जी० ३।२।२७, पृष्ठ १९५]

परदा

"...परदे की बुराई के विषय में मैं काफी लिख चुका हूँ। यह प्रथा हर तरह से अकल्याणकारिणी है। अनुभव से यह सिद्ध हो चुका है कि स्त्री की रक्षा करने के बदले यह स्त्री के शरीर और मन को हानि पहुँचाती है।"

—हिं० न० जी०, १२।९।'२९, पृष्ठ २८]

गहने

"... गहनों की उत्पत्ति की जो कल्पना मैंने की है, वह अगर ठीक है तो चाहे जैसे हलके और खूबसूरत क्यों न हों हर हालत में गहने त्याज्य हैं। बेड़ी सोने की हो या हीरा-मोती से जड़ी हो, आखिर बेडी ही है। अँधेरी कोठरी में बन्द करो या महल में रखो, दोनों में रखे स्त्री-पुरुष कैदी तो कहे ही जायँगे।"

—नवजीवन। हिं० न० जी०, ९।१।'३०, पृष्ठ १६५]

: १५ :

सहधर्मियों को चेतावनी

मानव-पूजा नहीं, आदर्श-पूजा

"...मैंने कोई रास्ता बतला दिया है। उसे आपने मान
लेकिन मनुष्य की पूजा करना हमारा काम नहीं है। पूजा अ
सिद्धान्त की ही हो सकती है। ..आप मेरे पुजारी न बनें।
अहिंसा है, इनके पुजारी आप बन सकते है। आपने जिस
अपना लिया वह स्वतन्त्र रूप से आप की हो गई। और
रूप से आप की हो, वही आप की है।"

विचारों की बदहज़मी

" किसी आदमी के ख्यालात को हमने ग्रहण तो कि
हजम नहीं किया, बुद्धि से उनको ग्रहण कर लिया पर उन्हें
नहीं किया, उनपर अमल नहीं किया तो वह एक प्रकार की
ही है; बुद्धि का विलास है। विचारों की बदहजमी खुराक की
से कहीं बुरी है। खुराक की बदहजमी के लिए तो दवा है, प
की बदहजमी आत्मा को बिगाड देती है।"

—तृतीय गांधी सेवा संघ सम्मेलन, हुदली, १६।४।'३७]

झूठा गांधीवाद

" ..अगर गाधीवाद में असत्य की बू है तो उसका अ
होना चाहिये। अगर उसमें सत्य है तो उसके नाश के लिए
करोड़ों आवाजें लगाई जाने पर भी उसका नाश नहीं होगा।"

—गांधी सेवा संघ सम्मेलन, मालिकान्दा (बंगाल) २०।२।'४

× × ×

"   जो अपने हृदय को रोककर मेरी सलाह पर चलते है या मेरे दबाव से काम करते है, वे सच्चे गांधीवादी नहीं है।'

—मालिकान्दा (बंगाल) २१।२।'४०]

×   ×   ×

"सच्च बात तो यह है कि आपको 'गांधीवाद' नाम ही छोड देना चाहिये, नहीं तो आप अन्धकूप मे जाकर गिरेंगे। गांधीवाद का ध्वंस होना ही है। 'वाद' का तो नाश ही होना उचित है। वाद तो निकम्मी चीज है। असली चीज अहिंसा है। वह अमर है। वह जिन्दा रहे, इतना मेरे लिए काफी है। आप साम्प्रदायिक न बने। मै तो किसी का साम्प्रदायिक नहीं बना। कोई सम्प्रदाय कायम करना कभी मेरे ख्वाब मे ही नहीं आया। मेरे मरने के बाद मेरे नाम पर अगर कोई सम्प्रदाय निकला तो मेरी आत्मा रुदन करेगी।

—मालिकान्दा [illegible]।२।'४०]

'मेरा कोई अनुयायी नहीं'

"लोग चाहे जो कहें, मेरा का कोई सम्प्रदाय नहीं बन सकता। वह तो सब के लिए है। हम सब को स्वीकार करेंगे। [illegible] की कोशिश करेंगे। यही अहिंसा का रास्ता है। अगर हमारा कोई 'वाद' है तो यही है। मेरे पास कोई अनुयायी नहीं है। [illegible] हैं। नहीं नहीं, [illegible] [illegible] मेरे अनुयायी [illegible] [illegible] [illegible]

सशोधक हैं। अनुयायी होने की बात आप छोड़ दे। कोई आगे नहीं, कोई पीछे नहीं। कोई नेता नहीं, कोई अनुयायी नहीं। हम सब साथ-साथ हारबन्द (एक कतार में) चल रहे है।"

—गा० से० स० सम्मेलन, मालिकान्दा (बंगाल) २२।२।'४०]

गांधी सेवा सघ का विसर्जन

" ··वह सीता जो लुप्त हो गई, अमर है। आज तक हम उसका नाम लेकर पावन होते है। वह सीता जिन्दा है। छाया की सीता मर गई। अगर हम दरअस्ल शक्तिशाली होना चाहते है तो सघ का विसर्जन कर दे। यह भी शक्ति का काम है। इसके लिए भी हिम्मत और बल चाहिये।"

—गा० से० सं० सम्मेलन, मालिकान्दा (बगाल) २१।२।'४०]

गाधी सेवा सघ और कांग्रेस

" ·कांग्रेस एक तूफानी समुद्र है। वहाँ जाकर अगर आप अपने रोषादि रोक सकते है तो मान लीजिये कि अपना जहाज चल रहा है। सघ तो वन्दरगाह है। यहाँ शक्ति के प्रयोग का कोई अवसर ही नहीं।"

—गां० से० स० सम्मेलन, मालिकान्दा (बगाल), २१।२।'४०]

गांधीवाद का ध्वंस हो !

"···अगर गाधीवाद सम्प्रदायवाद का ही दूसरा नाम है तो वह मिटा देने के काबिल है। मरने के बाद अगर मुझे मालूम हो कि मैंने जिन चीजो की हिदायत की थी वे बिगडकर सम्प्रदायवाद बन गई है तो मेरी आत्मा को गहरी चोट पहुँचेगी। हमे तो चुपचाप कर जाना है। कोई यह न कहे कि मैं गाधी का अनुयायी हूँ। मैं जानता हूँ कि मै अपना कितना अपूर्ण अनुयायी हूँ।"

—ह० से० १६।३।'४०; पृष्ठ ३३। गाधी सेवा सघ के भाषण से]

: १६ :

विधायक कार्यक्रम

स्वराज्यनिर्माण की प्रक्रिया

" ··दूसरे, और अधिक उपयुक्त शब्दों मे, विधायक कार्यक्रम को सत्य और अहिंसक साधनो द्वारा पूर्ण स्वराज्य ··की रचना या निर्माण की प्रक्रिया कह सकते है।"

१ साम्प्रदायिक एकता

" ··इस एकता का अर्थ केवल राजनैतिक एकता नहीं है क्योंकि राजनैतिक एकता तो जबर्दस्ती लादी जा सकती है। साम्प्रदायिक एकता के मानी हृदय की वह एकता है जो तोड़ने से भी टूट न सके। इस एकता की स्थापना की पहली शर्त्त यह है कि प्रत्येक काग्रेसजन, चाहे वह किसी धर्म का क्यो न हो, अपने-आपमे हिन्दू, मुसलमान, ईसाई जरथुस्त्री, यहूदी आदि का, याने, एक शब्द मे, प्रत्येक हिन्दू और गैर-हिन्दू का प्रतिनिधित्व करे।···इसके लिए प्रत्येक काग्रेसजन को दूसरे धर्म के व्यक्तियों के साथ व्यक्तिगत मित्रता कायम करनी और बढानी चाहिए। उसे दूसरे धर्मों के प्रति उतना ही आदर रखना चाहिए जितना कि अपने धर्म के प्रति। ·"

२. अस्पृश्यता-निवारण

" · कई काग्रेसजनों ने इस काम को केवल राजनैतिक दृष्टि से ही जरूरी समझा है और यह नहीं माना कि हिन्दुओ को उसकी आवश्यकता अपने धर्म की रक्षा के लिए है। काग्रेसी हिन्दू यदि इस काम को शुद्ध भावना से अपने हाथ में ले लें तो सनातनी कहलाने वाले लोगों पर आजतक जो असर हुआ है उससे कहीं अधिक असर पड सकेगा। ··हरएक हिन्दू

को, हरिजनों को अपनाना चाहिए, उनके सुख दुःख में भाग लेना चाहिए और उनके पृथग्वास में उनके साथ मित्रता करनी चाहिए। "

३ शराबबन्दी

" अगर हम अहिंसात्मक प्रयत्न के द्वारा अपना ध्येय प्राप्त करना चाहते हैं तो जो लाखों स्त्री-पुरुष शराब, अफीम वगैरा नशीली चीजों के व्यसन के शिकार हो रहे हैं, उनके भाग्य का निर्णय हम भविष्य की सरकार पर नहीं छोड़ सकते। कांग्रेस कमेटियाँ ऐसे विश्रान्तिगृह खोल सकती हैं, जहाँ थके-माँदे मजदूर को विश्राम मिले उसे स्वास्थ्यपूर्ण और सस्ता कलेवा मिले और उसके लायक खेल खेलने का इन्तजाम हो। यह सारा काम चित्ताकर्षक और उन्नतिकारक है। स्वराज्य के बारे में अहिंसक दृष्टि सर्वथा नई दृष्टि है। उसमें पुराने मूल्यों की जगह नये मूल्य दाखिल हो जाते हैं। स्थायी और स्वास्थ्यपूर्ण मुक्ति भीतर से ही आती है यानी आत्म-शुद्धि से ही उद्भूत होती है।"

४ खादी

" खादी देश के सब प्रजाजनों की आर्थिक स्वतंत्रता और समानता के आरम्भ की सूचक है। खादी के स्वीकार के साथ साथ उसमें अन्तर्भूत दूसरी सारी चीजों का स्वीकार भी होना चाहिए। खादी के मानी हैं सर्वव्यापी स्वदेशी भावना, जीवन की सारी जरूरतें हिन्दुस्तान में से ही और सो भी गाँववालों की मेहनत और अक्ल के प्रयोग के द्वारा प्राप्त करने का निश्चय। [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

भीतर छिपी हुई शक्ति की भावना का तेज प्रज्वलित करता है और भारतीय महामानव सागर की बूँद-बूँद के साथ अपने तादात्म्य का अभिमान उसके दिल मे जाग्रत करता है। हम कई युगों से अहिंसा को गलती से निष्प्राणता समझते आये है। लेकिन यह निष्प्राणता नहीं है, बल्कि मनुष्य का जीवन जिनपर निर्भर है ऐसी आज तक की सभी ज्ञात शक्तियों से अधिक प्रभावशाली शक्ति है। मैंने कांग्रेस को, और उसके जरिये दुनिया को, यही शक्ति भेट करने का यत्न किया है। मेरे लिए खादी भारतीय मानवता की एकता का, उसकी आर्थिक स्वतन्त्रता और समानता का, प्रतीक है ··खादी मनोवृत्ति के माने जीवन की आवश्यकताओं के उत्पादन और विभाजन का विकेन्द्रीकरण है।·· ”

५ अन्य ग्रामोद्योग

"ये उद्योग खादी के अनुचर-जैसे हैं। वे खादी के बिना जी नहीं सकते और उनके बिना खादी की सारी वकअत नष्ट हो जायगी। हाथ-पिसाई, हाथ-कुटाई, साबुनसाजी, कागज, दियासलाई बनाना, चमडा कमाना, तेल पेरना आदि आवश्यक ग्रामोद्योगों के बिना ग्रामीण अर्थव्यवस्था पूर्ण नहीं हो सकती। ·· जहाँ-जहाँ और जब-जब देहात की बनी चीजे मिल सकें वहाँ उन्हीं का उपयोग करना हर एक को अपना कर्तव्य मानना चाहिए।···"

६· गाँव की सफ़ाई

"बुद्धि और श्रम के तलाक की बदौलत देहातों की अवहेलना का अपराध हमसे हुआ है, और इसीलिए सारे देश मे जहाँ-तहाँ रमणीय गावों के बदले हम घूरे देखते है।·· अगर अधिकाश कांग्रेसजन देहातो से ही आये हुए हों···तो उनमें अपने गाँवों को हर माने मे स्वच्छता के

आदर्श बनाने की कूवत होनी चाहिए। लेकिन देहातियो के दैनिक जीवन के साथ समरस हो जाना क्या उन्होने कभी अपना कर्त्तव्य समझा है ? · हम जैसे-तैसे स्नान कर लेते है लेकिन हम जिस कुएँ, तालाब या नदी पर नहाते-धोते है उसे गन्दा करने मे कोई बुराई नही समझते। मै इस दोष को एक महान् दुर्गुण मानता हूँ। · ’

७ नई या बुनियादी तालीम

“यह नया विषय है। ···इस शिक्षण का उद्देश्य देहाती बालको को आदर्श ग्रामवासी बनाना है। इसका आयोजन ही खास उन्हीके लिए है। इसकी प्रेरणा देहात से मिली है। प्रचलित प्राथमिक शिक्षण एक ढकोसला है, जिसमे न तो ग्रामीण भारत की आवश्यकताओ का कोई लिहाज रखा गया है और न शहरो की जरूरतो का ही। बुनियादी शिक्षण शहर और देहात के बालको का सम्बन्ध भारत के उत्तम और चिरस्थायी तत्त्वो के साथ कायम कर देता है।

८ प्रौढ़-शिक्षण

“ अगर प्रौढ शिक्षण मेरे सुपुर्द किया जाय तो मै अपने प्रौढ़ विद्यार्थियो मे सबसे पहले अपने देश की महत्ता और विशालता का भाव जाग्रत करूँगा। देहाती का हिन्दुस्तान उसके अपने गाँव तक सीमित होता है। उसके लिए हिन्दुस्तान एक भौगोलिक संज्ञा है। देहातो मे जो अज्ञान [illegible] रहा है उसका हमे कोई [illegible] नही है। [illegible] प्रौढ़-शिक्षण के मानी [illegible] राजनैतिक शिक्षा भी [illegible]।

९ [illegible]

“ [illegible]

· · जबतक हम इस अनर्थ का निराकरण नही करेंगे तबतक जनता की बुद्धि जकडी हुई रहेगी ।

१३ आर्थिक समानता के लिए प्रयत्न

"यह अन्तिम चीज अहिंसक स्वतन्त्रता की मानो गुरुकुञ्जी है। आर्थिक समानता के प्रयत्न के माने पूँजी और श्रम के शाश्वत विरोध का परिहार करना है। उसके माने ये है कि एक तरफ से जिन मुट्ठी भर धनाढ्यो के हाथ मे राष्ट्र की सम्पत्ति का अधिकाश इकट्ठा हुआ है वे नीचे को उतरे, और जो करोडो लोग भूखे और नगे है, उनकी भूमिका ऊँची उठे। · · ·हरएक काग्रेसजन को अपने आपसे यह पूछना चाहिए कि आर्थिक समानता की स्थापना के लिए उसने क्या किया है।"

—बारडोली, १३।१२।'४१]

: १७ :

अपने विषय में

आत्मदर्शन ही इष्ट है !

"··जो बात मुझे करनी है, आज ३० साल से जिसके लिए मैं उद्योग कर रहा हूँ, वह तो है—आत्मदर्शन, ईश्वर का साक्षात्कार, मोक्ष। मेरे जीवन की प्रत्येक क्रिया इसी दृष्टि से होती है। मै जो कुछ लिखता हूँ, वह भी इसी उद्देश से, और राजनीतिक क्षेत्र मे जो मै कूदा सो भी इसी बात को सामने रखकर।"

—साबरमती, मार्गशीर्ष शुक्ल ११, सं० १९८२, 'आत्मकथा' की भूमिका से]

मेरी महत्वाकांक्षा

"मै इस बात का दावा तो रखता हूँ कि मैं भारत-माता का और मनुष्य-जाति का एक नम्र सेवक हूँ और ऐसी सेवाओ के करते हुए मृत्यु की गोद में जाना पसन्द करूँगा।"

"पर मुझे सम्प्रदाय स्थापित करने की कोई इच्छा नहीं है। सच पूछिए तो मेरी महत्त्वाकाक्षा इतनी विशाल है कि कुछ अनुयायियो का कोई सम्प्रदाय स्थापित करने से तृप्त नहीं हो सकती। मैंने किसी नये सत्य का आविष्कार नहीं किया है बल्कि सत्य को जैसा मै जानता हूँ उसी के अनुसार चलने का और लोगों को बताने का प्रयत्न करता हूँ। हाँ, प्राचीन सत्य-सिद्धान्तो पर नया प्रकाश डालने का दावा मैं जरूर करता हूँ।"

—य० इ० से। हिं० न० जी०, २६।८।'२१]

मैं क्या हूँ ?

"मैं तो एक विनम्र सत्य-शोधक हूँ। मैं अधीर हूँ, इसी जन्म में

आत्म साक्षात्कार कर लेना, मोक्ष प्राप्त कर लेना चाहता हूँ । मै अपने देश की जो सेवा कर रहा हूँ वह तो मेरी उस साधना का एक अग है जिसके द्वारा मे इस पञ्चभौतिक शरीर से अपनी आत्मा की मुक्ति चाहता हूँ । इस दृष्टि से मेरी देश-सेवा केवल स्वार्थ-साधना है । मुझे इस नाश-वान् ऐहिक राज्य की कोई अभिलाषा नही है । मै तो ईश्वरीय राज्य को पाने का प्रयत्न कर रहा हूँ । वह है मोक्ष । अपने इस ध्येय की सिद्धि के लिए मुझे गुफा का आश्रय लेने की कोई आवश्यकता नहीं । यदि मै समझ पाऊँ तो एक गुफा तो मै अपने साथ ही लिये फिरता हूँ । गुफा निवासी तो मन मे महल को भी खड़ा कर सकता है पर जनक-जैसे महल मे रहनेवालो को महल बनाने की जरूरत ही नहीं रहती । जो गुफावासी विचारो के परो पर बैठकर दुनिया की चारो ओर मँडराता है उसे शान्ति कहाँ ? परन्तु जनक राजमहलो मे आमोदप्रमोदमय जीवन व्यतीत करते हुए भी कल्पनातीत शान्ति प्राप्त कर सकते है । मेरे लिए तो शान्ति का मार्ग है अपने देश की और उसके द्वारा मनुष्य जाति की सेवा करने के लिए सतत परिश्रम करना । मै संसार के [illegible] से अपना तादात्म्य कर लेना चाहता हूँ । [illegible] चाहता हूँ । इस प्रकार मेरी देश भक्ति [illegible] नहीं [illegible] और [illegible] देश का [illegible] एक [illegible] है । [illegible] कोई चीज नहीं । राजनीति धर्म [illegible] है । [illegible] एक [illegible] है [illegible] । [illegible]

—[illegible]

मेरा धर्म

[illegible]

मैं हिन्दू हूँगा तो सारी हिन्दू दुनिया के छोड देने पर भी मेरा हिन्दूपन मिट नहीं सकता ।"

—य० इं० । हिं० न० जी० १।६।'२४, पृष्ठ ३३०]

मेरी चेष्टा

"मै गरीब से गरीब हिन्दुस्तानी के जीवन के साथ अपने जीवन को मिला देना चाहता हूँ । मै जानता हूँ कि दूसरे तरीको से मुझे ईश्वर के दर्शन हो ही नही सकते । मुझे उसे प्रत्यक्ष देखना है, इसके लिए मैं अधीर हो बैठा हूँ । जबतक मै गरीब से गरीब न बन सकूँ तबतक साक्षात्कार हो ही नहीं सकता ।"

—नवजीवन । हिं० न० जी० २७।७।'२४, पृष्ठ ४०४]

मैं मूर्तिपूजक हूँ और मूर्तिभञ्जक भी !

"...मै मूर्ति-पूजक भी हूँ और मूर्तिभञ्जक भी हूँ, पर उस अर्थ में जिसे मैं इन शब्दों का सही अर्थ मानता हूँ । मूर्ति-पूजा के अन्दर जो भाव है मै उसका आदर करता हूँ । मनुष्य जाति के उत्थान में उससे अत्यन्त सहायता मिलती है और मैं अपने प्राण देकर भी उन हजारो पवित्र देवालयों की रक्षा करने की सामर्थ्य अपने अन्दर रखना पसन्द करूँगा जो हमारी इस जननी जन्मभूमि को पुनीत कर रहे हैं । मैं मूर्तिभञ्जक इस मानी में हूँ कि मै उस धर्मान्धता के रूप में छिपी सूक्ष्म मूर्तिपूजा का सिर तोड देता हूँ जो कि अपनी ईश्वर-पूजा की विधि के अलावा दूसरे लोगों की पूजाविधि में किसी गुण और अच्छाई को देखने से इन्कार करती है ।..."

—यं० इं० । हिं० न० जी०, ३१।८।'२४, पृष्ठ २०]

स्वतन्त्रता की सीमा

"मै मानता हूँ कि मै परिस्थिति के अधीन हूँ—देश और काल के अधीन हूँ। फिर भी परमेश्वर ने कुछ स्वतन्त्रता मुझे दे रखी है और मै उसकी रक्षा कर रहा हूँ। मै समझता हूँ कि धर्म और अधर्म को जानकर उनमे से मुझे जो पसन्द हो उसे ग्रहण करने की स्वतन्त्रता मुझे है। मुझे यह कभी प्रतीत न हुआ कि मुझे स्वतन्त्रता नहीं है। परन्तु यह निर्णय करना कठिन है कि किसी कार्य के करने की स्वतन्त्रता अपना रूप बदलकर कर्तव्य कहाँ बन जाती है। स्ववशता और परवशता की सीमा बहुत ही सूक्ष्म है।"

—नवजीवन। हि० न० जी० '४।१२।२६ पृ० ११०, मानसशास्त्र के एक अमेरिकन अध्यापक से बातचीत करते हुए]

मेरा क्षेत्र

"मेरा क्षेत्र निश्चित हो गया है। वह मेरा प्रिय धर्म है। मै अहिंसा के मन्त्र पर मुग्ध हो गया हूँ। मेरे लिए वह पारसमणि है। मै जानता हूँ कि दुखी हिन्दुस्तान को अहिंसा का ही मन्त्र शान्ति दिला सकता है। मेरी दृष्टि मे अहिंसा का रास्ता कायर या नामर्द का रास्ता नहीं है। अहिंसा क्षत्रिय धर्म की पराकाष्ठा है, क्योंकि इसमे [illegible] होकर आगे बढ़ना पड़ता है। अहिंसा धर्म के पालन मे [illegible] के लिए जगह ही नहीं है। [illegible] नहीं। [illegible]।"

—[illegible]

[illegible]]

[illegible]

[illegible]

ईश्वर की साक्षी

" · छाती पर हाथ रखकर मैं कह सकता हूँ कि एक मिनट के लिए भी मैं भगवान को भूलता नहीं। गत बीस वर्षों से मैने सभी काम उसी प्रकार किये हैं मानो साक्षात् ईश्वर मेरे सामने खडे हों।"

—य० इ० । हिं० न० जी० १०।२।'२७, पृष्ठ २०८, सिवान, विहार, के भाषण से]

भक्ति और प्रार्थना मेरा सहारा है

"···· मेरा दावा है कि मेरा एकमात्र सहारा भक्ति और प्रार्थना है और अगर मेरे शरीर के टुकडे-टुकडे भी कर दिये जायें तो भी परमात्मा मुझे वह शक्ति देंगे कि मै उन्हें इन्कार न करूँगा—यही जोरो से कहूँगा कि वे है।"

—हिं० न० जी० १५।१२।'२७, पृष्ठ १३३, लका के एक भाषण से]

मेरे जीवन का नियम

"· ·मेरे लिए अहिंसा महज दार्शनिक सिद्धान्त भर नहीं है। यह तो मेरे जीवन का नियम है। इसके विना मैं जी ही नहीं सकता। मैं जानता हूँ कि मैं गिरता हूँ, बहुत बार चेतनावस्था में; उससे भी अधिक बार अचेतन अवस्था में। यह प्रश्न बुद्धि का नहीं बल्कि हृदय का है। सन्मार्ग तो परमात्मा की सतत प्रार्थना से, अतिशय नम्रता से, आत्म-विलोचन से, आत्मत्याग करने को हमेशा तैयार रहने से मिलता है। इसकी साधना के लिए ऊँचे से ऊँचे प्रकार की निर्भयता और साहस की आवश्यकता है। मैं अपनी निर्बलताओं को जानता हूँ और मुझे उनका दुःख है।"

—य० इं० । हिं० न० जी० २९।९।'२८, पृष्ठ ३६]

सम्प्रदाय-प्रवर्त्तक नहीं हूँ

"   गांधीवाद जैसी कोई चीज मेरे तो दिमाग में ही नहीं है। मैं कोई सम्प्रदाय-प्रवर्त्तक नहीं हूँ। तत्त्वज्ञानी होने का तो मैंने कभी दावा भी नहीं किया है। मेरा यह प्रयत्न भी नहीं है। कई लोगों ने मुझसे कहा कि तुम गांधी-विचार की एक स्मृति लिखो। मैंने कहा, स्मृतिकार कहाँ और मैं कहाँ! स्मृति बनाने का अधिकार मेरा नहीं है। जो होगा मेरी मृत्यु के बाद होगा।"

—गांधी सेवा संघ सम्मेलन, सावली २।२।३६]

सिरजनहार की गोद में

"मैं अपने अनेक पापों को स्पष्ट से स्पष्ट रूप में स्वीकार कर चुका हूँ। लेकिन हमेशा अपने कन्धों पर उनका बोझ लादे नहीं फिरता। यदि, जैसा कि मैं समझता हूँ मैं ईश्वर की ओर जा रहा हूँ, तो मैं सुरक्षित हूँ। क्योंकि मैं उसकी उपस्थिति के प्रखर प्रकाश का अनुभव करता हूँ। मैं यह जानता हूँ कि आत्म-सुधार के लिए यदि मैं आत्म-दमन, उपवास और प्रार्थना पर ही निर्भर रहूँ तो कोई लाभ न होगा। लेकिन अगर जैसी मुझे उम्मीद है, मैं अपने सिरजनहार की गोद में अपना निराधार सिर रखने की आत्मा की आवश्यकता [illegible] करते हैं तो इसका भी मूल्य है।"

—ह० से० [illegible]

मैं एक वैज्ञानिक शोधक हूँ

"…मैं तो एक अटूट आशावादी हूँ। कोई वैज्ञानिक दुर्बल हृदय से अपने प्रयोग नहीं आरम्भ करता। मैं उन्हीं कोलम्बस और स्टीवेंसन के दल का हूँ, जिन्होने जबर्दस्त कठिनाइयो के बीच भी, निराशा मे भी, अपनी आशा कायम रखी। चमत्कारो का युग अभी खत्म नहीं हुआ है। जबतक ईश्वर है, ये चमत्कार होते रहेगे।…"

—सेवाग्राम, ९।६।'४०, ह० से० १५।६।'४०; पृष्ठ १४७]

ईश्वर ने मुझे क्यों चुना ?

"…उन्हे (अपनी त्रुटियो को) मैं तटस्थ होकर देखता हूँ, उनका प्रत्यक्ष दर्शन करता हूँ, क्योकि मुझमे अनासक्ति है। उन त्रुटियों के लिए न मुझे दुःख है, न पश्चात्ताप। जिस प्रकार मै अपनी सफलता और शक्ति परमात्मा की ही देन समझता हूँ, उसी को अर्पण करता हूँ, उसी प्रकार अपने दोष भी भगवान् के चरणों मे रखता हूँ। ईश्वर ने मुझ-जैसे अपूर्ण मनुष्य को इतने बड़े प्रयोग के लिए क्यो चुना ? मै अहङ्कार से नहीं कहता लेकिन मुझे विश्वास है कि परमात्मा को गरीबों मे कुछ काम लेना था, इसीलिए उसने मुझे चुन लिया। मुझसे अधिक पूर्ण पुरुष होता तो शायद इतना काम न कर सकता। पूर्ण मनुष्य को हिन्दुस्तान शायद पहचान भी न सकता। वह बेचारा विरक्त होकर गुफा में चला जाता। इसलिए ईश्वर ने मुझ जैसे अशक्त और अपूर्ण मनुष्य को ही इस देश के लायक समझा। अब मेरे बाद जो आयेगा, वह पूर्ण पुरुष होगा।"

—गांधी सेवा संघ की सभा में, वर्धा, २२।६।'४०]

: १८ :

रत्नकण

मैं एक वैज्ञानिक शोधक हूँ

" मैं तो एक अटूट आशावादी हूँ । कोई वैज्ञानिक दुर्बल हृदय से अपने प्रयोग नही आरम्भ करता । मै उन्हीं कोलम्बस और स्टीवेंसन के दल का हूँ, जिन्होने जबर्दस्त कठिनाइयो के बीच भी, निराशा मे भी, अपनी आशा कायम रखी । चमत्कारो का युग अभी खत्म नहीं हुआ है। जबतक ईश्वर है, ये चमत्कार होते रहेंगे ।..."

—सेवाग्राम, ९।६।'४०, ह० से० १५।६।'४०; पृष्ठ १४७]

ईश्वर ने मुझे क्यों चुना ?

" उन्हे (अपनी त्रुटियो को) मैं तटस्थ होकर देखता हूँ, उनका प्रत्यक्ष दर्शन करता हूँ, क्योकि मुझमे अनासक्ति है । उन त्रुटियों के लिए न मुझे दु ख है, न पश्चात्ताप । जिस प्रकार मैं अपनी सफलता और शक्ति परमात्मा की ही देन समझता हूँ, उसी को अर्पण करता हूँ, उसी प्रकार अपने दोप भी भगवान् के चरणों मे रखता हूँ । ईश्वर ने मुझ-जैसे अपूर्ण मनुष्य को इतने बडे प्रयोग के लिए क्यो चुना ? मै अहङ्कार से नहीं कहता लेकिन मुझे विश्वास है कि परमात्मा को गरीबों मे कुछ काम लेना था, इसीलिए उसने मुझे चुन लिया । मुझसे अधिक पूर्ण पुरुप होता तो शायद इतना काम न कर सकता । पूर्ण मनुष्य को हिन्दुस्तान शायद पहचान भी न सकता । वह बेचारा विरक्त होकर गुफा में चला जाता । इसलिए ईश्वर ने मुझ जैसे अशक्त और अपूर्ण मनुष्य को ही इस देश के लायक समझा । अब मेरे बाद जो आयेगा, वह पूर्ण पुरुप होगा ।"

—गांधी सेवा संघ की सभा में, वर्धा, २२।६।'४०]

: १८ :

रत्नकण

[१]

वीर-वाणी

पत्थर की काया

"जो अपनी काया को पत्थर बनाकर रखता है वह एक ही जगह बैठे हुए सारे ससार को हिलाया करता है।"

पत्थर में मानव और ईश्वर का मिलन

"मनुष्य मे पत्थर और ईश्वर दोनो का मिलाप होता है। मनुष्य क्या है? चेतनामय पत्थर है।"

—'नवजीवन', १९२१]

× × ×

"हमारे राष्ट्रीय इतिहास के इस युग में निर्जीव यन्त्र के जैसा बहुमत केसी काम का नहीं।

× × ×

"स्वतन्त्रता इस ससार में सबसे अधिक चञ्चल और स्वच्छन्द स्त्री है। यह दुनिया में सबसे बड़ी मोहनी है। इसको प्रसन्न करना बडा कठिन काम है। यह अपना मन्दिर जेलखानों में तथा इतनी ऊँचाई पर बनाती है कि जहाँ जाते-जाते आँखों में अँधेरा छा जाता है, और हमे जेल की दीवारों पर चढते हुए तथा हिमालय की चोटी के सदृश ऊँचाई पर बने इस मन्दिर तक जाने की आशा से कँटीले कँकरीले बीहडों में लहू-लुहान पैरों से मजिल तय करते हुए देखकर खिलखिलाकर हँसती है।"

"कौंसिलें वज्रहृदय मनुष्य तैयार करने का कारखाना नहीं है, और जबतक वज्र हृदय उसकी रक्षा के लिए मौजूद न हो तबतक आजादी एक अत्यन्त दूषित वस्तु की तरह है ।"

—हि० न० जी० १८।१२।'२१

× × ×

"जो मनुष्य मार के डर से गाली खाकर बैठ रहता है, वह न तो मनुष्य है, न पशु है ।"

× × ×

"भारत इस समय मर्द बनने का पाठ पढ़ रहा है । यदि पूरा पाठ पढ़ ले तो स्वराज्य हथेली पर रखा है ।"

× × ×

"आत्म-संयम स्वराज्य अर्थात् आत्म शासन की कुञ्जी है ।"

× × ×

"मरने की शक्ति तो सबमें है पर सबको उसकी इच्छा नहीं होती ।"

—नवजीवन । हि० न० जी० १५।१।'२०, पृ० १६६ ।

मृत्यु भ्रान्ति है जीवन विकास है

[illegible]

—[illegible]

स्वराज्य एक मनोदशा

"स्वराज्य तो एक मनोदशा है। जब इस मनोदशा की प्रतिष्ठा हृदय में होगी तभी इसकी प्रतिमा स्थापित होगी।"

—नवजीवन। हिं० न० जी० २२।१।'२२, पृष्ठ १८२]

बोदा बनानेवाला वायुमण्डल

"भारत का वर्तमान वायुमण्डल मनुष्य को बोदा बना देनेवाला है।"

असभ्यता भी हिंसा है

"असभ्यता एक प्रकार की हिंसा है।"

—नवजीवन। हिं० न० जी० २९।१।'२२, पृष्ठ १९३]

चौरीचौरा

"चौरीचौरा देश की हिंसा वृत्ति का एक परिणत चिन्ह मात्र है।"

—यं० इं०। हिं० न० जी० १९।२।'२२ पृष्ठ २१४]

जानपर खेलनेवाला ही जान बचाता है

"...मनुष्य जितना ही अधिक अपनी जान देता है उतना अधिक वह उसे बचाता है।"

—यं० इं०। हिं० न० जी० ८।१।'२५, पृष्ठ १७७]

अपमान की घाटी

"...हमारा राष्ट्र इस समय अपमान की घाटी से गुजर रहा है।"

—यं० इं०। हिं० न० जी० १९।१।'२९; पृष्ठ १६५]

[२]

जीवन-कण

नकली मर्द

“ जो अपनी नामर्दी कबूल करेगा, शायद वह किसी दिन मर्द बन सकता है, पर जो नाहक मर्द बनने का दावा करता है वह कभी मर्द बनने का नहीं है।”

सिंहों की संस्था कहाँ है?

“ यह सभा बकरों की है, सिंहों की नहीं। सिंहों की संस्था किसी ने जगत् में नहीं देखी है।”

वीरता

“राजपूतों का इतिहास पढ़कर सीखो कि वीरों का एक भी वचन मिथ्या नहीं जाता। वीरता बात कहने में नहीं, परन्तु उसे मिथ्या नहीं जाने देने में है।”

आत्म-श्रद्धा

“दूसरे का [illegible] अंकुश गिरानेवाला है और अपना [illegible] उड़ाने वाला।”

शर्मानेवाली कोई बात नहीं

“[illegible] ऐसा नहीं [illegible] कि जिससे [illegible] आपको शर्माना पड़े [illegible]।

सर्वस्वार्पण बिना सेवा नहीं

“ [illegible] होम करने [illegible]।

—[illegible]

[३]

ज्ञान-कण

तपस्या की महिमा

"सच्चा कष्ट यदि सच्चाई के साथ सहन किया जाय तो वह पत्थर-जैसे हृदय को भी पानी-पानी कर डालता है। कष्ट-सहन की, अर्थात् तपस्या की महिमा ऐसी ही है। और यही सत्याग्रह की कुञ्जी है।"

—दक्षिण अफ्रीका का सत्याग्रह, हिन्दी, पृष्ठ २९ (१९२१–'२३)]

लोकसेवा का कठिन धर्म

"केवल सेवा भाव से सार्वजनिक सेवा करना तलवार की धार पर चढने के समान है। लोकसेवक स्तुति लेने के लिए तो तैयार हो जाता है फिर उसे निन्दा के समय क्योंकर अपना मुँह छिपाना चाहिए ?"

—दक्षिण अफ्रीका का सत्याग्रह, हिन्दी, पृष्ठ २६४ (१९२१–'२३]

चरित्रहीन व्यक्ति

"मालिक से शून्य महल जिस तरह खण्डहर के समान मालूम होता है, ठीक वही हाल चरित्रहीन मनुष्य और उसकी सम्पत्ति का समझना चाहिए।"

—द० अ० का सत्याग्रह : उत्तरार्द्ध हिन्दी, पृ० ६६; १९२४]

श्रद्धा चुराई नहीं जा सकती

"मनुष्य श्रद्धा अथवा धैर्य किसी दूसरे से नहीं चुरा सकता।"

—द० अ० का सत्याग्रह, उत्तरार्द्ध, हिन्दी पृ० ८०, १९२४]

हो उसके पास से उसकी आज्ञा लेकर भी लेना चोरी है । अनावश्यक एक भी वस्तु न लेनी चाहिए ।···मन से हमने किसी की वस्तु प्राप्त करने की इच्छा की या उसपर जूठी नजर डाली तो वह चोरी है ।"

—यरवदा जेल, १९।८।'३०]

आत्यन्तिक अपरिग्रह

"आदर्श आत्यन्तिक अपरिग्रह तो उसी का होगा जो मन से और कर्म से दिगम्बर है । मतलब, वह पक्षी की भाँति बिना घर के, बिना वस्त्रों के और बिना अन्न के विचरण करेगा ।···इस अवधूत अवस्था को तो बिरले ही पहुँच सकते हैं ।"

अपरिग्रह सच्ची सभ्यता का लक्षण है

"सच्चे सुधार का, सच्ची सभ्यता का लक्षण परिग्रह बढ़ाना नहीं है, बल्कि उसका विचार और इच्छापूर्वक घटाना है । ज्यों-ज्यों परिग्रह घटाइए त्यों-त्यों सच्चा सुख और सच्चा सन्तोष बढ़ता है, सेवा-शक्ति बढती है ।"

—यरवदा जेल, २६।८।'३०]

तलवार भीरुता का चिह्न है !

"तलवार शूरता की निशानी नहीं, भीरुता का चिह्न है ।"

अभय

"अभय व्रत का सर्वथा पालन लगभग अशक्य है । भयमात्र से मुक्ति तो, जिसे आत्म-साक्षात्कार हुआ हो वही पा सकता है । अभय मोह-रहित अवस्था की पराकाष्ठा है ।"

—यरवदा जेल, २।९।'३०]

नम्रता

"नम्रता का अर्थ है अहमभाव का आत्यन्तिक क्षय।"

आत्यन्तिक स्वदेशी

"आत्मा के लिए स्वदेशी का अन्तिम अर्थ सारे स्थूल सम्बन्धों से आत्यन्तिक मुक्ति है। देह भी उसके लिए परदेशी है।"

—यरवदा जेल, ७।१०।३०]

[४]

विविध विचार

दूसरे भी सही हो सकते हैं !

"यह समझ लेना अच्छी आदत नहीं है कि दूसरे के विचार गलत है और सिर्फ हमारे ही ठीक है तथा जो हमारे विचारों के अनुसार नहीं चलते वे देश के दुश्मन है।"

वग-भंग

वग-भग से अग्रेजी सत्ता को जैसा धक्का लगा वैसा और किसी काम से नहीं लगा है।"

असन्तोष सुधार का पिता है

"हर एक सुधार से पहले असन्तोष का होना जरूरी है।"

'पार्लमेण्टों की माँ

"जिसे पार्लमेण्टों की माँ कहते है वह तो वॉझ है।"

इंग्लैण्ड की नकल में सर्वनाश

"मेरा तो यह पक्का विचार है कि हिन्दुस्तान ने इग्लैण्ड की नकल की तो उसका सर्वनाश हो जायगा।"

युरोपीय सभ्यता

"यह (युरोपीय) सभ्यता वस्तुतः सभ्यता नहीं है और इसके कारण युरोप के राष्ट्रों का दिन-दिन पतन होकर नाश होता चला जा रहा है।"

× × ×

"यह सभ्यता ऐसी है कि अगर हम धीरज रक्खे तो अन्त को इस सभ्यता की आग सुलगाने वाले आप ही इसमे जल मरेगे। "इस सभ्यता ने अंग्रेजी राष्ट्र मे घुन लगा दिया है। यह सभ्यता नाशकारी और नाशमान है। इससे बचकर रहने मे ही कल्याण है।"

आधुनिक सभ्यता से दबा भारत

"यह तो मेरी पक्की राय है कि हिन्दुस्तान अंग्रेजो से नहीं बल्कि आजकल की सभ्यता के बोझ से दबा हुआ है। इस राक्षसी की झपेट मे वह पड गया है। अभी इससे बचने की कोई तदबीर हो सकती है, लेकिन जैसे-जैसे दिन बीतते जाते है, वक्त हाथ से निकलता जा रहा है। मुझे तो धर्म प्यारा है, इसलिए पहला दुःख तो मुझे यही है कि हिन्दुस्तान धर्मभ्रष्ट होता जा रहा है। यहाँ धर्म से मेरा मतलब उस धर्म से है जो सब धर्मो का आधार है। मतलब तो यह है कि हम ईश्वर से विमुख होते जा रहे है।"

सांसारिक पाखण्ड बनाम धार्मिक पाखण्ड

"... मै तो यह भी कहने को तैयार हूँ कि दुनियावी पाखण्ड से धार्मिक पाखण्ड फिर भी अच्छा है। [illegible]

[illegible]

चाहिये। निश्चय ही अपनी पूरी ताकत के साथ हम उन्हे दूर करने की कोशिश करेंगे लेकिन ऐसा हम धर्म की उपेक्षा करके नहीं, बल्कि··· सच्चे रूप में धर्म-मार्ग पर चलने से ही कर सकेंगे।"

निर्भयता बल है

" ·बल तो निर्भयता मे है; शरीर मे मॉस बढ जाने मे नहीं।"

विश्वास-सम्पादन

"··· जो आदमी दूसरो के मन मे अपना विश्वास पैदा कर सका है उसने दुनिया में कभी कुछ गॅवाया नहीं।"

वकीलों का बोया विष

"· वकीलो ने हिन्दुस्तान को गुलामी मे फॅसाया है और हिन्दू-मुसलमानो के झगडे बढाकर अंग्रेजो का राज पक्का किया है।"

भारतीय सभ्यता की श्रेष्ठता

"···मै तो यह मानता हूॅ कि हमारी (भारतीय) सभ्यता से बढ-कर दुनिया की कोई सभ्यता नहीं है।"

अनहोनी भी होती है

"जो इतिहास में नहीं है वह हुआ ही नहीं है और हो ही नहीं सकता, ऐसा समझना तो मनुष्य की शक्ति मे अविश्वास करना है।"

हिंसा कायरता है

"कायर होने के कारण ही हम दूसरोके खून का विचार करते है।"

केवल ईश्वर का भय

"जिस मनुष्य को अपने मनुष्यत्व का भान है, वह ईश्वर के सिवा और किसी से नहीं डरता।"

स्वराज्य की कुञ्जी

"अगर मनुष्य एक बार इस बात को महसूस कर ले कि अनुचित जान पड़नेवाले कानूनों का पालन करना नामर्दी है, तो फिर किसी का जुल्म उसे मजबूर नहीं कर सकता । यही स्वराज्य की कुञ्जी है ।

कल-कारखाने साँप के बिल हैं

"कल-कारखाने तो साँप के बिल की तरह हैं जिनमें एक नहीं हजारों साँप भरे पड़े हैं ।"

सेवा के लिए ब्रह्मचर्य

"बहुत कुछ अनुभव के बाद मैं इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि देश सेवा के लिए जो लोग सत्याग्रही होना चाहते हैं उन्हें ब्रह्मचर्य का पालन करना ही चाहिये, सत्य का कथन तो करना ही चाहिये और निर्भय बनना चाहिये ।"

—१९०८, 'हिन्द स्वराज्य']

[नोट—'विविध विचार' पृष्ठ [illegible] स्वराज्य (१९०८ ई०) में है ।]

भूखों का [illegible] ईश्वर [illegible]

"जो लोग भूखों मर रहे हैं और [illegible]

[illegible]

परिश्रम न करनेवाले चोर हैं

[illegible]

चोर हैं ।

परिश्रम का गौरव

"चरखा कातने की हिमायत करना मानो परिश्रम के गौरव को मान्य करना है।"

—हिं० न० जी० २१।१०।'२१]

आशा ही आस्तिकता है

"आशावाद आस्तिकता है। सिर्फ नास्तिक ही निराशावादी हो सकता है।"

—नवजीवन १९३१]

आत्म-निरीक्षण

"मेरे सामने जब कोई असत्य बोलता है तब मुझे उसपर क्रोध होने के बजाय स्वय अपने ऊपर अधिक कोप होता है। क्योंकि मैं जानता हूँ कि अभी मेरे अन्दर—तह में असत्य का वास है।"

—नवजीवन · १९२१]

प्रेमहीन असहयोग राक्षसी है

"जिस असहयोग मे प्रेम नहीं, वह राक्षसी है, जिसमें प्रेम है वह ईश्वरी है।"

—नवजीवन १९२१]

बिना दु:ख के सुख नहीं

"जिस प्रकार बिना भूख के खाया हुआ भोजन नहीं पचता उसी प्रकार बिना दुःख के सुख भी नहीं पच सकता।"

—नवजीवन : १९२१]

सन्देहग्रस्त का ठिकाना नहीं

"जिसे सन्देह है, उसे कहीं ठिकाना नहीं। उसका नाश निश्चित

है। वह रास्ते चलता हुआ भी नहीं चलता है, क्योंकि वह जानता ही नहीं कि मैं कहाँ हूँ।"

—नवजीवन १९२१]

मैं श्रद्धावान हूँ

"मैं त्रिकालदर्शी नहीं हूँ। मैं देवता नहीं। मैं श्रद्धावान हूँ। मैं ईश्वर को सर्व-शक्तिमान मानता हूँ। हमारे हृदय में वह कब उथल पुथल कर डालेगा, यह कौन कह सकता है?"

—नवजीवन १९२१]

पवित्रता और निर्भयता का योग

"जहाँ पवित्रता है वहीं निर्भयता हो सकती है।"

स्त्री-पुरुषों के प्रति हीन दृष्टि

"स्त्रियों को हम इतनी कमजोर समझते हैं कि वे मानो अपनी पवित्रता की रक्षा करने के योग्य ही नहीं हैं। और पुरुषों को हम इतना पतित मानते हैं कि मानो वे पर स्त्रियों को केवल अपनी निर्लज्ज दृष्टि से ही देखते हैं।"

सकता है। उसकी ऑखों मे ही इतना तेज होगा कि सामने खडा हुआ व्यभिचारी पुरुष जहॉ का तहॉ ढेर हो जायगा।"

—न० जी० हिं० न० जी० १५।१।'२२]

विनोदवृत्ति

"यदि मुझमे विनोद की वृत्ति न होती तो मैंने कभी आत्महत्या कर ली होती।"

—य० इ०, १९२१]

भूल और सुधार

"मेरे निजी अनुभवो ने तो मुझे यही सिखाया है कि हम नम्रतापूर्वक इस बात को जानें और मानें कि भूलो के साथ सग्राम करना ही जीवन है।"

—य० इ० । हिं० न० जी०, १९।८।'२१]

नवजीवन

" प्रति सप्ताह 'नवजीवन' में मैंने अपनी आत्मा उँडेल्ने का प्रयत्न किया है। एक भी शब्द ईश्वर को साक्षी रखे बिना मैंने नहीं लिखा है।"

—न० जी । हिं० न० जी०, २८।९।'२४, पृष्ठ ५२]

रिवाज

"रिवाज के कुऍ में तैरना अच्छा है। उसमे डूबना आत्महत्या है।"

—न० जी० । हिं० न० जी०, २।७।'२५, पृष्ठ ३७२]

× × ×

"कुरीति के अधीन होना पामरता है। उसका विरोध करना पुरुषार्थ है।"

—न० जी० । हिं० न० जी०, २०।६।'२५, पृष्ठ ४०४]

बीडी

“ 'जरा सी बीडी ! वह दुनिया का कैसा नाश कर रही है ! बीडी का ठण्डा नशा कुछ अंशो में मद्यपान से भी अधिक हानिकर है क्योंकि मनुष्य उसका दोष शीघ्र नहीं देख सकता है। उसका उपयोग असभ्यता में नहीं गिना जाता, बल्कि सभ्य कहलानेवाले लोग ही उसका उपयोग बढा रहे है।”

—नं० जी० । हिं० न० जी० ३१।१२।'२५ पृष्ठ १५४]

शब्दो की अर्जितशक्ति

“ राम शब्द के उच्चार से लाखों करोडो हिन्दुओ पर फौरन असर होगा और 'गाड' शब्द का अर्थ समझने पर भी उसका उनपर कोई असर न होगा। चिरकाल के प्रयोग से और उनके उपयोग के साथ संयोजित पवित्रता से शब्दो को शक्ति प्राप्त होती है।'

—य० इ० । हि० न० जी०, १९।८।'२६ पृ० ३३८]

मित्रता

“ मित्रता में अद्वैतभाव होता है। ऐसी मित्रता संसार में बहुत थोडी देखी जाती है।'

अभिन्न-मित्रता

“ मेरा मत यह है कि अभिन्न मित्रता [illegible] क्योंकि मनुष्य दोष को झट ग्रहण कर लेता है। [illegible] जरूरत है।

—[illegible]

[illegible]

[illegible]

उसके विना वह संस्था अन्त में जाकर गन्दी और प्रतिष्ठाहीन हो जाती है। ..."

—हिन्दी आत्मकथा भाग २, अध्याय १९, पृष्ठ १६८ सस्ता संस्करण]

प्रतिपक्षी के प्रति व्यवहार

"मेरा अनुभव कहता है कि प्रतिपक्षी के साथ न्याय करके हम अपने लिए जल्दी न्याय प्राप्त कर सकते हैं।"

—हिन्दी आत्मकथा। भाग २ : अध्याय २९, पृ० २०१ सस्ता संस्करण, १९३०]

पूजा

"सुगन्ध जलाकर हम सुगन्ध फैलाते हैं उसी प्रकार पूजा करके हम सुगन्धमय बनते हैं।"

—नवजीवन। हिं० न० जी० १५।९।'२७, पृष्ठ २६। मैसूर से विदा होते समय, स्वयंसेवकों को दिये प्रवचन से]

ईश्वर घटघटवासी है

"मानवता की सेवा के द्वारा ही ईश्वर के साक्षात्कार का प्रयत्न मैं कर रहा हूँ। क्योंकि मैं जानता हूँ कि ईश्वर न तो स्वर्ग में है और न पाताल में, किन्तु हर एक के हृदय में है।"

आँखें

"...आँखें सारे शरीर का दीपक हैं।"

—नवजीवन। हिं० न० जी० १२।४।'२८; पृष्ठ २६७]

फीरोज़शाह, लोकमान्य और गोखले

"...सर फीरोज़शाह मुझे हिमालय-जैसे मालूम हुए, लोकमान्य समुद्र की तरह मालूम हुए। गोखले गंगा की तरह मालूम हुए; उसमें मैं नहा

सकता था। हिमालय पर चढ़ना मुश्किल है, समुद्र में डूबने का भय रहता है पर गंगा की गोदी में खेल सकते है, उसमें डोंगी पर चढ़कर तैर सकते है।"

—हिन्दी आत्मकथा भाग २, अध्याय २८ पृष्ठ १९७, सस्ता संस्करण, १९२९]

राजगोपालाचार्य

" यह भी सही है कि उनकी बुद्धिमत्ता और ईमानदारी में मेरा असीम विश्वास है और मैं यह मानता हूँ कि कम से कम कांग्रेसियो मे तो उनसे बढ़कर काबिल पार्लमेण्टेरियन और कोई नहीं है।
सत्याग्रह की हमारी सेना मे उनसे काबिल कोई योद्धा नहीं है।

—ह० से० १०।९।'३८, पृष्ठ ३६]

उड़ीसा

" भारतवर्ष मे यह उड़ीसा मेरी प्रियतम भूमि है।

—गांधी सेवा संघ सम्मेलन, डेलांग, २५।३।३८]

महाराष्ट्र

"महाराष्ट्र मे त्याग है, पर श्रद्धा नहीं।"

—चिपळूणकर की स्मृति का उद्घाटन करते समय [illegible]
हि० न० जी० १४।९।'२१]

"महाराष्ट्र अपने [illegible] रहा है।

—ह० से०, [illegible]

[illegible]

"[illegible]

—ह० से०, [illegible]

अपराध एक बीमारी है

" ··हर एक गुनाह एक किस्म की बीमारी है और उसका इलाज भी इसी दृष्टि से होना चाहिये।"

—ह० से० २७।४।'४०, पृष्ठ ८७]

आत्महत्या पाप है

[प्रश्न—कहा गया है कि 'जीने की इच्छा' विवेक-रहित है, क्योंकि वह जीवन के प्रति छलनापूर्ण आसक्ति से पैदा होती है। तब आत्म-हत्या पाप क्यों है ?]

"जीने की इच्छा अविवेकपूर्ण नहीं है, यह प्राकृतिक भी है। जीवन के प्रति आग्रह कोई छलना नहीं है, यह अत्यन्त वास्तविक है। सबके ऊपर जीवन का अपना एक उद्देश्य होता है। उस उद्देश्य को पराजित करने का यत्न करना पाप है। इसलिए बिल्कुल ठीक ही आत्महत्या को पाप माना गया है।"

—सेवाग्राम, २८।५।'४० ह० से० १।६।'४०, पृष्ठ १३०]

गुण्डा

"गुण्डे सिर्फ बुजदिल लोगों के बीच पनप सकते हैं।"

—सेवाग्राम, ४।६।'४०, ह० से० ८।६।'४०, पृष्ठ १३७]

कांग्रेस

"आज तो कांग्रेस हिन्दुस्तान की आशा और विश्वास का प्रधान लंगर—आश्रय—है।"

—सेवाग्राम, ११।६।'४० ह० से० १५।६।'४०, पृष्ठ १४८]

: १६ :

मानस के स्फुट चित्र

मालूम पडता है, राह भूल गया हूँ !

[१९२४]

" जान पडता है, मै भी अपने प्रेम से हाथ धो बैठा हूँ, और ऐसा मालूम होता है कि मै राह भूल गया हूँ, इधर-उधर भटक रहा हूँ। मुझे अनुभव तो ऐसा होता है कि मेरा सखा निरन्तर मेरे आस-पास है—पर फिर भी वह मुझे दूर दिखाई देता है क्योंकि वह मुझे ठीक-ठीक राह नहीं दिखा रहा है और साफ-साफ हुक्म नही दे रहा है। बल्कि उलटा गोपियो के छलिया नटखट कृष्ण की तरह वह मुझे चिढाता है—कभी दिखाई देता है, कभी छिप जाता है, और कभी फिर दिखाई देता है। जब मुझे अपनी ऑखो के सामने स्थिर और निश्चित प्रकाश दिखाई देगा तभी मुझे अपना पथ साफ-साफ मालूम पडेगा और तभी मैं पाठको से कहूँगा कि आइए, अब मेरे पीछे पीछे चलिए।..."

—यं० इं०। हिं० न० जी० ७।९।'२४; पृष्ठ २६]

भारत के रङ्क बच्चों के लिए—

[१९२४]

'....आप मुझे महात्मा मानते है। इसका कारण न तो मेरा सत्य है, न मेरी शान्ति है, बल्कि दीन-दुखियो के प्रति मेरा अगाध प्रेम ही इसका कारण है। चाहे कुछ भी हो जाय पर इन फटेहाल नर-कङ्कालों

को मैं नहीं भूल सकता, नहीं छोड़ सकता। इसी से आप समझते हैं कि गांधी किसी काम का आदमी है। इसीलिए अपने प्रेमियों से मैं कहता हूँ कि आप मेरे प्रति यदि प्रेम-भाव रखते हैं तो ऐसी कोशिश कीजिए कि देहात के लोगों को, जिन्हें मैं प्रेम करता हूँ, अन्न-वस्त्र मिले बिना न रहे। इन दीन-दुखियों को आप भजिए। किस तरह भजेंगे? सो मैं बताता हूँ। जो झूठ-मूठ माला फेरता होगा उसे मुक्ति कभी न मिलेगी, उलटे अधोगति प्राप्त होगी क्योंकि ऊपर से माला फेरते हुए वह अन्दर तो छुरी ही घिसता रहेगा। मैं मानता हूँ कि चरखा चलाते हुए भी मेरे मन में मलिनता होने की सम्भावना है। पर मलिनता के होते हुए भी कातने के बाह्य फल से तो मैं वंचित नहीं रह सकता। मैं तो सिर्फ इतना कहना चाहता हूँ कि ईश्वर या खुदा का नाम अन्तर में भरते हुए बहू बच्चों के लिए चरखा कातता हूँ और आपको भी ऐसा ही करने की प्रार्थना करता हूँ।"

उसी मे जीना और उसी मे मरना है। सो इसके लिए भी अगर फिर जन्म लेना पडे तो भगी के ही घर लूँगा।"

—हिं० न० जी०, ७।९।'२४; पृष्ठ ३०]

प्रेम के दो रूप

[१९२४]

" अब मे इतना थक गया हूँ कि अधिक नहीं कह सकता। मेरे स्वभाव के दो अग है—एक उग्र, दूसरा शान्त। उग्र या भयङ्कर रूप के कारण अनेक मित्र मुझसे अलग हो गये है; मेरी पत्नी, पुत्र और मेरे स्वर्गीय भाई के बीच खाई पड गई थी। दूसरे रूप मे तो लबालब प्रेम ही प्रेम है। पहले रूप मे प्रेम को खोजना पड़ता है। मुझ जैसे कठोर आत्म-निरीक्षक शायद ही दूसरे होगे। मुझे विश्वास है कि पहले रूप मे द्वेष की गन्ध तक नही है परन्तु उसमे हिमालय-जैसी भयङ्कर भूलें हो जाने की सम्भावना रहती है। किन्तु मनोविज्ञान के ज्ञाता आपको बतावेंगे कि दोनों का उत्पत्ति-स्थान एक ही है। पारावार प्रेम भीषण रूप धारण कर सकता है। यदि मैने अपनी पत्नी को दु:ख पहुँचाया है तो उससे मेरे दिल मे और गहरा घाव हो गया है। दक्षिण अफ्रीका मे अपने रात-दिन के साथी अग्रेजो को यदि मैने दु:ख पहुँचाया है तो उससे अधिक दु:ख मुझे हुआ है। यदि मेरे यहाँ के कार्यों से अग्रेजों का जी मैने दुखाया है तो उससे विशेष दु:ख मेरे जी को हुआ है।

"मै अग्रेजों से जो यह कहता हूँ कि 'तुमने हमें खूब चूसा है, आज भी चूस रहे हो पर तुम्हे पता नहीं है। तुम चोरी और सीनाजोरी करते हो, याद रखना पछताओगे। इग्लैण्ड की ऑखे खोलने के लिए मुझे अपना भयङ्कर रूप प्रकट करना पड़ा है।' तो इसका कारण यह

नहीं कि मैं उन्हें कम चाहता हूँ, बल्कि यही है कि मैं उन्हें स्वजनों की तरह चाहता हूँ। पर अब मेरा भीषण रूप चला गया। प० मोतीलाल से मैंने कहा है कि अब तो लड़ने की भावना ही मुझमें नहीं रह गई। मैं तो शरणागत हूँ। जब कि हमारे घर में ही फूट फैली हुई है और कटुता और शत्रुता बढ़ रही है, तब दूसरा विचार ही कैसे हो सकता है? मुझे तो इस हालत को दुरुस्त करने के लिए भगीरथ प्रयत्न करना होगा। मैं मान लूँगा कि मैं हार गया। मैं लौट जाऊँगा और लगातार सबको एकत्र करने की आशा रखूँगा।

मैं तो ईश्वर से इतनी ही प्रार्थना करता हूँ कि मुझे सत्पथ दिखा, मेरे अन्दर राग-द्वेष या क्रोध का यदि कुछ भी अंश छिपा हुआ रह गया हो तो उसे निकाल डाल और मुझे ऐसा सन्देश पहुँचा जिसमें सब लोग उत्साह और उमंग के साथ शामिल हों।'

—हि० नव० जी०, ७।१।२४, पृ० [illegible]

'महात्मा नाम पर—

[१९२४]

उसी मे जीना और उसी मे मरना है। सो इसके लिए भी अगर फिर जन्म लेना पडे तो भगी के ही घर लूँगा।"

—हिं० न० जी०, ७।९।'२४, पृष्ठ ३०]

प्रेम के दो रूप

[१९२४]

" अब मै इतना थक गया हूँ कि अधिक नहीं कह सकता। मेरे स्वभाव के दो अग हैं—एक उग्र, दूसरा शान्त। उग्र या भयङ्कर रूप के कारण अनेक मित्र मुझसे अलग हो गये है; मेरी पत्नी, पुत्र और मेरे स्वर्गीय भाई के बीच खाई पड गई थी। दूसरे रूप मे तो लबालब प्रेम ही प्रेम है। पहले रूप में प्रेम को खोजना पडता है। मुझ जैसे कठोर आत्म-निरीक्षक शायद ही दूसरे होंगे। मुझे विश्वास है कि पहले रूप में द्वेष की गन्ध तक नहीं है परन्तु उसमे हिमालय-जैसी भयङ्कर भूलें हो जाने की सम्भावना रहती है। किन्तु मनोविज्ञान के ज्ञाता आपको बतावेंगे कि दोनों का उत्पत्ति-स्थान एक ही है। पारावार प्रेम भीषण रूप धारण कर सकता है। यदि मैंने अपनी पत्नी को दुःख पहुँचाया है तो उससे मेरे दिल मे और गहरा घाव हो गया है। दक्षिण अफ्रीका में अपने रात-दिन के साथी अग्रेजो को यदि मैने दुःख पहुँचाया है तो उससे अधिक दुःख मुझे हुआ है। यदि मेरे यहाँ के कार्यों से अग्रेजों का जी मैंने दुखाया है तो उससे विशेष दुःख मेरे जी को हुआ है।

'म अग्रेजों मे जो यह कहता हूँ कि तुमने हमें खूब चूसा है, आज भी चूस रहे हो पर तुम्हे पता नहीं है। तुम चोरी और सीनाजोरी करते हो, याद रखना पछताओगे। इग्लैण्ड की आँखे खोलने के लिए मुझे अपना भयङ्कर रूप प्रकट करना पडा है।' तो इसका कारण यह

महा प्राणी नही। यदि महा प्राणी होता तो इस असहिष्णुता को सहज ही रोक सकता। अभी मेरे अन्दर शुद्धता, प्रेम, विनय, विवेक की खामी है। नही तो आप को मेरी आँखो मे और जबान मे वह बात दिखाई देती कि शान्तिमय असहयोग का यह तरीका नही है।

"हिन्दुस्तान मुझ से कुछ आशा कर रहा है। वह समझता है कि बेलगाँव मे मै कोई ऐसा रास्ता बताऊँगा जिससे हम सब एक मत हो जायेगे, अथवा विरोधी विचारो को सहन करने लगेगे। मै अपने आप को धोखा नही दे सकता। अपनी तारीफ सुनकर मै यह नही मान लेता कि मै उस तारीफ के लायक हूँ। मेरी स्तुति का अर्थ सिर्फ इतना ही है कि अभी मुझ से अधिक आशा रखी जाती है,—अधिक प्रेम की, अधिक त्याग की, अधिक सेवा की आशा की जाती है। पर मै यह किस तरह कर सकूँगा? मेरा शरीर अब कमजोर पड गया। उसका कारण है मेरे पाप। बिना पाप किये मनुष्य रोगी नहीं हो सकता। मै जो बीमार हुआ उसका कारण है मेरा कोई पाप ही। और जबतक मेरे हाथो ऐसे पाप जान मे या अनजान मे होते रहेंगे तबतक समझना चाहिये कि मै अपूर्ण मनुष्य हूँ। अपूर्ण मनुष्य सम्पूर्ण सलाह कैसे दे सकता है?

—[illegible]

" 'महात्मा' के नाम पर अनेक वाहियात बातें हुई हैं। मुझे 'महात्मा' शब्द मे बदबू आती है। फिर जब कोई इस बात का इसरार करता है कि मेरे लिए 'महात्मा' शब्द का ही प्रयोग किया जाय तब तो मुझे असह्य पीडा होती है, मुझे जिन्दा रहना भारभूत मालूम होने लगता है। यदि मैं इस बात को जानता न होता कि मैं ज्यो-ज्यों 'महात्मा' शब्द के प्रयोग न करने पर जोर देता हूँ त्यों-त्यों उसका प्रयोग अधिकाधिक होता है तो मैं जरूर लोगों का मुँह बन्द कर देता। आश्रम में मेरा जीवन बहता है। वहाँ हर एक बच्चे, स्त्री, पुरुष सब को आज्ञा है कि वे 'महात्मा' शब्द का प्रयोग न करें, किसी पत्र मे भी मेरा उल्लेख 'महात्मा' शब्द के द्वारा न करे, मुझे वे सिर्फ गाधी या गाधीजी कहा करें।·· हमारा सग्राम शान्तिमय है। विनय और शिष्टाचार के बिना शान्ति कैसे हो सकती है? विनयहीन शान्ति जड शान्ति होगी। हम तो चैतन्य के पुजारी हैं और चैतन्यमय शान्ति में तो विवेक, शिष्टता, विनय जरूर रहता है। इसलिए मेरी सलाह है कि जिन लोगों ने जमनादासजी के भाषण में रोक-टोक की है वे सब उनसे माफी माँगें। जमनादासजी ने मेरी बडी स्तुति की है। पर अगर उन्होने यह भी कहा होता कि गाधी के बराबर दुखदायी मनुष्य एक भी नहीं है—और जो ऐसा मानते हों उन्हें ऐसा कहने का पूरा अधिकार है—तो भी उन्हें रोकने का अधिकार किसी को नहीं, तो भी हमे उचित है कि हम शिष्टता और सभ्यतापूर्वक उनका भाषण सुनें। (इस जगह दो-तीन आदमियों ने उठकर हाथ जोडकर जमनादासजी से माफी माँगी)········ ····
हमारी प्रगति में बाधक होनेवाली सब से बडी वस्तु है असहिष्णुता। मैं इस स्थिति को दूर करने की कोशिश कर रहा हूँ। मैं अल्प प्राणी हूँ,

महा प्राणी नहीं। यदि महा प्राणी होता तो इस असहिष्णुता को सहज ही रोक सकता। अभी मेरे अन्दर शुद्धता, प्रेम, विनय, विवेक की खामी है। नहीं तो आप को मेरी आँखों में और जबान में यह बात दिखाई देती कि शान्तिमय असहयोग का यह तरीका नहीं है।

"हिन्दुस्तान मुझ से कुछ आशा कर रहा है। यह समझता है कि बेलगाँव में मैं कोई ऐसा रास्ता बताऊँगा जिससे हम सब एक मत हो जायेंगे, अथवा विरोधी विचारों को सहन करने लगेंगे। मैं अपने आप को धोखा नहीं दे सकता। अपनी तारीफ सुनकर मैं यह नहीं मान लेता कि मैं उस तारीफ के लायक हूँ। मेरी स्तुति का अर्थ सिर्फ इतना ही है कि अभी मुझ से अधिक आशा रखी जाती है—अधिक प्रेम की, अधिक त्याग की, अधिक सेवा की आशा की जाती है। पर मैं यह किस तरह कर सकूँगा? मेरा शरीर अब कमजोर पड़ गया। इसका कारण है मेरे पाप। बिना पाप किये मनुष्य रोगी नहीं हो सकता। [illegible] बीमार हुआ उसका कारण [illegible] कोई पाप [illegible]। [illegible] [illegible] ऐसे पाप [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] सकता है?"

—[illegible]

" 'महात्मा' के नाम पर अनेक वाहियात बातें हुई हैं। मुझे 'महात्मा' शब्द मे बदबू आती है। फिर जब कोई इस बात का इसरार करता है कि मेरे लिए 'महात्मा' शब्द का ही प्रयोग किया जाय तब तो मुझे असह्य पीडा होती है, मुझे जिन्दा रहना भारभूत मालूम होने लगता है। यदि मैं इस बात को जानता न होता कि मै ज्यों-ज्यों 'महात्मा' शब्द के प्रयोग न करने पर जोर देता हूँ त्यों-त्यों उसका प्रयोग अधिकाधिक होता है तो मै जरूर लोगों का मुँह बन्द कर देता। आश्रम मे मेरा जीवन बहता है। वहाँ हर एक बच्चे, स्त्री, पुरुष सब को आज्ञा है कि वे 'महात्मा' शब्द का प्रयोग न करे, किसी पत्र मे भी मेरा उल्लेख 'महात्मा' शब्द के द्वारा न करें, मुझे वे सिर्फ गाधी या गाधीजी कहा करें।" हमारा सग्राम शान्तिमय है। विनय और शिष्टाचार के बिना शान्ति कैसे हो सकती है? विनयहीन शान्ति जड शान्ति होगी। हम तो चैतन्य के पुजारी है और चैतन्यमय शान्ति में तो विवेक, शिष्टता, विनय जरूर रहता है। इसलिए मेरी सलाह है कि जिन लोगों ने जमनादासजी के भाषण में रोक-टोक की है वे सब उनसे माफी माँगे। जमनादासजी ने मेरी बडी स्तुति की है। पर अगर उन्होंने यह भी कहा होता कि गाधी के बराबर दुखदायी मनुष्य एक भी नहीं है—और जो ऐसा मानते हों उन्हे ऐसा कहने का पूरा अधिकार है—तो भी उन्हे रोकने का अधिकार किसी को नहीं, तो भी हमें उचित है कि हम शिष्टता और सभ्यतापूर्वक उनका भाषण सुने। (इस जगह दो-तीन आदमियों ने उठकर हाथ जोड़कर जमनादासजी से माफी माँगी)..........
हमारी प्रगति में बाधक होनेवाली सब से बडी वस्तु है असहिष्णुता। मै इस स्थिति को दूर करने की कोशिश कर रहा हूँ। मै अल्प प्राणी हूँ,

महा प्राणी नहीं । यदि महा प्राणी होता तो इस असहिष्णुता को सहज ही रोक सकता । अभी मेरे अन्दर शुद्धता, प्रेम विनय, विवेक की खामी है । नहीं तो आप को मेरी आँखो मे और जबान मे वह बात दिखाई देती कि शान्तिमय असहयोग का यह तरीका नहीं है ।

"हिन्दुस्तान मुझ से कुछ आशा कर रहा है । वह समझता है कि बेलगाँव मे मै कोई ऐसा रास्ता बताऊँगा जिससे हम सब एक मत हो जायेगे, अथवा विरोधी विचारो को सहन करने लगेगे । मै अपने आप को धोखा नहीं दे सकता । अपनी तारीफ सुनकर मै यह नहीं मान लेता कि मै उस तारीफ के लायक हूँ । मेरी स्तुति का अर्थ सिर्फ इतना ही है कि अभी मुझ से अधिक आशा रखी जाती है —अधिक प्रेम की, अधिक त्याग की, अधिक सेवा की आशा की जाती है । पर मै यह किस तरह कर सकूँगा ? मेरा शरीर [illegible] । उसका कारण है मेरे पाप । बिना पाप किये मनुष्य बीमार नहीं हो सकता । मै जो बीमार हुआ उसका कारण है मेरा कोई पाप है । और जबतक मेरे हाथो ऐसे पाप जाने मे या अनजाने मे होते रहेंगे तबतक [illegible] [illegible] हूँ । [illegible] सकता है ?

—[illegible]

भी मै गलती कर रहा होऊँ। पर मै इतनी बात जरूर जानता हूँ कि अब मेरे अन्दर लडाई का भाव बिल्कुल नहीं रह गया है। मै एक जन्म-जात लडवैया हूँ। मेरे लिए इतना ही कहना बहुत है। मै अपने अजीजों और आत्मीयों तक से लडा हूँ। पर मैं लडा हूँ प्रेमभाव से प्रेरित होकर ही। स्वराजियों से भी मुझे प्रेमभाव से प्रेरित होकर ही लडना चाहिये। पर मै देखता हूँ कि अभी मुझे अपने प्रेम-भाव को साबित कर दिखाना बाकी है। मै साबित कर चुका हूँ। लेकिन देखता हूँ, मैं गल्ती पर था। इसलिए मै अपना कदम पीछे हटा रहा हूँ।"

—यं० इं०। हि० न० जी०, १४।९।'२४, पृष्ठ ३८]

साम्प्रदायिक एकता के लिए २१ दिन का उपवास

[सितम्बर १९२४]

"इन दिनों देश में जो दुर्घटनाएँ हो रही हैं वे मेरे लिए असह्य हो गई है। और इसमें मेरी असहाय अवस्था तो मुझे और भी असह्य हो रही है।

मेरा धर्म मुझे कहता है कि जब अनिवार्य सङ्कट उपस्थित हो और कष्ट असह्य हो जाय तब उपवास और प्रार्थना करनी चाहिये। अपने अनिष्ट आत्मीयों के सम्बन्ध में भी मैने ऐसा ही किया है।

अब तो यह भी देखता हूँ कि मेरे हर तरह लिखने और कहने मे भी हिन्दुओं और मुसलमानों में एकता नहीं हो सकती। इसीलिए मै आज से २१ दिन का उपवास प्रारम्भ करता हूँ। ८ अक्तूबर बुध वार को वह पूरा होगा। अनशन के दिनो में सिर्फ पानी और उसके साथ नमक लेने की मैने छुट्टी रखी है। यह अनशन प्रायश्चित्त के रूप मे भी है और प्रार्थना के रूप में भी। यदि अकेला प्रायश्चित्त-रूप होता तो

इसे सर्वसाधारण के सामने प्रकाशित करने की आवश्यकता न थी। परन्तु इस बात के प्रकट करने का सिर्फ एक ही प्रयोजन है। मुझे आशा करनी चाहिये कि मेरा यह प्रायश्चित्त हिन्दू और मुसलमानों के लिए, जो कि आज तक मेल-मिलाप से काम करते आये हैं, आत्मघात न करने के लिए एक कारगर प्रार्थना हो जाय। मैं तमाम जातियों के नेताओं से, अंग्रेजों तक से, सविनय प्रार्थना करता हूँ कि वे धर्म और मनुष्यता के लिए लाञ्छन-रूप इन झगड़ों को मिटाने के हेतु एक जगह एकत्र होकर विचार करें। आज तो ऐसा ही जान पड़ता है, मानो हमने ईश्वर को तख्त से उतार दिया है। आइये, हम फिर से अपने हृदय रूपी सिंहासन पर उसे अधिष्ठित करें।'

मेरा उपवास

"मैं अपना कोई काम बिना प्रार्थना किए नहीं करता। मनुष्य स्खलनशील है। वह कभी निर्भ्रान्त नहीं हो सकता। जिसे वह अपनी प्रार्थना का उत्तर समझता है, संभव है कि वह उसके अहङ्कार की प्रतिध्वनि हो। अचूक मार्ग दिखाने के लिए मनुष्य का अन्तःकरण पूर्ण निर्दोष और [illegible] करने में समर्थ होना चाहिए। [illegible] नहीं कर सकता। मेरी तो [illegible] [illegible]

[illegible]

भी मैं गलती कर रहा होऊँ। पर मैं इतनी बात जरूर जानता हूँ कि अब मेरे अन्दर लडाई का भाव बिल्कुल नहीं रह गया है। मैं एक जन्म-जात लड़वैया हूँ। मेरे लिए इतना ही कहना बहुत है। मैं अपने अजीजो और आत्मीयों तक से लडा हूँ। पर मैं लडा हूँ प्रेमभाव से प्रेरित होकर ही। स्वराजियों से भी मुझे प्रेमभाव से प्रेरित होकर ही लडना चाहिये। पर मैं देखता हूँ कि अभी मुझे अपने प्रेम-भाव को साबित कर दिखाना बाकी है। मै साबित कर चुका हूँ। लेकिन देखता हूँ, मै गल्ती पर था। इसलिए मै अपना कदम पीछे हटा रहा हूँ।"

—यं० इ०। हि० न० जी०, १४।९।'२४, पृष्ठ ३८]

साम्प्रदायिक एकता के लिए २१ दिन का उपवास

[सितम्बर १९२४]

"इन दिनों देश में जो दुर्घटनाएँ हो रही हैं वे मेरे लिए असह्य हो गई हैं। और इसमें मेरी असहाय अवस्था तो मुझे और भी असह्य हो रही है।

मेरा धर्म मुझे कहता है कि जब अनिवार्य सङ्कट उपस्थित हो और कष्ट असह्य हो जाय तब उपवास और प्रार्थना करनी चाहिये। अपने वनिष्ठ आत्मीयों के सम्बन्ध मे भी मैंने ऐसा ही किया है।

अब तो यह भी देखता हूँ कि मेरे हर तरह लिखने और कहने से भी हिन्दुओं और मुसल्मानों में एकता नहीं हो सकती। इसीलिए मैं आज से २१ दिन का उपवास प्रारम्भ करता हूँ। ८ अक्तूबर बुध-वार को वह पूरा होगा। अनशन के दिनों में सिर्फ पानी और उसके साथ नमक लेने की मैंने छुट्टी रखी है। यह अनशन प्रायश्चित्त के रूप में भी है और प्रार्थना के रूप में भी। यदि अकेला प्रायश्चित्त-रूप होता तो

इसे सर्वसाधारण के सामने प्रकाशित करने की आवश्यकता न थी। परन्तु इस बात के प्रकट करने का सिर्फ एक ही प्रयोजन है। मुझे आशा करनी चाहिये कि मेरा यह प्रायश्चित्त हिन्दू और मुसलमानों के लिए, जो कि आज तक मेल-मिलाप से काम करते आये हैं, आत्मघात न करने के लिए एक कारगर प्रार्थना हो जाय। मैं तमाम जातियों के नेताओं से, अंग्रेजों तक से, सविनय प्रार्थना करता हूँ कि वे धर्म और मनुष्यता के लिए लाञ्छन-रूप इन झगड़ों को मिटाने के हेतु एक जगह एकत्र होकर विचार करें। आज तो ऐसा ही जान पड़ता है, मानो हमने ईश्वर को तख्त से उतार दिया है। आइये, हम फिर से अपने हृदय रूपी सिंहासन पर उसे अधिष्ठित करें।"

मेरा उपवास

"मैं अपना कोई काम बिना प्रार्थना किये नहीं करता। मनुष्य स्खलनशील है। वह कभी निर्भ्रान्त नहीं हो सकता। जिसे वह अपनी प्रार्थना का उत्तर समझता है सम्भव है कि वह उसके [illegible] की प्रतिध्वनि हो। [illegible] मार्ग दिखाने के लिए मनुष्य का [illegible] निर्दोष और [illegible] करने में समर्थ होना चाहिए। [illegible]

[illegible]

कर रहा हूँ। यदि आवश्यकता हो तो अपना खून देकर भी इन दो जातियो में सन्धि करा देने के लिए मै लालायित हूँ। लेकिन ऐसा करने के पहले मुझे मुसलमानो को यह साबित कर देना होगा कि मैं उन्हें उतना ही प्यार करता हूँ जितना हिन्दुओं को। मेरा धर्म मुझे सिखाता है कि सबपर समान प्रेम रक्खो। ईश्वर इसमें मेरा सहायक हो। और और बातों के अलावा मेरे उपवास का एक उद्देश यह भी है कि मैं उस सम-भाव—पूर्ण और निःस्वार्थ प्रेमभाव को प्राप्त कर सकूँ।"

—य० इ० । हिं० न० जी०, २८।९।'२४, पृष्ठ ५०-५१]

मानस के स्फुट चित्र

[सितम्बर १९२४]

"प्रति सप्ताह 'नवजीवन' मे मैंने अपनी आत्मा उँडेलने का प्रयत्न किया है। एक भी शब्द ईश्वर को साक्षी रक्खे बिना मैंने नहीं लिखा है।.....

"मैंने तो पुकार पुकारकर कहा है कि अहिंसा—क्षमा—वीर का लक्षण है। जिसे मरने की शक्ति है वही मारने से अपने को रोक सकता है।.. .. मैंने कितनी ही वार लिखा है और कहा है कि कायरता कभी धर्म नहीं हो सकता। ससार में तलवार के लिए जगह जरूर है। कायर का तो क्षय ही हो सकता है। उसका क्षय ही योग्य भी है। परन्तु मैंने तो यह दिखाने का प्रयत्न किया है कि तलवार चलानेवाले का भी क्षय ही होगा। तलवार से मनुष्य किसको बचावेगा और किसको मारेगा? आत्मबल के सामने तलवार का बल तृणवत् है। अहिंसा आत्मा का बल है। तलवार का उपयोग करके आत्मा शरीरवत् बनती है। अहिंसा का उपयोग करके आत्मा आत्मवत् बनती है। जो इस बात को न समझ सके उस तो
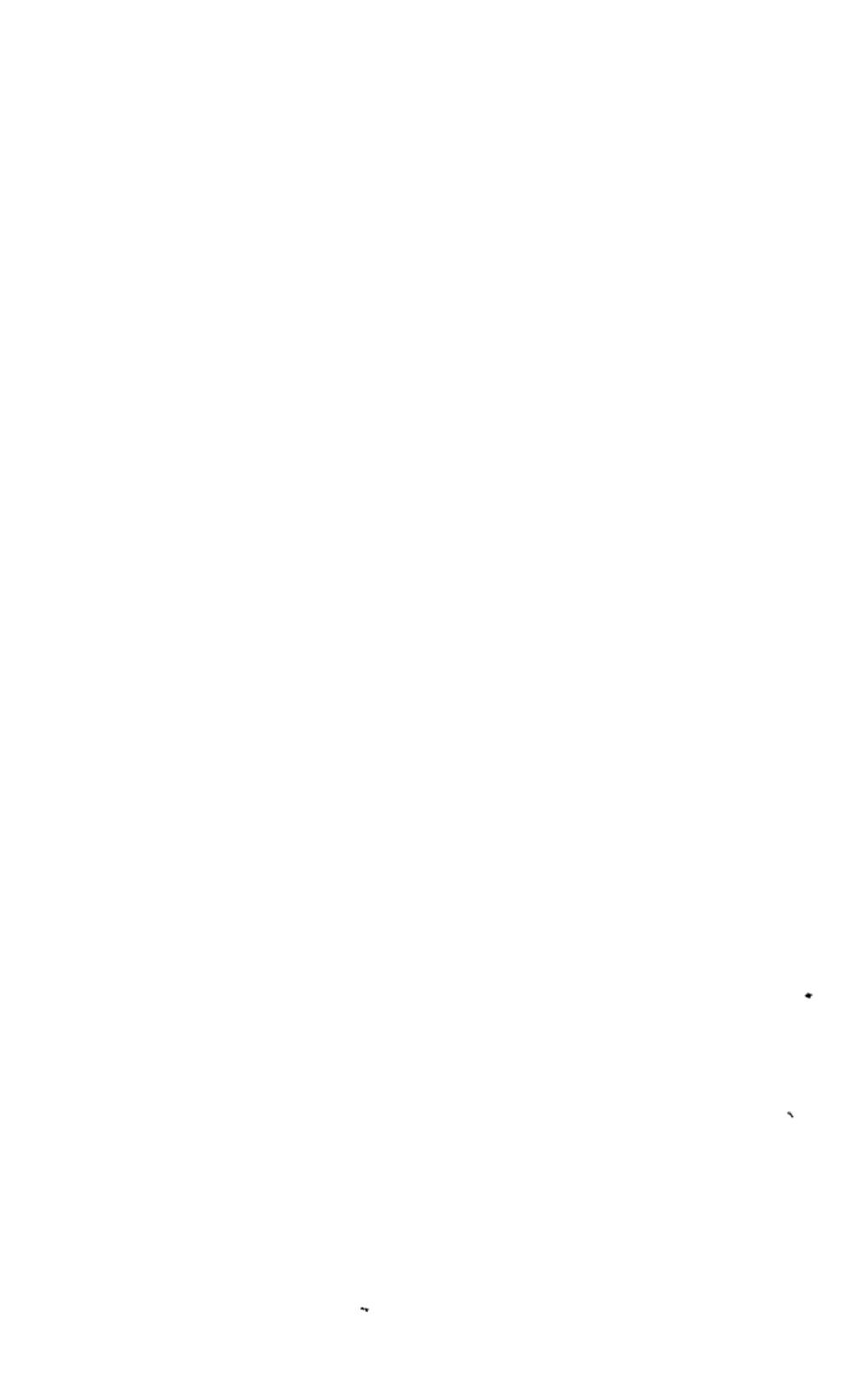
ज्यो-ज्यो मुझे इसका ख्याल होता है त्यो-त्यो मै अपने को अधिकाि असहाय अनुभव करता हूँ । कितने लोग एकता परिषद् के शुरू ि काम को पूरा करने के लिए मेरी ओर देखते है । कितने लोग राजनीि दलों को एकत्र करने की उम्मीद मुझसे रखते है । पर मैं जानता हूँ मै कुछ नहीं कर सकता । ईश्वर ही सब कुछ कर सकता है । प्रभो, अपना योग्य साधन बना और अपना इच्छित काम मुझसे ले ।

मनुष्य कोई चीज नहीं । नेपोलियन ने क्या क्या मनसूबे बाँधे, सेंट हेलेना मे एक कैदी बनकर उसे रहना पडा । जर्मन सम्राट् कैसर योरप के तख्त पर अपनी नजर गडाई, पर आज वह एक मामूली आद है । ईश्वर को यही मजूर था। हम ऐसे उदाहरणो पर विचार करें अं नम्र बनें ।

इन अनुग्रह, सौभाग्य और शान्ति के दिनों मे मै मन ही मन ए भजन गाया करता था । वह सत्याग्रह आश्रम में अक्सर गाया जाता है वह इतना भावपूर्ण है कि मै उसे पाठकों के सामने उपस्थित करने मुखाभिलाषा को रोक नहीं सकता । मेरे शब्दो की अपेक्षा उस भजन भाव ही मेरी स्थिति को अच्छी तरह प्रदर्शित करता है ।

रघुबर तुमको मेरी लाज ।

सदा सदा मै सरन तिहारी, तुम बड़े गरीब नेवाज ॥
पतित उधारन बिरुद तिहारो, स्रवनन सुनी अवाज ।
हौं तो पतित पुरातन कहिये, पार उतारो जहाज ॥
अघ-खण्डन दुःख-भंजन जन के, यही तिहारो काज ।
तुलसिदास पर किरपा करिये, भक्ति दान देहु आज ॥

—६।१०।'२४। य० इं०। हिं० न० जी० १२।१०।'२४, पृष्ठ ६०

तप की महिमा

[१९२४ में २१ दिन के उपवास के बाद]

"हिन्दू धर्म में तप कदम कदम पर है। पार्वती यदि शंकर को चाहे तो तप करे। शिव से जब भूल हुई तो उन्होंने तप किया। विश्वामित्र तो तप की मूर्त्ति ही थे। राम जब वन गये तो भरत ने योगारूढ होकर घोर तपश्चर्या की और शरीर को क्षीण कर दिया।

ईश्वर दूसरी तरह मनुष्य को कसौटी पर कस नहीं सकता। यदि आत्मा देह से भिन्न है तो देह को कष्ट देते हुए भी आत्मा प्रसन्न रहती है। अन्न शरीर की खुराक है, ज्ञान और चिन्तन आत्मा की।

परन्तु यदि तपादि के साथ श्रद्धा, भक्ति, नम्रता न हो तो तप एक मिथ्या कष्ट है। वह दम्भ भी हो सकता है। ऐसे तपस्वी से तो बामिजाज भोजन करनेवाले ईश्वरभक्त हजार गुना बेहतर हैं।

मेरे तप की कथा लिखने लायक शक्ति आज मुझमें नहीं है, पर इतना कहे देता हूँ कि इस तप के बिना मेरा जीना असम्भव था। अब मेरे नसीब में फिर तूफानी समुद्र में कूदना बदा है। प्रभो! दीन [illegible] मुझे तार!"

—हेरल्ड, ८।१०।२४। नवजीवन। हि० न० जी० १। १९।१०।२४ पृ० ६८

“ इस ससार मे, ‘चतुर्दिक अन्धकार के बीच’, मैं प्रकाश की ओर जाने का रास्ता टटोल रहा हूँ। अक्सर मै भूल करता हूँ और मेरे अन्दाज गलत हो जाते हैं। मे इस आशा से रहित नहीं हूँ कि यदि दो ही मनुष्य मेरे साथी रह जायँ, या कोई भी न रहे, तो उस हालत में मे कच्चा नही निकलूँगा। मेरा तो ईश्वर पर ही कुल भरोसा है। और मे मनुष्यो पर भी इसीलिए भरोसा रखता हूँ कि ईश्वर पर मेरा पूरा भरोसा है। यदि ईश्वर पर मेरा भरोसा न होता तो मै शेक्सपीयरवर्णित एथेन्स के टिमन की तरह मनुष्य जाति से घृणा करने लगता।”

—य० इ० । हिं० न० जी० १४।१२।’२४, पृष्ठ १४०]

मेरा रास्ता

“ · मेरा रास्ता साफ है। हिंसात्मक कामो में मेरा उपयोग करने के सभी प्रयत्न अवश्य विफल होगे। मेरे पास कोई गुप्त मार्ग नहीं है। मैं सत्य को छोडकर किसी कूटनीति को नहीं जानता। मेरा एक ही शस्त्र है—अहिंसा।”

—य० इ० । हिं० न० जी० १४।१२।’२४, पृष्ठ १४०]

अपने विषय मे

“ ·मुझे सेवा-धर्म प्रिय है। इसी से भगी प्रिय है। मे तो भगी के साथ बैठकर खाता भी हूँ। पर आपसे नहीं कहता कि आप भी उसके साथ बैठकर खाओ, रोटी-बेटी व्यवहार करो। आपसे कह भी किस तरह सकता हूँ? म एक फकीर जैसा हूँ—सच्चा फकीर हूँ या नहीं, सो नहीं जानता। मे सच्चा संन्यासी हूँ या नहीं, सो भी नहीं जानता। पर संन्यास मुझे पसन्द है। ब्रह्मचर्य मुझे प्रिय है, पर नहीं जानता कि मै सच्चा ब्रह्मचारी हूँ या नहीं। क्योंकि ब्रह्मचारी के मन मे यदि दूषित विचार आने

हो, वह सपने में भी व्यभिचार करने का विचार करता हो तो मैं कहूँगा कि वह ब्रह्मचारी नहीं। मेरे मुँह से यदि गुस्से में एक भी शब्द निकले, द्वेष से प्रेरित होकर कोई काम हो, जिसे लोग मेरा कट्टर से कट्टर दुश्मन मानते हों उसके खिलाफ भी यदि क्रोध में कुछ वचन कहूँ तो मैं अपने को ब्रह्मचारी नहीं कह सकता। सो मैं पूर्ण सन्यासी हूँ कि नहीं, यह नहीं जानता। पर हाँ, मैं जरूर कहूँगा कि मेरे जीवन का प्रवाह इसी दिशा में बह रहा है। ईश्वर की इच्छा हो तो मुझे बचावे अथवा मार डाले। पर मैं तो कोढ़ी की सेवा किये बिना नहीं रह सकता। ऐसा करते हुए यह भी दावा करूँगा कि यदि ईश्वर को गरज हो तो मुझे रखे।'

—हि० न० जी० १५।१।२५, पृ० ४०। काठियावाड़ राजनैतिक परिषद् में भाषण से।

के बाहर होगी उसका समावेश यदि हिन्दूधर्म में होगा तो उसका नाश निश्चित समझ रखना। दया-धर्म का मुझे भान है और उसी के कारण मैं देख रहा हूँ कि हिन्दूधर्म के नाम पर कितना पाखण्ड, कितना अज्ञान फैल रहा है। इस पाखण्ड और अज्ञान के खिलाफ, यदि जरूरत पड़े तो, मैं अकेला लड़ूँगा, अकेला रहकर तपश्चर्या करूँगा, और उसका नाम जपते हुए मरूँगा। शायद ऐसा भी हो कि मैं पागल हो जाऊँ और कहूँ कि मैंने अस्पृश्यता-सम्बन्धी विचारों मे भूल की है, और मैं कहूँ कि अस्पृश्यता को हिन्दूधर्म का पाप कहकर मैंने पाप किया था तो आप मानना कि मैं डर गया हूँ, सामना नहीं कर सकता और दिक होकर मैं अपने विचार बदल रहा हूँ। उस दशा में आप मानना कि मैं मूर्च्छित अवस्था में ऐसी बात बक रहा हूँ।"

—हिं० न० जी०, १५।१।'२५, पृष्ठ १८०। काठियावाड़ राजनीतिक परिषद के अध्यक्षपद से दिये प्रारम्भिक मौखिक भाषण से]

हमारे प्रकाशन

१. गांधीवाद की रूप-रेखा

[लेखक—श्रीरामनाथ 'सुमन]

गाधी उस सूर्य के समान है जिससे सब प्रकाश लेते हैं, उस वायु के समान है जिसमें सब साँस लेते हैं। जवाहरलालजी ने ठीक ही कहा है कि वह भारतीय भावना के थर्मामीटर है। इस पुस्तक में विस्तार से उनके सिद्धान्तों पर विचार किया गया है गांधीवाद समाजवाद की विस्तृत तुलना इसमें है। इसी पुस्तक पर हिंदी-साहित्य सम्मेलन से लेखक को पाँच सौ रुपयों का मुरारका-पारितोषिक मिला है। प्रसिद्ध विचारकों एवं पत्रों द्वारा प्रशंसित। मूल्य . १)

२. योग के चमत्कार

[लेखक—श्रीरामनाथ 'सुमन']

योग की सम्भावनाओं के विषय में मनोरञ्जक पुस्तक। मूल्य . १)

नोट—नं० १ और २ समाप्त हैं और नया संस्करण होनेपर ही मिलेंगी।

३. घर की रानी

[लेखक—श्रीरामनाथ 'सुमन']

कुमारियों और विवाहिता स्त्रियों के जीवन को सफल और सुखी बनाने के व्यावहारिक उपाय बतानेवाली अत्यन्त मनोरञ्जक पुस्तक। पत्रों के रूप में छपी हुई है। प्रत्येक कन्या और स्त्री के हाथ में देने योग्य। मूल्य एक रुपया। महिला विद्यापीठ की विदुषी परीक्षा में स्वीकृत।

४. आनन्द-निकेतन

[लेखक—श्रीरामनाथ 'सुमन']

हाहाकार-भरी गृहस्थियों को स्वर्ग बनानेवाली पुस्तक। प्रत्येक

युवक युवती बहन-भाई के पढ़ने योग्य। जीवन को बल और प्रकाश देनेवाली, फिर भी उपन्यास-सी-मनोरञ्जक। लगभग साढ़े तीन सौ पृष्ठ, सुन्दर कवर। मूल्य दो रुपये।

५. भक्ति-तरङ्गिणी

[संग्रहकर्त्ता—श्रीकेशवदेव शर्मा]

इसमें प्राचीन काल से लेकर आज तक के १०० कवियों की भक्ति-भावपूर्ण श्रेष्ठ कविताओं का संग्रह किया गया है। इसकी विशेषता यह है कि इसमें एक भी कविता ऐसी नहीं है जिसमें सुरुचि का अभाव या अश्लीलता या गन्दी शृंगारिकता की गन्ध हो। मूल्य एक रुपया।

६. क्रान्तिवादी की आत्मकथा

रूस के प्रसिद्ध उपन्यासकार [illegible] के एक प्रसिद्ध उपन्यास का हिन्दी के प्रतिष्ठित उपन्यासकार और कहानी-लेखक श्री [illegible] द्वारा किया हुआ अनुवाद। उच्चकोटि का मनोवैज्ञानिक उपन्यास। मूल्य एक रुपया।

७ प्राणविद्या

[[illegible]]

हिन्दी के [illegible] और [illegible] के [illegible], [illegible] और [illegible]। मूल्य [illegible] रुपये।

के द्वारा नारी की स्थिति और दशा का अवलोकन। ३२ पौं
ऐंटिक पेपर, सजिल्द, सुन्दर कवरयुक्त। मूल्य : पौने दो रुपये।

९. हमारे नेता

[लेखक—श्रीरामनाथ 'सुमन']

महात्मा गांधी, सरदार पटेल, सरोजिनी नायडू, राजगोपालाचार्य
राजेन्द्रप्रसाद, मौलाना आज़ाद और जवाहरलाल के जीवन के
मार्मिक अध्ययन एवं शब्द-चित्र। सुन्दर कवर। मूल्य : डेढ़ रुपये

१०. वेदी के फूल

[लेखक—श्रीरामनाथ 'सुमन']

वीरता, त्याग और बलिदान की कथाएँ—जीवनप्रद और काव्यमय
भाषा में। सुन्दर दोरंगा कवर। ऐंटिक पेपर। सुन्दर छपाई
मूल्य · बारह आने।

११. स्त्रियों की समस्याएँ

[लेखक—महात्मा गांधी]

स्त्रियों की विविध समस्याओं पर व्यापक विचार। प्रामाणिक संस्करण
सम्पादक—श्रीरामनाथ 'सुमन' और श्री ज्ञानचन्द जैन एम० ए०
सुन्दर छपाई, दोरंगा कवर। मूल्य : एक रुपया।

१२. गांधीवाणी

[सम्पादक—श्रीरामनाथ 'सुमन']

पुस्तक आप के हाथ में है।